राजस्थानी-गद्य-साहित्य

उद्भव और विकास

डॉ० शिवस्वरूप शर्मा 'अचल'



सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

प्रकाशक :—
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मन्त्री
सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट
बीकानेर (राजस्थान)

❀❀❀

प्रथमावृत्ति सन् १९६१

❀❀❀

मुद्रक —
जैन प्रिंटिंग प्रेस
कोटा (राजस्थान)

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १६४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंह जी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषतः राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारंभ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द संपादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यंत विशाल योजना है, जिसकी संतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकया है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना संभव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर संपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबंध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है। यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य

जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी।

३. आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१. कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता

२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।

३. बरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४. 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अङ्क ३-४ 'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अङ्क एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अङ्क १-२ राजस्थान के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और बृहत् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यतः संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की बृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमें से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैकड़ों लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियां और लगभग ७०० लोक कथायें संगृहीत को गई हैं। राजस्थानी कहानियों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१०. बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक बृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचंद भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान् विद्वान् महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज, और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबध, लेख, कविताएँ और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार - विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषण-मालाओं आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।

१६. बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः

राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, डूंडलोद, थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-काल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह संभव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं; परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चय ही बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यंत विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारत वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त कराना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्त्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना संभव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मंत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन हेतु इस संस्था को इस

वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१. राजस्थानी व्याकरण—		लेखक—श्री नरोत्तमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)		लेखक—डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—		सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	,,	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,,	,, ,, ,,
६. दलपत विलास	,,	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,,	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	,,	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	,,	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	,,	श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	,,	श्री अगरचन्द नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	,,	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	,,	श्री अगरचन्द नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	,,	श्री अगरचन्द नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	,,	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	,,	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि—	,,	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	,,	श्री अगरचन्द नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	,,	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,,	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहा—	,,	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थानी व्रत कथाएं—	,,	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,,	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	,,	श्री रावत सारस्वत

२५. भड्डली— सम्पादक—श्री अगरचन्द नाहटा
म० विनयसागर

२६. जिनहर्ष ग्रंथावली ,, श्री अगरचन्द नाहटा

२७. राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथों का विवरण ,, ,, ,,

२८. दम्पति विनोद ,, ,, ,,

२९. हीयाली-राजस्थान का बुद्धि-वर्धक साहित्य ,, ,, ,,

३०. समयसुन्दर रासत्रय ,, श्री भंवरलाल नाहटा

३१. दुरसा आढा ग्रंथावली ,, श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो पा रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षामंत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यंत आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थ क्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान-भंडार बीकानेर, मोतीचंद खजाञ्ची ग्रंथालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भंडार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बडोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थों का संपादन संभव हो सका है। अतएव हम इन सब के प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः। हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकें और मां भारती के चरण-कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकें।

निवेदक

लालचन्द कोठारी

प्रधान-मंत्री

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

बीकानेर,

मार्गशीर्ष शुक्ला १५

सं० २०१७

दिसम्बर ३,१९६०

* विषय सूची *

प्रथम प्रकरण

विषय प्रवेश

शब्दों का अभाव....प्राचीन काल के अंत में गुजराती तथा राजस्थानी का पृथक्करण....अर्वाचीन काल में गुजराती के प्रभाव से मुक्त....

मुगल साम्राज्य के प्रभुत्व के कारण फारसी को प्रोत्साहन....राजस्थानी पर उसका प्रभाव....उसका सर्वतोमुखी विकास.... पृ० ७

ख-राजस्थानी साहित्य—

वीर प्रसविनी राजस्थानी भूमि का साहित्य में प्रतिबिम्ब ...गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में राजस्थानी साहित्य का प्रसार....गद्य साहित्य अपनी प्राचीनता तथा पद्य साहित्य अपनी सजीवता के लिये प्रसिद्ध ...भारत और यूरोप के सुप्रसिद्ध विद्वानों द्वारा इसकी प्रशंसा... पृ० १०

द्वितीय प्रकरण

राजस्थानी गद्य साहित्य ..उसके प्रमुख विभाग और रूप ..राजस्थानी गद्य साहित्य बहुत प्राचीन ...चौदहवीं शताब्दी से उसके प्रयास प्रारम्भ .. प्राचीनता की दृष्टि से उसका महत्व ..वर्गीकरण सम्पूर्ण राजस्थानी-गद्य-साहित्य का पांच प्रमुख भागों में विभाजन .

१—धार्मिक गद्य साहित्य

क—जैन धार्मिक गद्य साहित्य १-प्राय टीकात्मक . टीकाओं के दो रूप....बालावबोध....प्राकृत तथा संस्कृत ग्रन्थों की सरल भाषा में विस्तृत टीका ...टब्बा ...संस्कृत या प्राकृत शब्द का उसके ऊपर नीचे या पार्श्व में अर्थ मात्र लिखना. .इन दोनों रूपों में बालावबोध शैली का प्राधान्य....इन टीकाओं के आधार जैन धार्मिक ग्रंथ.. .आचारांग आदि आगम ग्रंथ...., षडावश्यक आदि उपांग ग्रंथ.. , भक्तामर आदि स्तोत्र ग्रंथ...., कल्पसूत्र आदि चरित्र ग्रंथ....दार्शनिक ग्रंथ...., प्रकीर्णक रचनायें....

२-स्वतंत्र-व्याख्यान....विधि विधान....कर्मकाण्ड ...धार्मिक कथायें... दार्शनिक कृतियां ...शास्त्रीय विचार....खडन....मंडन घटना का विवरण या व्यक्ति या जाति के इतिहास का विवरण जैसे "नागौर रै मामलै री बात' या "राव जी अमरसिंह जी री बात" याददाश्त के रूप में लिखी गई छोटी छोटी टिप्पणियों का संग्रह पृ० १०-२०

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

(क) जैन ऐतिहासिक गद्य—पट्टावली—उत्पत्ति ग्रंथ — वंशावली — दफ्तर बही — ऐतिहासिक टिप्पण—

(ख) जैनेतर — ऐतिहासिक गद्य - साहित्य - ख्यात बात — पीढ़ियावली हाल, अहवाल, हगीगत, याददाश्त — विगत — पट्टा परवाना इलकाबनामा — जन्म पत्रियां — तहकीकात। पृ० २०-२३

३—कलात्मक-गद्य-साहित्य

क—बात साहित्य "कहानी साहित्य"....कथा और बात का संबंध, बात साहित्य प्रभूत मात्रा में प्राप्त।

ख—वचनिका....एक शैली....अन्त्यानुप्रास या तुक प्रधान गद्य। इसमें गद्य के साथ साथ पद्य का भी प्रयोग।

ग—दवावैत वचनिका की भांति ही एक शैली....वचनिका का ही एक रूपान्तर।

घ—वर्णक-गद्य... मुत्कलानुप्रास, बात-वणाव आदि विविध प्रकार के वर्णनों का संग्रह....ये प्रसंगानुसार किसी भी कहानी में जोड़ दिये जाते हैं। २४-२५

४—वैज्ञानिक और दार्शनिक-गद्य-साहित्य

आयुर्वेद, ज्योतिष, शकुनशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र, छन्द शास्त्र, नीति शास्त्र, तंत्र मंत्र, धर्म शास्त्र, योग शास्त्र, वेदान्त आदि अनेक विषयों के अनुवाद ..

क-पत्रात्मक... तीन प्रकार के पत्र....१-जैन आचार्यों से सम्बन्धित.... इनके भी दो प्रकार अ-आदेश पत्र....चतुर्मास करने के लिये आचार्यों द्वारा शिष्यों या श्रावकों को दिये गये आदेश सम्बन्धी....आ-विनती या विज्ञप्ति पत्र ...श्रावकों के द्वारा आचार्यों से विहार के लिये की हुई प्रार्थना.... २—राजकीय ...राजाओं द्वारा पारस्परिक या अंगरेज सरकार से पत्र व्यवहार सम्बन्धी....३-व्यक्तिगत....जन साधारण द्वारा किये गये पारस्परिक पत्र

व्यवहार—ख-अभिलेखीय.... प्रशस्ति लेख, शिला लेख, ताम्रपत्र आदि पृ० २५-२६

काल विभाजन....१—प्राचीन काल....दो उपविभाग....क-प्रयास काल

सं० १३०० से सं० १४०० तक और ख-विकास काल सं० १४०० से सं० १६०० तक....

२-मध्यकाल....ग-विकसित काल सं० १६०० से १९०० तक घ-ह्रास काल सं० १९०० से १९५० तक ङ-नवजागरण काल स० १९५० से उपरान्त।

प्रयास काल में गद्य शैली के कई प्रयोग....सभी स्फुट टिप्पणियों के रूप में प्राप्त....विकास काल में गद्य का रूप स्थिर हुआ....शैली में परिवर्तन ....भाषा में प्रवाह....विकसित काल राजस्थानी का स्वर्णकाल....कलात्मक, ऐतिहासिक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि कई क्षेत्रों में गद्य के प्रयोग....वर्णक ग्रंथों की रचना....वचनिका, दवावैत आदि नवीन शैलियों का प्रादुर्भाव....

तृतीय प्रकरण

राजस्थानी गद्य का विकास

....वैदिक संस्कृत काल में गद्य का महत्वपूर्ण स्थान....लौकिक संस्कृत काल में उसका ह्रास... पाली और प्राकृत कालों में पुनः उत्थान . अपभ्रंश काल में फिर अवसान ...

देशी भाषा के उदाहरण तेरहवीं शताब्दी से पहले के नहीं मिलते ... उक्ति व्यक्ति प्रकारण तेरहवीं शताब्दी देशी गद्य का सबसे प्राचीन उदाहरण... गोरखनाथ के ब्रजभाषा गद्य की प्रमाणिकता संदिग्ध ...मैथिली गद्य का प्रथम प्रयोग ज्योतिरीश्वर ठाकुर की "वृत्त रत्नाकर" र०का० चौदहवीं शताब्दी "वैजनाथ कलानिधि" र० का० पन्द्रहवीं शताब्दी का अन्तिमांश ....मराठी गद्य की प्रथम रचना ...

राजस्थानी गद्य साहित्य के आरम्भ और उत्थान में जैन विद्वानों का हाथ....अपने धार्मिक विचारों को गद्य के माध्यम से जन साधारण तक पहुँचाने का प्रयास....

विकास की दृष्टि से इस काल के उपविभाग....

१—प्रयास काल सं० १३०० से १४०० तक
२—विकास काल सं० १४०० से १६०० तक

१–प्रयास काल ..

इस काल की भाषा को "प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी" नाम दिया गया है। इस काल में गुजराती और राजस्थानी का एक ही स्वरूप रहा। इस

काल की प्रमुख रचनायें....

१–आराधना र० सं० १३३० लेखक अज्ञात....

२–बालशिक्षा र० सं० १३३६ लेखक संग्रामसिंह....

३–अतिचार र० स० १३४०....

४–अतिचार र० स० १३६६....

५–नवकार व्याख्यान र० सं० १३५८

६–सर्व तीर्थ नमस्कार स्तवन....र० सं० १३५६

७–तत्व - विचार - प्रकरण ...रचनाकाल अनिश्चित पर अनुमानतः चौदहवीं शताब्दी....

८–धनपाल कथा....रचनाकाल अनुमानतः चौदहवीं शताब्दी....गद्य का उदाहरण....

उपसंहार....गद्य प्रवृत्ति एवं भाषा स्वरूप की दृष्टि से चौदवीं शताब्दी का महत्व... गद्य और पद्य की भाषाओं में अंतर....पद्य की भाषा अधिक प्रौढ़ एवं परिमार्जित....गद्य का विकासोन्मुख होना....लेखकों के सम्मुख कोई निश्चित आधार न होने के कारण उनको स्वयं मार्ग बनाना पड़ा.... १३-४०

२–विकास काल...सं० १४०० से सं० १६०० तक

पूर्व-पीठिका...

गद्य में प्रौढ़ता आई....शैली बदली....विषयों के क्षेत्र भी विस्तृत हुए ....जैनों के धार्मिक गद्य की प्रचुरता....बालावबोध शैली का प्रारम्भ.... चारणी गद्य में वचनिका....शैली में प्रौढ़ता....कलात्मक गद्य के भी अच्छे उदाहरण मिले....पृथ्वीचन्द्र चरित्र एक बहुत महत्वपूर्ण रचना....

१–धार्मिक गद्य...पृ० ४०-५०

१–श्री तरुण प्रभ सूरि (सं० १३६८....) और उनकी रचनायें—

२–श्री सोम सुन्दर सूरि (सं० १४३० से सं० १४९९) और उनकी रचनायें–

३–श्री मेरुसुन्दर और उनकी रचनायें—

४–पार्श्व चन्द्र सूरि और उनकी रचनायें—

स्फुट गद्य लेखक

१–जय शेखर सूरि "आंचलगच्छ सं० १४०० से १४६२ श्री महेन्द्र-प्रभ सूरि के शिष्य....गद्य पद्य के कुल मिलाकर १८ ग्रंथों के रचयिता....

गद्य कृतियों में "श्रावक बृहद्तिचार" उल्लेखनीय.... २–साधुरत्न सूरि "तपागच्छ....श्री देवसुन्दर के शिष्य....गद्य रचना...."नवतत्व विवरण बालावबोध" सं० १४५६ के लगभग, ३ शुभ वर्धन. ..गद्य रचना....भक्तामर बालावबोध" टीका का लिपिकाल सं० १६२६, ४–हेमहंस गणि....तपागच्छ सोमसुन्दर के शिष्य....गद्य रचना "षडावश्यक बालावबोध" सं० १५०१, ५–शिवसुन्दर वाचक समयध्वज खेमराज के शिष्य....गद्य रचना "गौतम पृच्छा बालावबोध" खीमासर में सं० १५६६, ६–जिनसूर तपागच्छ....गद्य रचना "गौतम पृच्छा बालावबोध", ७–संवेगदेवगणि तपागच्छ....श्री सोमसुन्दर सूरि के शिष्य....गद्य रचनायें....अ–पिण्ड विशुद्धि बालावबोध सं० १५१३, आ–आवश्यक पीठिका बालावबोध सं० १५१४, इ–चउसरण पयन्ना बालावबोध तथा ई–चउसरण टबूबा, ८–श्री राजवल्लभ धर्मघोष गच्छ, गद्य रचना "षडावश्यक बालावबोध, ९–लक्ष्मीरत्न सूरि...."साधु-प्रतिक्रमण बालावबोध" सं० १६०६....

अज्ञात लेखक रचनायें

१–श्रावक व्रतादि अतिचार सं० १४६६, २–कालिकाचार्य कथा सं० १४८५....उदाहरण....

२–ऐतिहासिक गद्य पृ० ५१-५२

श्री जिन वर्धन तपागच्छ कृत "जैन गुर्वावली" र० का० सं० १४८२ ....तपागच्छ आचार्यों की नामावली तथा उनका परिचय ...अन्तिम ५० वें पट्टधर श्री सोमसुन्दर सूरि....अन्त्यानुप्रास युक्त गद्य....भाषा में प्रवाह.... क्रिया पदों की अपेक्षा समास प्रधान पदावली का अधिक प्रयोग.... उदाहरण....

३–कलात्मक गद्य पृ० ५२-५६

इस काल की दो प्रमुख रचनायें....१–पृथ्वीचन्द्र चरित्र या वाग्विलास लेखन समय सं० १४७८ लेखक श्री माणिक्य सुंदर सूरि आंचलगच्छ.... जीवन वृत्त अज्ञात.... २–अचलदास खीची री वचनिका–उदाहरण....

जैन वचनिका.... १–जिन समुद्र सूरि की वचनिका....२–शान्ति सागर सूरि की वचनिका और उनका महत्व....गद्य के उदाहरण....

४–व्याकरण गद्य पृ० ५६-६१

व्याकरण के ग्रंथों में भी गद्य का प्रयोग....तीन व्याकरण ग्रंथ प्राप्त ....१–कुलमंडन कृत "मुग्धावबोध" १४५०, २–सोमप्रभ सूरि कृत

"औक्तिक", ३–तिलक कृत "उक्ति संग्रह"....राजस्थानी के माध्यम से संस्कृत व्याकरण को समझाने के उद्देश्य से इनकी रचना....इस काल के भाषा स्वरूप को समझने के लिये इनका अध्ययन आवश्यक....इन सब में मुग्धावबोध अधिक महत्वपूर्ण....गद्य के उदाहरण....

५–वैज्ञानिक गद्य पृ० ६१-६३

केवल दो गणित रचनायें प्राप्त.... १–गणित सार, २–गणित पंचविंशतिका....प्रथम श्री राजकीर्ति मिश्र द्वारा अनूदित मध्यकाल के नापतौल के उपकरण एवं सिक्कों का उल्लेख। द्वितीय श्री शंभूदास मंत्री द्वारा रचित सं० १४७५....गद्य के उदाहरण....

चतुर्थ प्रकरण

पूर्व पीठिका....ऐतिहासिक भूमि....मुसलमान राज्य की स्थापना....हिन्दु मुस्लिम संघर्ष शिथिल....

१-ऐतिहासिक गद्य—पिछले काल की अपेक्षा अनेक नए रूपों में प्राप्त दो प्रमुख उपविभाग....

क-जैन ऐतिहासिक गद्य पृ० ६७-७३

पांच प्रकारों में उसका वर्गीकरण.... अ–वंशावली....उसके प्रमुख विषय....गद्य के उदाहरण.... आ-पट्टावली....प्रमुख विषय....गद्य का उदाहरण....प्रमुख प्राप्त पट्टावलियां १–कडुवामत पट्टावली, २–नागौरी लुंकागच्छीय पट्टावली ३–बेगड़गच्छ पट्टावली, ४–पिपलक शाखा पट्टावली, ५–तपागच्छ पट्टावली....इन पट्टावलियों का महत्व ...गद्य के उदाहरण.... इ–दफतर बही ...दैनिक व्यापारों की डायरी....शैली में संग्रह ....गद्य का उदाहरण.... ई-ऐतिहासिक टिप्पण....उनके विषय....गद्य का उदाहरण.... उ–उत्पत्ति ग्रंथ....प्रमुख विषय प्राप्त ग्रंथ.... १–अञ्चलमतोत्पत्ति, २–रिषमतोत्पत्ति ...गद्य का उदाहरण....

ख-जैनेतर ऐतिहासिक गद्य पृ० ७३-१०४

राजाश्रय या स्वतंत्र रूप से लिखा गया ऐतिहासिक विवरण ख्यात के नाम से प्रसिद्ध ...

ख्यात साहित्य....ख्यातों का प्रारम्भ....अकबर से पूर्व उनका अभाव ....अकबर की इतिहास प्रियता का प्रभाव...."आइने अकबरी" के उपरान्त

इस प्रकार की रचनाओं का प्रारम्भ। राजस्थान के देशी राज्यों में भी उसका अनुकरण....ख्यातों का प्रारम्भिक रूप....वंशावली। धीरे धीरे विस्तृत विवरण....विकसित रूप ख्यात....ख्यातों के प्रकार.... १–वैयक्तिक, २–राजकीय १–वैयक्तिक ख्यातें....वैयक्तिक ख्यातों में व्यक्ति की इतिहास प्रियता के उदाहरण प्रमुख वैयक्तिक ख्यातें.... १–नैणसी की ख्यात....संकलन काल सं० १७०७ से १७२२....नैणसी प्रौढ़ राजस्थानी गद्य का लेखक और परिचय....साहित्यिक महत्व....राजस्थानी के ऐतिहासिक गद्य का सबसे अच्छा उदाहरण विषय की दृष्टि से साहित्यिकता का अभाव....गद्य के उदाहरण....

२–दयालदास की ख्यात....दयालदास सं० १८५५ से १९४८....परिचय और ग्रंथ....बीकानेर रा राठौड़ां री ख्यात....आर्याख्यान कल्पद्रुम....देश दर्पण....गद्य शैली....गद्य के उदाहरण....

३–बांकीदास की ख्यात....बांकीदास सं० १८३८ से १८९०....परिचय ....ख्यात का प्रमुख विषय....गद्य के उदाहरण....

२–राजकीय ख्यातें

ख्यातों के लेखक....मुत्सद्दी....पुरानी ख्यातों में कम उपलब्ध..प्रमुख प्राप्त ख्यातें...."राठौड़ां री वंसावली सीहै जी सूं कल्याणमल जी ताईं".... बीकानेर रै राठौड़ा री वात तथा वंसावली....जोधपुर रा राठौड़ां री ख्यात .. राठोड़ां री वंसावली....राव अमर सिंघ जी री वात....राव रायसिंघ जी री वात....महाराजा अजीतसिंघ जी री ख्यात....उदयपुर री ख्यात....मारवाड़ री ख्यात....तीन भागों में विभक्त....किशनगढ़ री ख्यात....बीकानेर री ख्यात गद्य के उदाहरण....

स्फुट ख्यातें–अनेक गुटकों में प्राप्त....जीवनी साहित्य का अभाव.... साधारण तथा एक मात्र महत्वपूर्ण उदाहरण....ऐतिहासिक जीवनी....दलपत विलास....बीकानेर के राजकुमार दलपतसिंह की जीवनी....अपूर्ण....ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण....तत्कालीन इतिहास पर यत्र तत्र नया प्रकाश।

अन्य प्रकार.... १–ऐतिहासिक वातें....रावजी अमरसिंह जी री वात.... नागौर रै मामले री वात.... २–पीढ़ियावली "वंशावली"....राठौड़ां री वंसावली....बीकानेर रा राठौड़ा राजावां री वंसावली। खीचीवाड़ा रा राठौड़ां री पीढ़ियां सिसोदिया री वंसावली तथा पीढ़ियां....ओसवालां री पीढ़ियां.... ३–हाल....अहवाल....हगीगत....याददास्त....आदि.... ४–विगत....चारण रा सांसराणा री विगत....महाराजा तखतसिंघ जी रै कंवरा री विगत....जोधपुर

रा देवस्थानां री विगत.. जोधपुर बागावत री विगत....जोधपुर रा निवाणं री विगत.... ५-पट्टा परवाना....परवाना रौ तथा उमरावां री पटौ....महाराजा अनूपसिंघ जी रौ आनन्द राम रै नाम परवानो आदि ६-इलकाबनामा ....कई संग्रह.... ७-जन्म पत्रियां....राजां री तथा पातसाहां री जन्मपत्रियां ८-तहकीकात....जयपुर वारदात री तहकीकात....

२-धार्मिक-गद्य पृ० १०४-१२१

उसके प्रमुख विभाग.... अ-टीकात्मक.... आ-व्याख्यान.... इ-खंडन मंडनात्मक.... ई-प्रश्नोत्तर ग्रंथ.. . उ-विधि विधान... ऊ-तत्व ज्ञान.... ए-शास्त्रीय विचार.... ऐ-कथा साहित्य

३-पौराणिक गद्य पृ० १२१-१२३

अब तक इसका पूर्ण अभाव ...प्रमुख विषय.... १-पुराण, २-धर्मशास्त्र, ३-महात्म्य, ४-स्तोत्र ग्रंथ, ५-वेदान्त, ६-कथायें....

४-कलात्मक गद्य पृ० १२४-१६७

पिछले काल की अपेक्षा अधिक विस्तृत क्षेत्र... प्रमुख स्तम्भ १-वात साहित्य. ..कहानी का बीज मानव की ज्ञान भूमियां....भारत की प्रान्तीय लोक कथायें ..राजस्थान की वातें, उन पर संस्कृति का प्रभाव, चार संस्कृतियों का प्रभाव १-ब्राह्मण २-राजपूत, ३-जैन, ४-मुस्लिम....उनका वर्गीकरण.... लोक कथायें- १-मौलिक, २-संग्रहीत....उनको लिपि बद्ध करने के प्रयास २-पारम्परिक....नवरचित एवं अनूदित कथायें....लिपिबद्ध "संग्रहीत" कथाओं के दो विभाग.... १-अर्द्धैतिहासिक २-अनैतिहासिक या काल्पनिक।

२-वचनिका—अ-चारण वचनिका—राठौड़ रतनसिंघ जी महेसदासोत री वचनिका....लेखन सं० १७१७....लेखक जगमाल "जग्गो"... लेखक परिचय....गद्य का उदाहरण.... ३-दवावैत— १-नरसिंह दास गौड़ की दवावैत अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में लिखित.. उदाहरण १-जैनाचार्य जिन लाभ सूरि जी की दवावैत....उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रचित.... उदाहरण २-जैनाचार्य जिन सुखसूरि जी की दवावैत....सं० १७७२ उपाध्याय राम विजय रचित....गद्य के उदाहरण... ४-दुरगादत्त की दवावैत....गद्य का उदाहरण.... ४-वर्णक ग्रंथ—एक प्रकार के वर्णन कोष....प्रमुख ग्रंथ—१-राजान राउतरो वात वणाव २-खीची गंगेव नींबावत रो दो पहरो. ३-वाग्विलास या मुत्कलानुप्रास....

४–कुतूहलम्....वर्ण्य विषय....गद्य के उदाहरण ..

५–सभा शृंगार....सं० १७६२ महिमा विजय लिखित....वर्ण्य विषय....

५–वैज्ञानिक गद्य पृ० १६७-१७०

दो रूपों में प्राप्त ...१-अनुवादात्मक तथा २–टीकात्मक....स्वतंत्र गद्य के प्रयोग बहुत कम....प्राप्त वैज्ञानिक गद्य के प्रकार १-योग शास्त्र–गोरख शत टीका, हठयोग की क्रियाओं पर प्रकाश....हठयोग प्रदीपिका टीका, सं० १७८७ प्रथम कृति से विषय साम्य... २–वेदान्त–भगवद् गीता की टीकायें ही प्राप्त....गद्य के उदाहरण.... ३–वैद्यक....कुछ प्रसिद्ध प्राप्त प्रतियां....गद्य के उदाहरण ४-ज्योतिष–अनूदित ग्रंथ....अ-राशिफल आदि.... १-साठ संवछरी फल, २-डवक मडली, ३-वर्षा ज्ञान विचार, ४-पंचांग विधि, ५-रत्न माला टीका, ६-लीलावती....आ-शकुन शास्त्र ... १-देवी शकुन, २-शकुनावली ३-पासा केवली शकुन....इ-सामुद्रिक शास्त्र ...१-सामुद्रिक टीका, २-सामुद्रिक शास्त्र ...

४-प्रकीर्णक गद्य–विषय के आधार पर वर्गीकरण....१-नीति सम्बन्धी प्राप्त ग्रंथ....क-चाणक्य नीति टीका, ख-चौरासी बोल, ग-भरथरी सबद, घ-भरथरी उपदेश.... २-अभिलेखीय... शिलालेख पर्याप्त संख्या में प्राप्त ... प्राप्त शिलालेखों में सबसे बड़ा एवं महत्वपूर्ण जैसलमेर में पटवों के यात्रा संघ का शिलालेख....गद्य का उदाहरण ...३-पत्रात्मक ...तीन प्रकार १-नरेशों के पत्र, २-जैन आचार्य या साधुओं के पत्र, ३-जन साधारण के पत्र N. P. ४-यंत्र मंत्र सम्बन्धी....उपसंहार .भाषा की दृष्टि से इस काल का महत्व राजस्थानी गद्य के प्रौढ़तम प्रयोग ...विषय की दृष्टि से सर्वतोमुखी विकास ...शैली में प्रवाह तथा अपनापन....

पांचवां प्रकरण

आधुनिक काल सं० १६५० से अब तक

हिन्दी की उन्नति से राजस्थानी की प्रगति मे गतिरोध तथा नवीन प्रयास ...

नाटक पृ० १७७-१७८

श्री शिवचंद भरतिया के तीन नाटक १-केशर विलास, २-बुढापा की सगाई सं० १६६३, ३-फाटका जंजाल ...श्री गुलाबचन्द नागौरी का "मारवाड़ी मौसर और सगाई जंजाल" भगवती प्रसाद दारूका के पांच नाटक १-वृद्ध विवाह सं० १६६०, २-बाल विवाह सं० १६७५, ३-ढलती फिरती छाया सं० १६७७, ४-कजकलिया बाबू सं० १६७६, ५-सीठणा सुधार

सं० १९८२....श्री सूर्यकरण पारीक का "बोलावण"....सरदार शहर निवासी श्री शोभाराम जम्मड़...."वृद्ध विवाह विदूषण" एकांकी प्रहसन सं० १९८७ सामाजिक....डा० ना० वि० जोशी का "जागीरदार"....श्री सिद्ध का "जयपुर की ज्यौनार"....श्री नाथ मोदी का "गोमाजाट"....श्री मुरलीधर व्यास....दो एकांकी....१-"सरग नरग", २-पूजा....श्री पूरणमल गोयनका तथा श्री श्रीमंत कुमार के कई छोटे छोटे एकांकी.... पृ० १७८-१८०

कहानी-बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शिक्षात्मक एवं मनोरंजनात्मक कहानियां....श्री शिवनारायण तोष्णीवाल की "विद्या परं देवता" सं० १९७३ "स्त्री शिक्षा को आनामों" स० १९७३....श्री नागौरी की "बेटी की बिक्री बहू की खरीदी" सं० १९७३....श्री छोटेराम शुक्ल की "बंधु प्रेम" सं० १९७३ श्री ब्रजलाल बियाणी की "सीता हरण" सं० १९७५ ...नई कहानियां....इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में परिवर्तन ...कलात्मक तत्व की प्रधानता....श्री मुरलीधर व्यास....अनेक कहानियां....श्री चंद्राय और उनकी कहानियां....मुन्नालाल पुरोहित और उनकी कहानियां....श्री नरसिंह पुरोहित अनेक कहानियों के लेखक....श्री श्रीमंत कुमार की कहानियां पृ० १८०-१८३

उपन्यास...श्री शिवचंद भरतिया और उनका प्रयास—

रेखाचित्र और संस्मरण ...प्रयास बहुत ही आधुनिक....श्री मुरलीधर व्यास तथा श्री भवरलाल नाहटा के रेखाचित्र....संस्मरण लेखक श्री कृष्ण तोष्णीवाल....श्री मुरलीधर व्यास....श्री भंवरलाल नाहटा.... पृ० १८३-१८५

निबंध-लेखन में शिथिलता....श्री धनुर्धारी का "बस म्हाने स्वराज होणो" (सं० १९७३), श्री अनन्तलाल कोठारी का "समाजोन्नति का मूल मंत्र सं० १९७६....आधुनिक निबन्धों में श्री अगरचंद नाहटा का "राजस्थानी साहित्य" रा निर्माण में जैन विद्वानां री सेवा प्रकाशित....श्री कु० नारायण सिंह के कल्पना, "बस" "कला" भावात्मक। "राजस्थानी गीत", "डिंगल" भाषा रो निकाल "साहित्यिक शैली के अप्रकाशित निबन्ध ...श्री गोवर्धन शर्मा "जोधपुर के वो कलाकार" साहित ने कला" कविता कांई है। आदि अप्रकाशित निबन्ध.... पृ० १८५-१८६

गद्य काव्य कार-श्री ब्रजलाल बियाणी....श्री चंद्रसिंह, कन्हैयालाल सेठिया, विद्याधर शास्त्री आदि.... पृ० १८६-१८८

भाषण-१-श्री रामसिंह ठाकुर.... २-श्री अगरचंद नाहटा आदि के भाषण.... पृ० १८८-१९१

उप संहार



आमुख

राजस्थानी साहित्य के अध्ययन की ओर मेरा अधिक झुकाव रहा है। एम० ए० की परीक्षा के उपरान्त उसी को अपनी शोध का विषय बनाने की बलवती इच्छा हुई। मैंने देखा राजस्थानी साहित्य के अध्ययन की ओर बहुत कम लोगों का ध्यान गया है।

सबसे पहले सन् १८१६ ई० मे सर्व श्री कैरी, मार्शमैन तथा वार्ड नामक विद्वानों ने भारतीय-भाषाओं से सम्बन्धित एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें ३३ भारतीय भाषाओं और बोलियों के अन्तर्गत राजस्थानी की ६ बोलियों (मारवाड़ी, उदयपुरी, जयपुरी, हाड़ौती और मालवी) के उदाहरण दिये गये थे। इसके ३७ वर्ष उपरान्त सन् १८५३ में पैरी ने भारतीय भाषाओं पर लिखे गये एक निबन्ध मे मारवाड़ी को हिन्दी की एक विभाषा स्वीकार किया। सन् १८७२–७५–७६ मे प्रकाशित बीम्स के "आधुनिक भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण" में अन्य भाषाओं के व्याकरण के साथ साथ राजस्थानी का व्याकरण भी दिया गया था। सन् १८७७ में बम्बई विश्वविद्यालय मे डॉ० रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर ने "विल्सन भाषा वैज्ञानिक भाषण' में राजस्थानी की मेवाड़ी और मारवाड़ी की कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया। सन् १८७८ में जर्मन पादरी डा० कैलाग ने अपने "हिन्दी भाषा का व्याकरण' में राजस्थानी के व्याकरण पर भी प्रकाश डाला। सन् १८८० मे डा० हार्नले का "गौड़ीय भाषाओं का व्याकरण' छपा। इसमे तुलना के लिये राजस्थानी बोलियों की व्याकरण सम्बन्धी विशेषताओं का उल्लेख मिलता है।

राजस्थानी का वैज्ञानिक अध्ययन सर्वप्रथम डॉ० सर ग्रियर्सन के

"लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इन्डिया—खण्ड ६ भाग २ में मिलता है। इसका प्रकाशन सन् १९०८ में हुआ। इसी में सबसे पहले राजस्थानी साहित्य के महत्व को स्वीकार किया गया। इनके समर्थन पर तत्कालीन वायसराय लार्ड कर्जन ने राजस्थानी साहित्य के शोध एवं प्रकाशन के लिये बंगाल ऐशियाटिक सोसाइटी को कुछ रुपयों की सहायता प्रदान की जिसके फलस्वरूप सन् १९१३ में श्री हरप्रसाद शास्त्री ने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की।

डॉ० ग्रियर्सन के उपरान्त डॉ० टैसीटोरी ने राजस्थानी साहित्य को प्रकाश में लाने का उल्लेखनीय कार्य किया। सन् १९१४ में भारत सरकार ने रायल ऐशियाटिक सोसाइटी के अधीन राजस्थानी साहित्य की शोध करने के लिये इनको इटली से बुलाया। ६ वर्ष के अनवरत परिश्रम के उपरान्त ३० वर्ष की आयु में सन् १९२० में इनकी मृत्यु हो गई। इन्होंने सहस्त्रों राजस्थानी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज की, ऐतिहासिक सामग्री को एकत्रित किया तथा राजस्थानी के तीन काव्य-ग्रन्थों का सम्पादन किया।

अब राजस्थानी के अध्ययन की ओर विद्वानों का ध्यान जाने लगा। डॉ० टर्नर, डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी, कविराज मुरारीदान, पं० रामकरण आसोपा, ठा० भूरसिंह, श्री रामनारायण दूगड़, मुंसिफ देवीप्रसाद, पुरोहित *हरनारायण, पं० सूर्यकरण पारीक, श्री जगदीशसिंह गहलौत, डॉ० दशरथ शर्मा, मोतीलाल मेनारिया, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री भँवरलाल नाहटा, गणपति स्वामी, श्री नरोत्तमदास स्वामी, कन्हैयालाल* सहल प्रभृति विद्वानों ने राजस्थानी साहित्य को प्रकाश में लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

राजस्थानी का गद्य-क्षेत्र अब तक प्रायः अप्रकाशित था। इसी विषय को अपनी शोध के लिये चुनने का निश्चय किया। पू० डा० फतहसिंह जी ने सुझाव दिया कि श्री नरोत्तमम दास स्वामी इस विषय में उपयुक्त पथ-प्रदर्शक हो सकते हैं। उन्होंने एक पत्र पू० स्वामी जी को इस सम्बन्ध में लिखा। फलस्वरूप स्वामी जी ने मुझे अपना शिष्य बना लिया। "काम मनोयोग से करना होगा" उनके ये शब्द आज भी मेरे कानों में गूंजा करते हैं।

बीकानेर पहुंच कर मैंने अपना कार्य प्रारम्भ किया। स्वामी जी ने शीघ्र ही मुझे कार्य क्षेत्र की सीमाओं से अवगत कराया। रूपरेखा बन ही चुकी थी उसी पर कार्य करना था। स्वामी जी ने मेरी सभी कठिनाइयों को

दूर किया। स्वामी जी के प्रथम दर्शन से ही मैं प्रभावित हो गया। उनका व्यक्तित्व मुझे आकर्षक लगा। उन्होंने अपने पुत्र की भाँति ही मुझ पर स्नेह उडेल दिया। जो कुछ भी मुझे कठिनाई होती थी, मैं निसंकोच उसे उनके सामने रखता था वह कठिनाई शीघ्र ही दूर हो जाती थी। रहने आदि की व्यवस्था भी उनकी कृपा का ही परिणाम थी। यदि ये सुविधायें प्राप्त न होती तो सम्भवतः यह काम हो ही नहीं सकता था। स्वामी जी के निर्देशों ने मुझे अध्ययन में अधिक सहायता पहुंचाई। कई निराशा के क्षणों में उन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया। अधिकांश सामग्री मुझे उनके द्वारा ही प्राप्त हुई। उन्होंने मुझे वे सब स्थान बताये जहाँ से सामग्री प्राप्त हो सकती थी। स्वामी जी ने मेरा परिचय श्री अगरचन्द जी नाहटा से करवाया। श्री मुकुल मेरे साथ श्री नाहटा जी के यहाँ गये। उस समय श्री नाहटा जी किसी जैन भंडार में प्राचीन प्रतियों को देख रहे थे। वे अपने कार्य में इतने मग्न थे कि हमारी उपस्थिति का पता उन्हें देर से मिला ऐसा साहित्य का साधक मैंने आज तक नहीं देखा। वेश भूषा से यह जानना कठिन था कि यह एक अध्ययननिष्ठ विद्वान हैं। इसका पता उनके सम्पर्क में आने पर ही चला। श्री नाहटा जी ने मुझे प्राचीन जैन-लिपि सिखाई तथा अपने अभय जैन पुस्तकालय से उपयुक्त सामग्री अध्ययन के लिये दी। अभय जैन पुस्तकालय में राजस्थानी गद्य की अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ हैं उनमें से प्रमुख के अध्ययन का अवसर श्री नाहटा जी ने मुझे प्रदान किया। उन्होंने मेरे साथ परिश्रम करके अन्य अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर किया। श्री नाहटा के द्वारा कुछ जैन विद्वानों से भी परिचय हो गया जिससे मुझे अध्ययन में सहायता मिली। दूसरे जैन भंडारों को भी मैंने श्री नाहटा जी के साथ देखा तथा आवश्यक सामग्री प्राप्त की। अनूप संस्कृत पुस्तकालय का उल्लेख भी अत्यन्त आवश्यक है। जहाँ से भी मुझे अधिक सामग्री मिली। सामग्री को प्राप्त करने के लिये मुझे अधिक नहीं भटकना पड़ा। बीकानेर के इन पुस्तकालयों से मेरा बहुत सा काम बन गया। आवश्यकता के अनुसार सूचीपत्र, पत्र-पत्रिका, रिपोर्ट, अभिनन्दन-ग्रन्थ, साहित्य के इतिहास, भाषा के इतिहास आदि से भी मैंने सहायता ली है। जहाँ से भी सामग्री प्राप्त हो सकी मैंने उसे प्राप्त करने का श्रम अवश्य किया है। प्राप्त सामग्री के उचित उपयोग के लिये मुझे स्वामी श्री नरोत्तम दास तथा श्री अगरचन्द नाहटा से अधिक सहायता मिली है। इनके बहुमूल्य सुझाव तथा निर्देश आदि के लिये मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगा।

प्रस्तुत निबन्ध में सं० १३३० के आराधना नामक टिप्पणी को मैंने राजस्थानी का सर्वप्रथम गद्य का उदाहरण माना है। यह मुनि श्री जिनविजय जी की शोध का परिणाम है। इससे प्राचीन उदाहरण मुझे प्राप्त न हो सका। सं० १३३६ से आज तक राजस्थानी गद्य साहित्य के विकास को दिखलाने का प्रयास यहाँ किया गया है। इस विकास को दिखाने के लिये सम्पूर्ण गद्य साहित्य को कालों में विभाजित कर दिया है— १–प्राचीन राजस्थानी काल—सं० १३०० से १६०० तक—, २–मध्य राजस्थानी काल—सं० १६०० से १९०० तक—, ३—आधुनिक काल—सं० १९०० से अब तक—। प्राचीन राजस्थानी काल के भी दो उपविभाग करना मैंने उचित समझा है— क–प्रयास काल—सं० १३०० से १४०० तक— ख–विकास काल—सं० १४०० से १६०० तक—। मध्यकालीन को विकसित काल कहा जा सकता है। विकसित काल के अन्तिम सोपान में राजस्थानी साहित्य का ह्रास होने लगा था। किन्तु यह समय बहुत थोड़ा है। इस ह्रास काल के उपरान्त आधुनिक काल का नाम नवजागरण काल, मैंने दिया है।

प्रयास कालीन गद्य में जैन विद्वानों का ही हाथ रहा है। इस काल की ८ रचनायें मिलती हैं— १–आराधना—सं० १३३०— २–बाल शिक्षा—सं० १३३६— ३–अतिचार सं० १३४०—, ४–नवकार व्याख्यान—सं० १३५८— ५–सर्वतीर्थ नमस्कार स्तवन—सं० १३५९—, ६–अतिचार—सं० १३६९—, ७–तत्वविचार प्रकरण, ८–धनपाल कथा। ये सभी जैन आचार्यों की रचनायें हैं। अन्तिम दो रचनाओं का समय आनुमानिक है। हस्तप्रतियों तथा श्री अगरचन्द नाहटा के मतानुसार इन दोनों रचनाओं का समय चौदहवीं शताब्दी माना गया है।

विकासकाल विकास की दूसरी सोपान है। इस काल की प्रथम प्रौढ़ रचना आचार्य तरुणप्रभसूरि की षडावश्यक बालावबोध (सं० १४११) है। इसके उपरान्त राजस्थानी गद्य लेखन की प्रवृत्ति बढ़ती चली गई। इस काल में पाँच क्षेत्रों में राजस्थानी गद्य का प्रयोग मिलता है— १–धार्मिक गद्य, २–ऐतिहासिक गद्य, ३–कलात्मक गद्य, ४–व्याकरण गद्य, ५–वैज्ञानिक गद्य। धार्मिक तथा ऐतिहासिक गद्य के क्षेत्र में जैन आचार्यों का ही हाथ रहा। कलात्मक गद्य की सबसे प्रथम रचना "पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास"—सं० १४७८—जैन आचार्य श्री माणिक्यचन्द्र सूरि की है। सं० १४७५ की लिखित शिवदास चारण की "अचलदास खीची री वचनिका" चारणी

कलात्मक गद्य का सर्व प्रथम उदाहरण है। जिन समुद्र सूरि तथा शान्तिसागर सूरि की दो जैन वचनिकायें भी इस काल में मिलती हैं। कुलमण्डन का "मुग्धावबोध औक्तिक" (सं० १४५०) इस काल का महत्वपूर्ण व्याकरण ग्रन्थ है। वैज्ञानिक गद्य के अन्तर्गत गणितसार (सं० १६४६) तथा गणितपंच विंशतिका बालावबोध (सं० १५७५) गणित ग्रन्थ मिलते हैं।

विकसित काल राजस्थानी-गद्य-साहित्य का स्वर्णकाल है। इस काल में राजस्थानी गद्य साहित्य का सर्वतोमुखी विकास हुआ। इस काल में उक्त ५ क्षेत्रों में ही गद्य का विकास हुआ। ऐतिहासिक गद्य के दो प्रकार मिले—क-जैन ऐतिहासिक, ख-जैनेतर ऐतिहासिक। प्रथम प्रकार में वंशावली, पट्टावली, दफ्तर बही, ऐतिहासिक टिप्पण एवं उत्पत्ति ग्रन्थ मिलते हैं। दूसरे प्रकार में "ख्यात साहित्य" उल्लेखनीय है। इस काल में ख्यातें खूब लिखी गई। ख्यातों के अतिरिक्त ऐतिहासिक बातें, पीढ़ियावली, हाल, विगत, पट्टापरवाना, इलकाबनामा, जन्मपत्रियाँ तथा तहकीकात आदि रूप भी मिलते हैं। इसी प्रकार धार्मिक गद्य के भी दो उपविभाग किये गये हैं—क-जैन धार्मिक, ख-जैनेतर धार्मिक। जैन धार्मिक गद्य के अन्तर्गत टीका, व्याख्यान, खण्डनमण्डन, प्रश्नोत्तर, विधिविधान, तत्वज्ञान, शास्त्रीय विचार तथा कथा साहित्य समाहित हैं। जैनेतर-धार्मिक-साहित्य पौराणिक गद्य, पुराण, धर्मशास्त्र, माहात्म्य, स्तोत्रग्रंथ, वेदान्त तथा कथाओं के अनुवाद एवं टीका रूप में लिखा है। कलात्मक गद्य में 'बात साहित्य' अधिक महत्वपूर्ण है। इन राजस्थानी कहानियों का साहित्यिक महत्व है। ये कहानियाँ अनेक प्रकार की हैं। इनके अतिरिक्त वचनिका, दवावैत तथा वर्णक ग्रन्थ कलात्मक गद्य के अच्छे उदाहरण हैं। वैज्ञानिक गद्य के क्षेत्र में गणित की रचना नहीं मिलती। योगशास्त्र, वेदान्त, वैद्यक, ज्योतिष आदि नये विषयों के लिये राजस्थानी गद्य का प्रयोग हुआ। कुछ प्रकीर्णक विषयों के लिये भी राजस्थानी गद्य प्रयुक्त किया गया। इस काल में नीति सम्बन्धी, अभिलेखीय, पत्रात्मक तथा यंत्र मन्त्र सम्बन्धी विषयों का प्रतिपादन भी राजस्थानी गद्य में किया गया।

विकसित काल के अन्तिमांश में राजस्थानी गद्य की प्रगति का गतिरोध हुआ। न्यायालयों की भाषा उर्दू तथा शिक्षा की भाषा हिन्दी और अंगरेजी होने के कारण राजस्थानी को कोई प्रोत्साहन नहीं मिला। यह अवस्था अधिक समय तक नहीं रह सकी। इनके नवोत्थान के प्रयास

आरम्भ होने लगे फलस्वरूप अब नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, गद्यकाव्य, रेखाचित्र, संस्मरण, एकांकी नाटक, भाषण आदि सभी क्षेत्रों में राजस्थानी गद्य साहित्य प्रकाशित हो रहा है। इसको प्रकाश में लाने के लिये अनेक पत्र-पत्रिकायें निकलीं जिनमें पंचराज,—सं० १६७७—, मारवाड़ी हितकारक—सं० २००४—, मारवाड़—सं० २०००—, मारवाड़ी सं० २००५ आदि साप्ताहिक पत्र प्रमुख हैं। राजस्थानी के शोध कार्य के लिये "राजस्थान", "राजस्थानी", "चारण", "राजस्थान-भराती", "शोध-पत्रिका", "मरु-भारती" आदि शोध पत्रिकायें भी अधिक सहायक सिद्ध हुई हैं।

राजस्थानी गद्य साहित्य का विकास दिखाने के लिये उसकी भाषा का विकास दिखाना भी आवश्यक था। यह भाषा का विकास दिखाने के लिये परिशिष्ट –क– में राजस्थानी गद्य के उदाहरण भी काल क्रमानुसार दे दिये हैं।

अन्त में, मैं उन सबके प्रति कृतज्ञ हूं जिनकी मुझे सहायता मिली है। यदि यह निबन्ध उपादेय सिद्ध हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा।

कोटा,
शिवरात्रि : १६६१ :

शिवस्वरूप शर्मा

राजस्थानी-भाषा-भाषी-क्षेत्र



प्रथम-प्रकरण

विषय - प्रवेश

क—राजस्थानी—भाषा

१. क्षेत्र और सीमायें

"राजस्थानी" राजस्थान और मालवा की मातृभाषा है। इनके अतिरिक्त यह मध्यप्रदेश, पंजाब तथा सिंध के कुछ भागों में बोली जाती है[1]। राजस्थानी-भाषा-भाषी प्रदेश का क्षेत्रफल लगभग डेढ़ लाख वर्गमील है[2] जो अधिकांश भारतीय भाषाओं के क्षेत्रफल से अधिक है। इस भाषा के बोलने वालों की संख्या डेढ़ करोड़ से ऊपर है[3] यह संख्या गुजराती, सिंधी, उड़िया, असमिया, सिंहाली, ईरानी, तुर्की, बर्मी, यूनानी आदि बहुत सी भाषा-भाषियों की संख्या से बड़ी है।

....

१—ग्रियर्सन :—

L. S. I. Vol. I Part I Page 171—

"It is spoken in Rajputana and Western portion of of Central India and also in the neighbouring tracts of Central Provinces, Sind and the Punjab. To the East it shades of into the Bangali dialect of Western Hindi in Gwaliar State. To its North it merges into–Braj Bhasha in the State of Karauli and Bharatpur and in the British District of Gurgaon. To the West it gradually becomes Panjabi, Lahanda and Sindi through mixed dialects of Indian Desert and directly Gujrati in tho State of Palanpur. On the South it meets marathi but this being an outerlanguage does not merge into it.

२—ग्रियर्सन : एल० एस० आई०, खण्ड १ भाग १ पृ० १७१

३—ग्रियर्सन की अध्यक्षता में किये सर्वे के अनुसार यह संख्या १६२१६८२६० है : एल०, एस०, आई० खण्ड १ भाग १ पृ० १७१

राजस्थानी के इस विशाल क्षेत्र प्रदेश की उत्तरी सीमा पंजाबी से मिली हुई है। पश्चिम में सिंधी इसकी सीमा बनाती है। दक्षिण में मराठी, दक्षिण-पूर्व में हिंदी की बुन्देली शाखा, पूर्व में ब्रज और उत्तर-पूर्व में हिंदी की बांगड़ू तथा खड़ीबोली नामक बोलियां बोली जाती हैं।[1]

२. नामकरण

इस भाषा का "राजस्थानी" नाम आधुनिक है। मरुदेश की भाषा का उल्लेख सर्वप्रथम आठवीं शताब्दी में रचित उद्योतन सूरि के "कुवलयमाला" कथा-ग्रंथ में अठारह देश-भाषाओं के अन्तर्गत मिलता है[2]। सत्तरहवीं शताब्दी में रचित "आईने अकबरी" में अबुल फजल ने भारत की प्रमुख भाषाओं में मारवाड़ी को गिनाया है[3]। उत्तरकालीन ग्रंथों में इस भाषा के लिये मरुभाषा[4], मरुभूम भाषा[5], मारूभाषा[6], मरुदेशीया भाषा[7], मरुवाणी[8], डिंगल आदि कई नामों का प्रयोग पाया जाता है। इनमें "डिंगल" को छोड़कर सभी नाम मरु-प्रदेश की भाषा की ओर संकेत करते हैं। अत "डिंगल" नाम की व्याख्या अपेक्षित है।

डिंगल और उसका अभिप्राय—

"डिंगल" राजस्थानी का एक बहुत प्रचलित पर्याय रहा है। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कविवर बांकीदास की "कुकीव बत्तीसी" में पाया गया है[9]। सं० १६०० के आसपास लिखित

१–ग्रियर्सन : एल० एस० आई० खण्ड ६ भाग २ पृ० १

२–"अप्पा तुप्पा" भणि रे अह पेच्छइ मारुये तत्तो "कुवलयमाला" अपभ्रंश काव्यत्रयी—नं० ३७ पृ० ६१

३–ग्रियर्सन : एल० एस० आई० खण्ड १ भाग १ पृ० १

४–गोपाल लाहौरी : रस विलास : मरुभाषा निर्जल तजी करो व्रजभाषाचोज

५–कवि मंछ : रघुनाथ रूपक : मरुभूम भाषा तणो मारग रचै आछीरीत सूं

६–कवि मोडजी : पाबू प्रकाश : कर आणंद कवेस वहण मरुभाषा व्रट

७–सूर्यमल : वंश भास्कर :

८–सूर्यमल : वंश भास्कर : डिंगल उपनामक कछुंक मरुवानीहु विधेय

९–डिंगलियां मिलयां करे पिंगल तणो प्रकास
संस्कृति ह्वे कपट सब पिंगल पढ़िया पास
—बांकीदास ग्रंथावली भाग २ पृ० ८१

"पिंगल शिरोमणि" में "उडिंगल" शब्द का प्रयोग हुआ है जो सम्भवतः डिंगल का मूल है[1]।

"डिंगल" शब्द की व्युत्पत्ति अभी तक अनिश्चित है। विद्वानों ने इस विषय में अनेक मत प्रस्तुत किये हैं जिनमें डॉ० टेसीटोरी[2] पं. हरप्रसाद शास्त्री[3], श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी[4], श्री गजराज ओझा[5], श्री पुरुषोत्तमदास स्वामी[6], श्री उदयराज उज्ज्वल[7], श्री मोतीलाल मेनारिया[8], श्री जगदीश-सिंह गहलोत[9] आदि के मत उल्लेखनीय हैं, परन्तु ये सभी मत अनुमान एवं कल्पना पर आधारित हैं। वर्तमान में "डिंगल" शब्द का अर्थ संकुचित हो गया है। वह साधारणतया चारणी-शैली की प्राचीन कविता की भाषा के लिये प्रयुक्त होता है।

३. राजस्थानी की शाखायें

राजस्थानी के अन्तर्गत कई बोलियाँ हैं। ये चार समूहों में विभाजित की जाती हैं[10] :—

१—पूर्वी राजस्थानी

पूर्वी राजस्थान में इसका प्रयोग होता है। इसकी दो बड़ी शाखायें ढूंढाड़ी और हाड़ौती हैं। ढूंढाड़ी शेखावाटी को छोड़कर सम्पूर्ण जयपुर,

....

१—अगरचन्द नाहटा : राजस्थान-भारती : भाग १ अंक ४ पृ० २५
२—जे० पी० ए० एस० बी० खण्ड १० पृ० ३७६
३—प्रलिमिनरी रिपोर्ट आन दी आपरेशन इन सर्च आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स आफ बार्डिक क्रोनीकल्स पृ० १५
४—नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १४ पृ० २५५
५—वही भाग १४ पृ० १२२
६—नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १४ पृ० २५५
७—राजस्थान भारती भाग २ अंक २ पृ० ४५
८—राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० २१
९—उमर-काव्य भूमिका पृ० १६८
१०—श्री श्यामसुन्दर दास के अनुसार राजस्थानी की चार बोलियाँ है—
क-मारवाड़ी, ख-जयपुरी, ग-मेवाती, घ-राजस्थानी
भाषा-रहस्य पृष्ठ ६३

किशनगढ़ और टौंक के अधिकांश भाग तथा अजमेर मेरवाड़ा के उत्तर-पूर्वी भाग में बोली जाती है इसमें साहित्य की रचना बहुत ही कम है।

'हाड़ौती' कोटा, बून्दी और झालावाड़ की बोली है। ये तीनों राज्य हाड़ौती प्रदेश के नाम से प्रसिद्ध हैं, झालावाड़ की बोली पर मालवी का प्रभाव है। इसमें साहित्य का अभाव है।

२–दक्षिणी राजस्थानी

यह मालवी के नाम से पुकारी जाती है। यह मालवा प्रदेश की भाषा है। निमाड़ी और खानदेशी भी इसी के अन्तर्गत हैं। यह कर्ण-मधुर एवं कोमल भाषा है किन्तु इसमें साहित्य नहीं है।

३–उत्तरी राजस्थानी

इस पर ब्रजभाषा का प्रभाव है। यह अलवर और भरतपुर के उत्तर-पश्चिम भाग तथा गुड़गाँव में बोली जाती है। बांगड़, मारवाड़ी, ढूंढाड़ी तथा ब्रजभाषा के क्षेत्रों से घिरी हुई है। इसमें भी साहित्य का का अभाव है।

४–पश्चिमी राजस्थानी

इसका नाम "मारवाड़ी है।" इसकी प्रमुख उपबोलियाँ मेवाड़ी, जोधपुरी, थली, शेखावाटी आदि हैं। राजस्थानी की शाखाओं में मारवाड़ी

....

डा० धीरेन्द्र वर्मा ने यह विभाजन इस प्रकार किया है :—

क–मेवाती–अहीरवाती ख–मालवी, ग–जयपुरी–हाड़ौती घ मारवाड़ी मेवाती : हिन्दी भाषा का इतिहास पृ० ५५

डॉ० ग्रियर्सन द्वारा किया गया वर्गीकरण इस प्रकार है :—

अ–पश्चिमी राजस्थानी : मारवाड़ी, ढाटकी, थली, बीकानेरी, बागड़ी, शेखावाटी, मेवाड़ी, खेराड़ी तथा सिरोही की बोलिय।

आ–उत्तर पूर्वी राजस्थानी : अहीरवाटी, मेवाती

इ–दक्षिण पूर्वी राजस्थानी : मालवी, बांगड़ी, सोंटवाड़ी

ई–मध्य पूर्वी राजस्थानी : ढूंढाडी, जयपुरी, काठेड़ा, राजावटी, अजमेरी, किशनगढ़ी, चौरासी, नागरचाल और हाड़ौती

उ–दक्षिणी राजस्थानी : निमाड़ी

ही सबसे महत्वपूर्ण है।[1] साहित्यिक राजस्थानी का यही आधार रही है। यह जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, सिरोही, उदयपुर और अजमेर मेरवाड़ा, पालनपुर, सिंध के कुछ भाग तथा पंजाब के दक्षिणी भाग में बोली जाती है। इसका प्राचीन साहित्य बहुत ही विस्तृत है। पद्य के क्षेत्र में चारण और भाटों के द्वारा इसका बहुत ही प्रभुत्व बढ़ा। गद्य के क्षेत्र में भी इसका अधिक महत्व है। इसका गद्य साहित्य अपनी प्राचीनता तथा प्रौढ़ता के लिए उल्लेखनीय है। वस्तुतः यही राजस्थानी की "स्टेण्डर्ड" टकसाली भाषा है।[2]

इनके अतिरिक्त भीली भी राजस्थानी की शाखा है[3] यद्यपि डॉ० ग्रियर्सन इस पक्ष में नहीं हैं।[4] राजस्थान प्रान्त के बाहर बोली जाने वाली गूजरी तथा बंजारी (लमानी) भी राजस्थानी के रूपान्तर हैं।[5]

४. राजस्थानी का विकास

पश्चिमी भाषाओं का विकास शौरसैनी प्राकृत से हुआ है। शूरसैन मथुरा प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा मध्यकाल में शौरसैनी प्राकृत के नाम से प्रसिद्ध थी। इसी से शौरसैनी अपभ्रंश का विकास हुआ। शौरसैनी अपभ्रंश का प्रदेश शूरसैन प्रदेश सम्पूर्ण राजस्थान तथा गुजरात, सिंध का पूर्वी भाग और पंजाब का दक्षिण-पूर्वी भाग रहा है। राजस्थानी की उत्पत्ति भी इसी शौरसैनी अपभ्रंश से हुई। विकास की दृष्टि से राजस्थानी के दो विभाग किये जा सकते हैं :—

१—प्राचीन राजस्थानी —सं० १३०० से सं० १६०० तक

२—अर्वाचीन-राजस्थानी —सं० १६०० से अब तक

प्राचीन-राजस्थानी-काल—सं० १३०० से सं० १६०० तक—

इस काल के प्रारम्भ में राजस्थानी पर अपभ्रंश का प्रभाव था।

१-ग्रियर्सन : एल० एस० आई० खण्ड ६ भाग २ पृ० २

२-सुनीतिकुमार चटर्जी : राजस्थानी भाषा पृ० ८

३-क-सुनीतिकुमार चटर्जी : राजस्थानी भाषा पृ० ६

ख-पृथ्वीसिंह मेहता "हमारा राजस्थान" पृ० १०

४-ग्रियर्सन एल० एस० आई० खण्ड १ भाग १ पृ० १७८

५-नरोत्तमदास स्वामी "राजस्थानी" खण्ड १ पृ० १०

यह प्रभाव धीरे धीरे कम होता गया। संग्रामसिंह की "बाल शिक्षा" (रचना काल सं० १३३६) तक यह प्रभाव बहुत ही कम हो गया। इसी समय आधुनिक भाषाओं की दो प्रमुख विशेषतायें १–संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग और २–द्वित्व वर्णों वाले शब्दों का अभाव, धीरे-धीरे अधिकाधिक दिखाई पड़ने लगीं।

सोलहवीं शताब्दी के अन्तिमांश में राजस्थानी और गुजराती जो अभी तक एक ही भाषा के रूप में साथ साथ विकसित होती आई थीं धीरे धीरे अलग हो गई।[1] पर राजस्थान में लिखित जैन-गद्य रचनाओं की भाषा पर गुजराती का प्रभाव बहुत दिनों तक रहा। गुजरात के साथ जैन साधुओं का घनिष्ठ सम्पर्क रहने के कारण जैन-शैली अपनी परम्परा के अनुसार चलती रही। शुद्ध राजस्थानी-शैली का प्राचीन रूप शिवदास चारण की "अचलदास खीची की वचनिका" (रचना सं० १४७४) में मिलता है। यह शैली आगामी काल में अपनी पूर्ण प्रौढ़ता को पहुंची।

गद्य के उत्थान और अभ्युदय में जैन-लेखकों ने बहुत योग दिया। प्राचीनकाल का प्राय: सम्पूर्ण राजस्थानी-गद्य जैन-लेखकों की ही रचना है। पंद्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही राजस्थानी-गद्य के प्रौढ़ रूप मिलने लगते हैं। सं० १४११ में लिखित आचार्य तरुणप्रभ सूरि की "बालावबोध" इसका सर्वप्रथम उदाहरण है। पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक पहुंचते पहुंचते राजस्थानी गद्य में कलापूर्ण साहित्यिक रचनायें होने लगीं। "पृथ्वीचन्द्र चरित्र" (सं० १४७८) जैसी रचनायें इसके परिणाम हैं।

अर्वाचीन-राजस्थानी-काल—सं० १६०० से अब तक–

इस काल में राजस्थानी का वास्तविक रूप निखर आया। इस समय तक यह गुजराती के प्रभाव से पूर्णतया मुक्त हो चुकी थी। गद्य के क्षेत्र में बहुत अधिक रचनायें इस काल में हुई। इतिहास तथा कथा-साहित्य बहुत ही महत्वपूर्ण है। ऐतिहासिक साहित्य में ख्यात-साहित्य इस काल की अपूर्व देन है। ये ख्यातें अच्छी संख्या में लिखी गईं। कथा साहित्य भी इस काल में अधिक समृद्ध हुआ। जो कथायें राजस्थानी-जनता की जिह्वा पर विद्यमान थीं उनको लिपिबद्ध किया गया।

१–टैसीटोरी : औरिजिन एण्ड डेवलपमेंट आफ बंगाली लैंग्वेज

इस काल में गद्य, ऐतिहासिक, कलात्मक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि कई रूपों में मिलता है। ऐतिहासिक गद्य-लेखन में चारणों और जैनियों का अधिक हाथ रहा। धार्मिक-गद्य टीका और अनुवादों के रूप में मिलता है। गद्य शैली, विषय तथा विस्तार की दृष्टि से यह राजस्थानी-गद्य का स्वर्णयुग कहा जा सकता है।

फारसी का प्रभाव

राजस्थान में मुगल साम्राज्य के प्रभुत्व के कारण भाषा पर फारसी का प्रभाव भी पड़ने लगा, जिसके फलस्वरूप सैकड़ों फारसी के शब्द विशेषतः तद्भव रूप में राजस्थानी में सम्मिलित हो गये। राज दरबारों से सम्बन्ध रखने वाली रचनाओं में फारसी शब्दों का बहुत कुछ प्रयोग पाया जाता है।

ख—राजस्थानी साहित्य

राजस्थानी-साहित्य जीवन का साहित्य है। राजस्थान की भूमि सदैव ही वीर-प्रसविनी रही है। यहां के निवासियों के चरित्र, उनकी नैतिकता तथा उनका स्वाभिमान सभी आदर्श से ओतप्रोत रहे हैं। जीवन की छाप साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक ही है। अतः राजस्थान का जीवन ही साहित्य-मंदाकिनी का आदि स्रोत बना।

राजस्थानी प्राचीन साहित्य बहुत ही विशाल एवं विस्तृत है। गद्य और पद्य दोनों ही क्षेत्रों में इसने अपना महत्त्व सिद्ध किया है। पद्य-साहित्य अपनी सरसता तथा प्रभावोत्पादकता सिद्ध कर चुका है। प्राचीन गद्य साहित्य जितनी मात्रा में मिलता है उतना किसी भी प्रान्तीय-भाषा में कदाचित ही मिले।

राजस्थानी साहित्य के प्रकार

राजस्थानी-साहित्य को विषय और शैली के भेद से पांच भागों में विभक्त किया जा सकता है :—

१—चारणी साहित्य
२—जैन-साहित्य
३—संत-साहित्य

४—लोक-साहित्य

५—ब्राह्मण-साहित्य

यहां चारणी-साहित्य से अभिप्राय केवल चारण जाति के साहित्य से ही नहीं है। "चारणी" शब्द को विस्तृत अर्थ में ग्रहण किया गया है। चारण, ब्रह्मभट्ट, भाट, ढाढी, ढोली आदि सभी विरुद्-गायक जातियों की कृतियां और उस शैली में लिखी गई अन्यान्य जातियों की कृतियों को भी चारणी-साहित्य में परिगणित किया गया है। यह अधिकांशतः पद्य में है और प्रधानतया वीर-रसात्मक है। स्फुट गीतों, प्रभावोत्पादक दोहों तथा वीर-प्रबंध काव्यों के रूप में उसके उदाहरण मिलते हैं।

राजस्थानी का जैन-साहित्य गद्य और पद्य दोनों रूपों में है और प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। चारणी-साहित्य का अधिकांश भाग विनष्ट हो गया पर यह लिपिबद्ध होने के कारण अभी तक सुरक्षित है। जैनों की रचनायें प्रायः धार्मिक हैं जिनमें कथात्मक अंश अधिक है। राजस्थानी का प्राचीनतम गद्य प्रधानतया जैनों की रचना है। पद्य के क्षेत्र में जैनों ने दोहा-साहित्य का खूब निर्माण किया, जिनमें नीति, शान्त, शृंगार आदि से सम्बन्ध रखने वाले भावपूर्ण दोहे विद्यमान हैं।

राजस्थान में होने वाले कई संत महापुरुषों ने भक्ति और वैराग्य सम्बन्धी साहित्य की अर्चना की है। इन सन्तों ने गद्य की रचना नहीं के बराबर की। पद्य के आधार पर ही अपनी भावनायें साधारण जनता तक पहुँचाई। जनता ने उसका खूब आदर किया।

राजस्थानी का लोक साहित्य बहुत ही अनुपम है। खेद का विषय है कि अभी तक यह प्रकाश में नहीं आ पाया। मुख-परम्परागत होने के कारण इसका रूप परिवर्तित होता रहा है। यह साहित्य बड़ा ही भावपूर्ण तथा जीवन के आदर्शों से परिपूर्ण है।

ब्राह्मण-साहित्य प्रधानतया धार्मिक ग्रंथों के अनुवादों तथा टीकाओं के रूप में मिलता है। भागवत आदि पुराणों तथा अन्य धर्मग्रन्थों के अनुवाद अच्छी संख्या में उपलब्ध हैं।

राजस्थानी का जितना साहित्य प्रकाश में आया उसी ने अनेक भारतीय और यूरोपीय विद्वानों का ध्यान आकर्षित कर लिया है। इन सब

विद्वानों ने इसके महत्व को स्वीकार किया है। महामना मदन मोहन मालवीय[1], विश्व कवि रविन्द्रनाथ टैगोर[2], सर अशुतोष मुकर्जी[3],

....

१—राजस्थानी वीरों की भाषा है। राजस्थानी साहित्य वीरों का साहित्य है। संसार के साहित्य में उसका निराला स्थान है। वर्तमान काल के भारतीय नवयुवकों के लिये उसका अध्ययन होना अनिवार्य होना चाहिये। इस प्राण भरे साहित्य और उसकी भाषा के उद्धार का कार्य होना अत्यन्त आवश्यक है। .. .. ..मैं उस दिन की उत्सुक प्रतीक्षा में हूँ जब हिन्दू-विश्वविद्यालय में राजस्थानी का सर्वाङ्ग पूर्ण विभाग स्थापित हो जायगा जिसमें राजस्थानी साहित्य की खोज तथा अध्ययन का पूर्ण प्रबन्ध होगा। —म० मो० मा०

२—कुछ समय पहले कलकत्ता में मेरे कुछ मित्रों ने रण सम्बन्धी गीत सुनाये। उन गीतों में कितनी सरसता, सहृदयता और भावुकता है। वे लोगों के स्वाभाविक उद्‌गार हैं। मैं तो उनको संत-साहित्य से भी उत्कृष्ट मानता हूँ। क्या ही अच्छा हो अगर वे गीत प्रकाशित किये जायें। वे गीत संसार के किसी भी साहित्य और भाषा का गौरव बढ़ा सकते हैं।

—र० ना० टै०

3. "But Bardic poems are also important as literary documents they have a literary value and taken to-gether from a literature, which better known, is sure to occupy a most distinguished place amongst the literature of the new Indian Varnaculars."

"They (i. e. the Bardic Prose Chronicles) are real and actual chronicles with no other aim in view than a faithful record of fects and their revilation is destory for ever the unjust blame that India never possessed historical genious."

—Dr. Ashutosh Mukerjee.

सुनीतिकुमार चटर्जी[1], डॉ० ग्रियर्सन[2] एल० पी० टैसीटोरी[3] आदि कई विद्वानों ने इसकी प्रशंसा की है।



....

1. "There is, however, a very rich litrature in Rajasthani, mostly in Marwari....... ....Rafasthani literature is nothing but a masage of brave flooded life and stormy death.... ... .

....It was in these songs that foaming streams of infalliable energy and indomitable iron courage had flown and made the Rajput warrior forget all his personal comforts and attechment in fight for what was true, good and beautiful.

....The period covered by the literature extend from a little before the fourteenth centuary A. D. to the present day. During these five and six centuraris we have scattered here and there over millians of couplets, songs and historical compositions"

—Dr. Sunit Kumar Chaterjee

2. "There is an enormous mass of literature in various forms in Rajasthani, of considerable historical importance about which hardly anything is known."

—Dr. Grearsen.

3. "This vast literature flourished all over Rajputana and Gujrat wherever Rajput was lavished of his blood to the soil of his conquest."

—Dr. Tesitori.

द्वितीय-प्रकरण

राजस्थानी-गद्य साहित्य : उसके प्रमुख विभाग और रूप

राजस्थानी गद्य-साहित्य
उसके प्रमुख विभाग और रूप



राजस्थानी का गद्य साहित्य बहुत प्राचीन है । चौदहवीं शताब्दी से आज तक राजस्थानी में गद्य साहित्य की रचना होती आई है। यह प्राचीनता की ही नहीं, विस्तार की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। यदि इस सम्पूर्ण गद्य-साहित्य का प्रकाशन किया जाय तो सैकड़ों बड़ी बड़ी जिल्दें छापनी पड़ें। प्राप्त गद्य के अतिरिक्त न जाने कितनी सामग्री अज्ञात हस्तलिखित ग्रन्थों में छिपी पड़ी हैं।

वर्गीकरण:—

राजस्थानी के सम्पूर्ण प्राप्त गद्य-साहित्य को ५ प्रमुख भागों में विभक्त किया जा सकता है जिनमें प्रत्येक के अन्तर्गत कई रूपान्तरों का समावेश है :—

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-धार्मिक-गद्य-साहित्य
ख—पौराणिक-गद्य-साहित्य

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य
ख—जैनेतर ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

३—कलात्मक-गद्य-साहित्य

४—वैज्ञानिक-गद्य-साहित्य

५—प्रकीर्णक-गद्य-साहित्य

क—पत्रात्मक
ख—अभिलेखीय

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

राजस्थानी का धार्मिक-गद्य दो रूपों में मिलता है :— क–जैन और ख–पौराणिक। प्रथम में कलात्मक अंश अधिक है। राजस्थानी का प्राचीनतम गद्य प्रधानतया जैनों की रचना है। पौराणिक गद्य में अनुवाद की अधिकता है।

क–जैन धार्मिक गद्य

इसके दो रूप हैं : १–टीकायें २–स्वतंत्र। जैनों के धर्म-ग्रंथ प्राकृत में हैं। जब प्राकृत को समझना जनसाधारण के लिये कठिन हो गया तब जैन-आचार्यों और उनके शिष्यों ने सीधी सादी भाषा में सरल एवं बोधगम्य कथाओं के साथ उनकी व्याख्यायें की, उनके अनुवाद प्रस्तुत किये तथा उनके आधार पर स्वतंत्र कृतियों की रचनायें की। ये टीकायें दो रूपों में मिलती हैं :— १-बालावबोध २ टब्बा

१–बालावबोध :—

बालावबोध से अभिप्राय ऐसी टीका से है जो सरल और सुबोध हो। जिसे साधारण पढ़ा लिखा, अपढ़ या मन्द बुद्धि भी सरलता से समझ सके। बालावबोध में केवल मूल की व्याख्या ही नहीं मूल सिद्धान्तों को स्पष्ट करने वाली कथा भी होती है, यह कथा ही बालावबोध-शैली की मुख्य विशेषता है। इस प्रकार बालावबोध टीकाओं में कथाओं का बहुत बड़ा संग्रह होता है। ये कथायें प्रायः परम्परागत होती हैं। इनमें बहुत सी कथायें बौद्ध-जातक कथाओं की भाँति लोक-कथा-साहित्य से ली हुई हैं। कुछ कथायें प्रसंगानुसार नई भी गढ़ ली जाती हैं। इस कथाओं के द्वारा जन-साधारण का ध्यान धर्म-चर्चा में लगाया जाता है। कथा के अन्त में कुछ कुछ जातक-कथाओं की भांति, उससे मिलने वाली धार्मिक शिक्षा का उल्लेख होता है। आरम्भ और मध्य में जैन धर्म सम्बन्धी कोई विशेषता नहीं होती। अन्त में वह धार्मिक रूप ग्रहण करती है। ये बाला-बोध सैंकड़ों की संख्या में लिखे गये और जैन जनता में खूब लोकप्रिय हुये।

२–टब्बा :—

यह बालावबोध से बहुत संक्षिप्त होता है। इसमें मूल शब्द का अर्थ उसके ऊपर, नीचे या पार्श्व में लिख दिया जाता है

इन दोनों रूपों में बालावबोध का लेखन ही अधिक हुआ। ये बालावबोध टीकायें निम्नलिखित जैन-धार्मिक ग्रंथों पर मिलती है :—

क. अंग, ख. उपांग, ग. मूल सूत्र, घ. स्तोत्र ग्रंथ, च. चरित्र ग्रंथ, छ. दार्शनिक ग्रंथ, ज. प्रकीर्णक

क. आगम ग्रंथ–अंग

१. आचारांग —जैन धर्म के बारह अंगों में से पहला अंग है श्रमण निर्ग्रन्थ के प्रशस्त आचार गौचरी, वैनयिक, कायोत्सर्गादि स्थान विहार भूमि आदि में गमन, चंक्रमण, आहारादि पदार्थों की माप, स्वाध्यायादि में नियोग, भाषा, समिति, गुप्ति, शैया, पान आदि दोषों की शुद्धि, शुद्धाशुद्धआहारादि ग्रहण, व्रत, नियम तप, उपधान आदि इसके विषय हैं।

२. सूत्रकृतांग :—यह जैन धर्म का दूसरा अंग है जिसमें जैनेतर दर्शन की चर्चा भी है। अन्य दर्शन से मोहित, संदिग्ध तथा नवदीक्षितों की बुद्धि-शुद्धि के लिए १८० क्रियावादी, ८४ अक्रियावादी, ६७ अज्ञानवादी ३२ विनयवादी लोगों के मतों का उल्लेख है।

बालावबोधकार : पार्श्वचन्द्र

३. व्याख्या प्रज्ञप्ति (भगवती):—यह जैन धर्म का पांचवा अंग है। जीव, अजीव, जीवाजीव, लोक, अलोक, लोकालोक, विभिन्न प्रकार के देव, राजा, राजर्षि सम्बन्धी अनेक गौतमादि द्वारा पूछे गये प्रश्न और श्री महावीर द्वारा दिये गये उनके उत्तर इसके विषय हैं। द्रव्यानुयोग, तत्व विचार का प्रधान ग्रंथ है।

अज्ञात लेखक की बालावबोध (रचना काल सं० १७०७)

४. उपासक दशांक :—यह जैन धर्म का सातवां अंग है, जिसमें भगवान महावीर के दस श्रावकों का जीवन-चरित्र है।

बालावबोधकार : विवेकहंस उपाध्याय

५. प्रश्न व्याकरण :—यह दसवां अंग है। प्रथम पांच अध्याय में हिंसा आदि पांच आश्रवों का तथा अन्तिम पांच में संवर मार्ग का वर्णन है।

ख. उपांग ग्रंथ :—

१. औपपातिक (उववाई) यह एक वर्णन प्रधान ग्रंथ है जिसमें चम्पानगरी, पूर्णभद्र चैत्य, वन खंड, अशोक वृक्ष आदि के वर्णन के साथ साथ तापस, श्रमण, परिव्राजक आदि का स्वरूप बताया गया है।

बालावबोधकार : मेघराज : पार्श्वचन्द्र

२. रायपसेणी (राजप्रश्नीय) :—इसमें श्रावस्ती नगरी के नास्तिक राजा प्रदेशी तथा पार्श्वनाथ के गणधर देशीकुमार के मध्य में हुए आत्मा-परमात्मा एवं लोक-परलोक सम्बन्धी संवाद हैं।

बालावबोधकार : पार्श्वचन्द्र

मूल सूत्र :—

ये वे ग्रंथ हैं जिनका मूल रूप में अध्ययन सब साधुओं के लिये आवश्यक है।

१—षडावश्यक :—इसमें जैन मत के ६ आवश्यक कर्मों का विवेचन है जिनका पालन करना आवश्यक कहा गया है। ये आवश्यक कर्म इस प्रकार हैं — १–सामायिक –सावद्य अर्थात पाप कर्म का परित्याग एवं सम भाव ग्रहण। २–चतुर्विंशतिस्तव :–जैन-धर्म के चौबीस तीर्थकरों की स्तुति। ३–गुरुवंदन ४–प्रतिक्रमण :–पापों की गर्हणा ५–कार्योत्सर्ग ध्यान। ६–प्रत्याख्यान :–आहार आदि से सम्बन्ध रखने वाले व्रत-नियम।

षडावश्यक पर बालावबोध रचनायें सबसे अधिक हुई हैं। उपलब्ध बालावबोधों में सर्व प्रथम बालावबोध इसी पर है जिसकी रचना आचार्य तरुणप्रभ सूरि ने सं० १४११ में की थी।

बालावबोधकार : सर्व श्री तरुणप्रभ सूरि, हेमहंस गणि, मेरुसुन्दर आदि

२—साधु प्रतिक्रमण :–में जैन साधुओं के निशि दिन में लगने वाले दोषों से मुक्त होने की क्रिया है।

बालावबोधकार : पार्श्वचन्द्र

३—दशैवकालिक–में जैन साधुओं के आचारों का वर्णन है।

बालावबोधकार : पार्श्वचन्द्र, सोमविमल सूरि, रामचन्द्र

४—पिण्डविशुद्धि :–इसमें जैन साधुओं के आहार-ग्रहण एवं आहार शुद्धि की विधि का उल्लेख है।

बाला० लेखक : संवेगदेव गणि

५—उत्तराध्ययन :–में भगवान महावीर के अन्तिम समय के उपदेशों का संग्रह है।

बालावबोधकार : मानविजय : कमललाभ उपाध्याय

ग. स्तोत्र ग्रंथ :—

१—भक्तामर :–यह प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव का स्तोत्र ग्रंथ है। इसकी रचना मानतुंगाचार्य ने भोज के समय में की। इसमें कुल ४४ श्लोक हैं। प्रथम श्लोक के प्रथम शब्द "भक्तामर" के आधार पर इसका यह नाम पड़ा।

बालावबोधकार :-सोमसुन्दर सूरि : मेरुसुन्दर

२—अजितशान्ति स्तवन–में दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ एवं सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथ का संयुक्त स्तवन है।

बालावबोधकार : मेरुसुन्दर

३—कल्याणमन्दिर :–में तेइसवें जैन तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति है।

बालावबोधकार : मुनिसुन्दर शिष्य

४—शोभन स्तुति :-इसमें शोभन मुनि कृत २४ तीर्थंकरों की यमक बद्ध स्तुतियां हैं। मूलग्रंथ संस्कृत में है।

बालावबोधकार : भाणविजय

ऋषभ पंचाशिका —यह महाकवि धनपाल द्वारा रचित पहले तीर्थंकर ऋषभदेव की स्तुति है।

५—रत्नाकर पंचविंशति :–इसकी रचना आचार्य रत्नाकर ने की है जिसमें भगवान के सम्मुख आत्म-आलोचना की गई है।

बालावबोधकार : कुंवर विजय

च. चरित्र ग्रंथ :—

१—कल्पसूत्र :- इसके अन्तर्गत अ-तीर्थंकर चरित्र, आ—आचार्य-पट्टावलि और इ-साधु-समाचारी ये तीन प्रकरण हैं। श्री महावीर के चरित्र का इसमें विस्तार से वर्णन है।

बालावबोधकार : हेमविमल सूरि : सोमविमल सूरि, शिवनिधान आर्त्त चन्द्र.

इनके अतिरिक्त महावीर चरित्र, जम्बू स्वामी चरित्र तथा नेमिनाथ चरित्र पर क्रमशः लक्ष्मीविजय, भानुविजय तथा सुशीलविजय ने बालावबोध की रचनायें की।

च. दार्शनिक ग्रंथ :—

विचार-सार-प्रकरण :—में जैनधर्म के तत्वों मोक्ष, हिंसा, अहिंसा, जीव, अजीव, पाप, पुण्य आदि का विचार हुआ है।

२—योग-शास्त्र —इसमें जैन दर्शन-मान्य अष्टांग योग का चित्रण है।

बालावबोधकार : सोमसुन्दर सूरि

३—कर्मविपाकादि कर्मग्रंथ यह जैन दर्शन के कर्मवाद के ग्रंथ हैं। इनमें क्रिया के परिणाम-स्वरूप आत्मा पर पड़ने वाले संस्कारों का विवेचन है।

बालावबोधकार : यशः सोम

४—संग्रहणी :—संग्रहणी में जैनदर्शन की भौगोलिक बातों आदि का संग्रह किया है। टब्बाकार : नमर्षि (तपागच्छ)। सम्वत १६१६ का लिखा हुआ एक अज्ञात लेखक कृत बालावबोध प्राप्त है।[1]

छ. प्रकीर्णक :—

१—उपदेशमाला —इसमें भगवान महावीर द्वारा दीक्षित श्री धर्मदास गणि के रचित उपदेशों का संग्रह है।

बालावबोधकार : सोमसुन्दर सूरि : नन्न सूरि.

....

१—अभय जैन पु० बीकानेर

२—भवभावना :-में संसार के स्वरूप पर विचार किया गया है।
बालावबोधकार : माणिक्य सुन्दर गणि

३—चौशरण (चतु:शरण) : अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली द्वारा प्रणीत धर्म, इन चारों की शरण जैन मत स्वीकार करता है। इन्हीं से सम्बन्धित विषय ही इस ग्रंथ में हैं।
टब्बाकार : संवेगदेव तथा बालावबोधकार : जैचन्द्र सूरि

४—गौतमपृच्छा: में गौतम स्वामी द्वारा भगवान महावीर से पूछे गये प्रश्नों और भगवान महावीर द्वारा दिये गये उत्तरों का संग्रह है। यह प्रश्न पाप और पुण्य के फल से सम्बन्धित हैं।
बालावबोधकार जिनसूरि (तपागच्छ)

५—क्षेत्र समास -में जैन धर्म की दृष्टि में भूगोल का वर्णन है जिसमें उर्ध्व, अधस् और तिर्यक् तीनों लोकों का विवरण है।
बालावबोधकार : उदयसागर, मेघराज, दयासिंह आदि

६—शीलोपदेश माला .-में ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तों का प्रतिपादन और उसके महत्व का स्थापन कथाओं के द्वारा किया गया है।
बालावबोधकार : मेरुसुन्दर

७—पंच निर्ग्रंथी :-में पुलाक, बकुल, कुशील, स्नातक एवं निर्ग्रन्थ इन पांच प्रकार के साधुओं के लक्षण बताये गये हैं।
बालावबोधकार : मेरुसुन्दर

८—सिद्ध पंचाशिका :-में जैन धर्म के सिद्ध सम्बन्धी वर्णन हैं।
बालावबोधकार : विद्यासागर सूरि

आ—स्वतन्त्र

इन टीकाओं के अतिरिक्त राजस्थानी गद्य में जैनों का स्वतन्त्र धार्मिक-साहित्य भी अच्छी मात्रा में मिलता है उसके कुछ प्रकारों का उल्लेख नीचे किया जाता है।

१—व्याख्यान :-इनमें धार्मिक पर्वों को मनाने की विधि तथा अनुष्ठान सम्बन्धी आचार विचारों को दृष्टान्त देकर समझाया जाता है। पर्वों के अवसरों पर इसका पठन-पाठन करने का प्रचलन है।

२—विधि विधानः-कर्मकाण्ड के ग्रंथ हैं। इनमें पूजाविधि, सामायिक तपश्चर्या, प्रतिक्रमण, पौषध, उपधान, दीक्षाविधि आदि का वर्णन होता है।

३—धार्मिक कहानियां :—जैन-आचार्य ने धर्म-शिक्षा में कहानियों का प्रचुर प्रयोग किया है। इन कहानियों के अनेक संग्रह मिलते हैं।

४—दार्शनिक :—जैन दर्शन शास्त्र पर अनेक छोटी रचनायें मिलती हैं।

५—खण्डन-मण्डन :—इनमें अन्य धर्मों का एवं अन्य मतों का या संप्रदायों के सिद्धान्तों का खण्डन तथा अपने मत के सिद्धान्तों का जैन आचार्यों द्वारा मंडन होता है।

६—सिद्धान्त सारोद्धार :—में जिन प्रतिमा पूजादि मान्यताओं की सप्रमाण चर्चा है।

ख—पौराणिक धार्मिक-गद्य-साहित्य

पौराणिक धार्मिक गद्य-साहित्य पौराणिक-ग्रंथ या उनके आधार पर लिखे गये रामायण, महाभारत, भागवत, व्रतकथा, महात्म्य, धर्मशास्त्र, कर्मकाण्ड स्तोत्र आदि के अनुवादों के रूप में मिलता है। अधिकांश उपलब्ध अनुवाद सत्रहवीं शताब्दी के पीछे के ही हैं। जैन धार्मिक साहित्य की भांति यह न तो अधिक प्राचीन ही हैं और न विस्तृत ही।

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

क—जैन-ऐतिहासिक-गद्य

जैन विद्वानों ने ऐतिहासिक गद्य का भी निर्माण किया है यह प्रमुखतः पांच रूपों में प्राप्त है :—

अ—पट्टावली

इसमें जैन-आचार्यों की परम्परा का इतिहास होता है। पट्टधर आचार्यों का वर्णन विस्तार से रहता है। पट्टावली लिखने की परिपाटी प्राचीन है। संस्कृत एवं प्राकृत में लिखी गई पट्टावलियां भी मिलती हैं। राजस्थानी गद्य में लिखी गई पट्टावलियां पर्याप्त संख्या में विद्यमान हैं।

आ—उत्पत्ति ग्रंथ

इन ग्रंथों में किसी मत, गच्छ आदि की उत्पत्ति का इतिहास रहता है। मत विशेष किस प्रकार प्रचलित हुआ, उसके प्रथम आचार्य कौन थे, उस मत ने अपने विकास की कितनी अवस्थायें प्राप्त कीं तथा ऐसी ही अन्य बातों का वर्णन होता है।

इ—वंशावली

इनमें किसी जाति विशेष की वंश-परम्परा का वर्णन होता है। इन वंशावलियों को लिखने और सुरक्षित रखने के लिये कई जातियां ही बन गई जिनको महात्मा, कुलगुरु, भाट आदि नामों से पुकारा जाता है।

ई—दफ्तर बही

इसमें समय समय के विहार दीक्षादि की घटनाओं को जानकारी के रूप में लेख-बद्ध किया जाता था। इसे एक प्रकार की डायरी ही समझिये।

उ—ऐतिहासिक टिप्पण

जैन-आचार्य अपने युग में ऐतिहासिक विषयों का संग्रह भी करते रहते थे यह संग्रह छोटी छोटी टिप्पणियों के रूप में होता था। इनके विषयों में अनेक-रूपता मिलती है।

ख—जैनेत्तर-ऐतिहासिक-गद्य

जैनेतर ऐतिहासिक साहित्य भी अनेक रूपों में मिलता है जिनमें से प्रमुख रूपों का उल्लेख नीचे किया जाता है :—

१—ख्यात :-

ख्यात शब्द संस्कृत के "ख्याति" (प्रसिद्धि) का तद्भवरूप है इसका सम्बन्ध "आख्याति" (वर्णन) से भी जोड़ा जा सकता है। श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के अनुसार राजपूताने में ख्यात ऐतिहासिक गद्य रचना को कहा जाता है;[1] ख्यात में राजपूत राजाओं का इतिहास या प्रमुख

१—ओझा : नैणसी की ख्यात : भाग दो : भूमिका :

घटनाओं का संकलन वंश-क्रमानुसार या राज्य-क्रमानुसार रहता है।

ख्यातें दो प्रकार की मिलती हैं १—व्यक्तिगत जैसे "नैणसी की ख्यात" "बांकीदास की ख्यात" और "दयालदास की ख्यात"। २—राजकीयः इनके लेखक सरकारी कर्मचारी मुत्सद्दी या पंचोली होते थे जो नियमित रूप से घटनाओं का विवरण लिपिबद्ध करते थे।

यह बात तो नहीं है कि इन ख्यातों को वैज्ञानिक इतिहास कहा जा सके, क्योंकि प्राचीन इतिहास में अनेक स्थानों पर किंवदन्तियों का आधार दिखाई पड़ता है और समकालीन इतिहास में भी अतिरंजना का प्रयोग एवं निष्पक्षता का अभाव पाया जाता है जैसाकि मुसलमानी लेखकों की ख्यातों में भी होता है, पर समकालीन और निकट प्राचीन कालीन-इतिहास के लिए यह ख्यातें विश्वसनीय मानी जा सकती हैं। ख्यातें कई प्रकार की होती हैं जैसे १–जिनमें लगातार इतिहास होता है, यथा "दयालदास की ख्यात"। २–जिनमें बातों का संग्रह होता है, यथा "नैणसी की ख्यात" तथा ३–जिनमें छोटी छोटी स्फुट टिप्पणियों का संकलन होता है, यथा "बांकीदास की ख्यात" आदि।

२–बात :–

राजस्थान में "बात" कथा या कहानी का पर्याय है। यह दो प्रकार की होती हैं। १–जिनमें किसी एक ही ऐतिहासिक घटना अथवा व्यक्ति विशेष की जीवनी का विवरण होता है। ये बातें कथाओं से भिन्न होती हैं। उदाहरणतः "नागौर रे मामले री बात" "रावजी अमरसिंहजी री बात" आदि। २–याददाश्त के रूप में लिखी गई छोटी छोटी टिप्पणियों को भी बात कहा जाता है। जैसे "बांकीदास की बातें" में संग्रहीत बातें। इनमें अनेक बातें एक एक दो दो पंक्तियों की भी हैं।

३–पीढ़ियावली (वंशावली) :–

ये ख्यातों की अपेक्षा प्राचीन हैं, आरम्भ में इनमें वंश में होने वाले व्यक्तियों के नाम ही क्रमशः संग्रहीत होते थे पर आगे चलकर नामों के साथ उनके महत्वपूर्ण कार्यों और उनके जीवनकाल से सम्बन्ध रखने वाली महत्वपूर्ण घटनाओं का भी उल्लेख किया जाने लगा। राजवंशों के अतिरिक्त सेठ साहूकारों, सरदारों आदि की वंशावलियां भी मिलती हैं। उदाहरणतः

राठोड़ाँ री वंसावली, बीकानेर रा राठौड़ां राजवां री वंसावली, खीचीवाड़ा रा राठौड़ां री पीढ़ियां, सीसोदियां री वंसावली, ओसवालां री वंसावली आदि।

४–हाल, अहवाल, हगीगत, याददास्त:–

इनमें घटनाओं का विस्तार पूर्वक वर्णन होता है। जैसे–सांखलां दहियों सूं जांगलूं लियो तैरो हाल, पातसाह औरंगजेब री हगीगत, चाटी राह री हगीगत, राव जोधाजी वेढ़ां री याद इत्यादि।

५–विगत :–

विगत का अर्थ है विवरण। इसमें विभिन्न गांव, कुवें, गढ़, बाग के वृक्ष आदि की नामावलियां या सूची टिप्पणियों के साथ पाई जाती है जैसे चारण रा सांसणा री विगत, महाराजा तखतसिंघ जी रे कंवरां रा विगत, जोधपुर रा देवस्थानां री विगत, जौधपुर रा बागायत री विगत, जोधपुर रा निवाणां री विगत इत्यादि।

६–पट्टा परवाना राजकीय अधिकार पत्र एवं आज्ञापत्र :–

राजाओं के द्वारा दी गई जागीरों का अधिकार-पत्र और उसका विवरण पट्टा तथा राजकीय आज्ञा-पत्र को परवाना कहते हैं। जैसे परधाना रो तथा उमरावां रो पट्टो, महाराजा अनूपसिंह जी रो आनन्द राम रे नाम परवानो आदि।

७–इलकाब नामा :–

पत्र व्यवहार के संग्रह को इलकाब नामा कहा जाता है। राजस्थानी में इस प्रकार के कई संग्रह मिलते हैं।

८- जन्म-पत्रियां :–

इनमें प्रसिद्ध पुरुषों की जन्म कुण्डलियों का संग्रह पाया जाता है। उदाहरणत: राजा री तथा पातसाहां री जन्म-पत्रियां।

९-तहकीकात :–

इसमें किसी मामले की छानबीन से सम्बन्ध रखने वाले पक्ष-विपक्ष के प्रश्नोत्तरों का संग्रह होता है। उदाहरणतः जयपुर वारदात री तहकीकात री पोथी।

३—कलात्मक गद्य साहित्य

अ—बात :—

बात संस्कृत "वार्ता" से बना है जिसका अर्थ कथा है। राजस्थान में बातें बहुत प्राचीनकाल से कही और सुनी जाती रही हैं। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त या अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजस्थानी-कथाओं को लिपिबद्ध किये जाने के प्रयास होने लगे। इससे पूर्व या तो वे लिखी ही नहीं गई या इससे पूर्व की लिखी कथायें हस्तलिखित ग्रंथों के नष्ट हो जाने से प्राप्त नहीं हैं।

आ—दवावैत :—

दवावैत अन्त्यानुप्रास रूप गद्य जाल है। अन्त्यानुप्रास, मध्यानुप्रास या अन्य किसी प्रकार के सानुप्रास या यमक युक्त गद्य का प्रकार दवावैत के नाम से पुकारा जाता है।[1] इसके दो भेद माने गये हैं। १—शुद्ध बंध:- जिसमें अनुप्रास मिलाया जाता है मात्राओं का नियम नहीं होता। जैसे :—

प्रथम ही अयोध्या नगर जिसका बणाव।
बारै जौजन तो चौड़े सौलै जोजन की घाव।
चौ तरफ के फैलाव, चौसठ जोजन के फिराव।
तिसके तलै सरिता सरिजू के घाट.
अत उतावल सूं बहै, चोसर कोसों के पाट।[2]

२—गद्यबंध—इसमें अनुप्रास नहीं मिलाये जाते। २४ मात्रा का पद होता है जैसे :—

हाथियों के हल्के खंभू गणाते खोले, आरावत के साथी भद्र जाति के टोले। अत देऊ के दिग्गज, विंध्याचल के सुजाव, रंग रंग चित्रे सुंडा डंड के बणाव। भूल की जलूस, वीर घंटू के ठणके, बादलों की जगमगा भरे भौंरों की मकी मणके। कल कदमूं के लंगर भारी कनक की हूँस जवाहर जेहर दीपमाला की रूस भालू के आडम्बर।[3]

....

१—मंछ कवि : रघुनाथ रूपक गीतां रो . पृ० २३६
२—कवि मंछ : रघुनाथ रूपक गीतां रो : पृ० २३७
३—वही : पृ० २४०

इ—वचनिका :—

ये वचनिकायें भी दवावैत का ही भेद मालूम होती हैं। इतना सा भेद मालूम होता है कि वचनिका कुछ लम्बी और विस्तृत होती है। इसके भी दो भेद हैं—१–गद्यबंधः—में कई छंदों के युग्म वर्चानिका रूप में जुड़े चले जाते हैं।[1] २–पद्यबंध :—के दो भेद (अ) वारता (आ) वारता में मुहरा राखना।

वचनिका यद्यपि गद्य रचना है तथापि यह चंपू रूप में मिलती है अर्थात गद्य के साथ साथ पद्य का प्रयोग भी इनमें मिलता है।

ई–वर्णक -ग्रंथ :—

इनको यदि वर्णन-कोष कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी। इन वर्णनों का उपयोग किसी भी कलात्मक रचना के लिये किया जा सकता है। जैसे यदि नगर, विवाह, भोज, ऋतु, युद्ध, आखेट आदि का वर्णन करना हो तो इन ग्रंथों में आये हुये अंश का उपयोग वहां पर किया जा सकता है। राजान राउत रो वात-वणाव, खीची गंगेव नीं वावत रो दो पहरो, मुत्कलानुप्रास, कुतूहल, सभा शृंगार आदि इसी प्रकार के ग्रंथ हैं।

४—वैज्ञानिक-गद्य-साहित्य

राजस्थानी गद्य में वैज्ञानिक साहित्य या तो अनुवाद के रूप में मिलता है या टीका रूप में। स्वतंत्र रूप से इस प्रकार का गद्य बहुत कम है। आयुर्वेद, ज्योतिष, शकुनावली, सामुद्रिक-शास्त्र, तंत्र, मंत्र आदि अनेक विषयों के संस्कृत ग्रंथों के राजस्थानी अनुवाद या इन्हीं के आधार पर लिखी हुई राजस्थानी-गद्य की रचनायें मिलती हैं।

५—प्रकीर्णक-गद्य-साहित्य

क—पत्रात्मक :—

इन पत्रों के विषय एवं प्रकारों के कई रूप हैं इनको इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है :—

१- कवि रंछ : रघुनाथ रूपक गीतां रो : पृ० २४५

१—जैन-आचार्यों से सम्बन्ध रखने वाला पत्र-व्यवहार
२—राजकीय पत्र-व्यवहार
३—व्यक्तिगत पत्र-व्यवहार

१—पहले प्रकार के अन्तर्गत १-आदेश पत्र, २-विनती या विज्ञप्ति पत्र महत्वपूर्ण हैं। आदेश पत्रों के द्वारा आचार्य अपने शिष्यों को चातुर्मास आदि करने का आदेश देते थे। विनती या विज्ञप्ति पत्र श्रावकों के द्वारा आचार्यों को प्रार्थना पत्र के रूप में लिखे जाते थे जिनमें किसी स्थान के श्रावकों द्वारा आचार्यों से अपने स्थान की ओर विहार या चातुर्मास करने का आग्रह होता था। विज्ञप्ति पत्र बड़ी कला के साथ तैयार करवाये जाते थे। कुछ के आरम्भ में सम्बन्धित नगर के सैंकड़ों कलापूर्ण चित्र होते थे।

२—इसके अन्तर्गत राजाओं के पारस्परिक पत्र अंग्रेज सरकार को भेजे गये पत्र आदि आते हैं।

३—तीसरे प्रकार के अन्तर्गत विभिन्न व्यक्तियों के पारस्परिक व्यक्तिगत पत्र आते हैं। जैन-संग्रहों तथा राजकीय कर्मचारियों आदि के व्यक्तिगत संग्रहों में इस प्रकार के अनेक प्राचीन पत्र मिलते हैं।

ख—अभिलेखीय :—

प्रशस्ति लेख, शिलालेख, ताम्रपत्र आदि इस प्रकार के अन्तर्गत हैं। इनके लिखने की परिपाटी प्राचीन रही है। प्रशस्ति लेख जैन आचार्यों की प्रशस्ति में लिखे जाते थे। शिलालेख प्राय. राज्याश्रय में राजा की आज्ञानुसार लिखे गये हैं। जैसाकि नाम से प्रकट है पाषाण-खंडों पर खोद कर लिखा जाना शिला-लेख कहलाता है। ताम्रपत्र भी प्रायः राजाओं द्वारा ही प्रयुक्त होते थे। इन ताम्रपत्रों (धातु विशेष के बने हुए पत्रों) पर नरेश अपनी आज्ञा या दानादि का विवरण लिखवाते थे।

इस अभिलेखन के लिये प्रधानतः संस्कृत का प्रयोग अधिक मिलता है। राजस्थानी में भी इस प्रकार का गद्य प्राप्त है।

—:※※:—

काल विभाजन

राजस्थानी गद्य साहित्य के विकास को निम्नलिखित ३ कालों में विभाजित किया जा सकता है :—

१—प्राचीनकाल

क-प्रयास-काल सं० १३०० से सं० १४०० तक

ख-विकास-काल सं० १४०० से सं० १६०० तक

२—मध्यकाल—(विकसित काल) सं० १६०० से सं० १६५० वि० तक

३—आधुनिक काल—(नवजागरण काल) सं० १६५० से अब तक

"प्रयास-काल" का महत्व उसकी प्राचीनता की दृष्टि से है । इस काल में गद्य-शैली के कई प्रयोग हुए । ये सभी प्रयोग स्फुट टिप्पणियों के रूप में प्राप्त हैं । प्राकृत एवं अपभ्रंश-गद्य के उपरान्त राजस्थानी-गद्य का यह स्वरूप विशेष रूप से उल्लेखनीय है । किस प्रकार लेखकों ने अपनी शैली प्रतिपादित की, किस प्रकार शब्द-योजना की रूपरेखा बनी आदि बातों पर इस काल की रचनाओं द्वारा प्रकाश पड़ता है ।

"विकास काल" में गद्य का रूप स्थिर हुआ । शैली परिवर्तित हुई । भाषा में प्रवाह आया । अब तक केवल स्फुट टिप्पणियां, स्मृति-लेखों (याददाश्त) के रूप में ही लिखी गई थीं किन्तु अब ग्रंथ भी लिखे जाने लगे । इस काल में जैनों द्वारा लिखित धार्मिक साहित्य की प्रधानता रही, जिसमें बालावबोध-शैली विशेष रूप से उल्लेखनीय है । औक्तिक ग्रंथ (व्याकरण ग्रंथ) भी लिखे गये । कई एक सुन्दर कलापूर्ण साहित्यिक रचनायें भी इस काल में हुईं जो जैन और चारणी दोनों शैलियों की हैं । ऐतिहासिक गद्य के उदाहरण भी सामने आये । अनुवाद भी हुए जिनके कुछ नमूने उपलब्ध हैं । राजस्थानी-गद्य के विकास की दृष्टि से यह युग महत्वपूर्ण है ।

"विकसित काल" राजस्थानी गद्य का स्वर्ण-काल है । इस काल में भाषा प्रौढ़ और परिमार्जित हुई । वर्ण्य-विषय बदले । गद्य का सर्वतोमुखी विकास हुआ । कलात्मक, ऐतिहासिक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि कई रूपों में राजस्थानी-गद्य का प्रयोग हुआ । वचनिका, दवावैत, मुत्कलानुप्रास आदि शैलियों में गद्य रचनायें की जाने लगीं । मौलिक, टीका एवं अनुवाद इन

तीनों रूपों में गद्य को स्थान मिला। अभिलेखीय तथा पत्रात्मक गद्य भी इस काल में प्रभूत मात्रा में तैयार हुआ जिसका विशाल संग्रह विविध राज्यों के तथा अनेक व्यक्तियों के व्यक्तिगत संग्रहालयों में उपलब्ध है। प्राचीनकाल की रचनायें प्रधानतः जैन-लेखकों की कृतियां हैं पर मध्यकाल में जैनेतर-गद्य भी प्रचुर मात्रा में लिखा गया।

विकास काल के अन्तिम चरण में राजस्थानी गद्य लेखन शिथिल पड़ गया "नव जागरण काल" में उसकी उन्नति के लिये पुनः प्रयत्न आरम्भ हुये और नाटक, उपन्यास, कहानी, रेखाचित्र आदि क्षेत्रों में उसका अच्छा विकास हो रहा है। निबन्ध के क्षेत्र में वह अभी आगे नहीं बढ़ पाया है। आशा है इस कमी की पूर्ति भी शीघ्र ही हो जायगी।

तृतीय - प्रकरण

राजस्थानी - गद्य का विकास (१)

प्राचीन - राजस्थानी - काल

(सं० १३०० वि० से सं० १६०० वि० तक)

प्राचीन - राजस्थानी - काल

नित्य प्रति जीवन मे काम आने वाली भाषा 'बोली' कहलाती है। यह तनिक भी साहित्यिक नहीं होती और बोलने वालों के मुख मे रहती है।[1] इसी बोली का साहित्यिक रूप गद्य कहलाता है।

भारतीय साहित्य के इतिहास मे गद्य-साहित्य को चक्रनेमिक्रम से बराबरी से ऊपर उठता और नीचे गिरता पाते है। अत सहिता-काल में जहा पद्य का प्राधान्य है वहा ब्राह्मण काल मे गद्य का और उपनिषद्-काल म पुन पद्य का। लौकिक संस्कृत मे भी रामायण और महाभारत के समय का सारा साहित्य पद्य में ही है जबकि उसके परवर्ती-काल मे सारा सूत्र साहित्य गद्य मे ही मिलता है। बौद्ध और जैन-गद्य इस काल मे अधिक मिलता है अपभ्र श-काल मे वह फिर लुप्त हो गया।

देशी भाषा का गद्य—

विक्रम की सातवी शताब्दी से ग्यारहवीं शताब्दी तक अपभ्र श की प्रधानता रही और फिर वह पुरानी हिन्दी मे परिणत हो गई इसमे देशी भाषा की प्रधानता है। नवी शताब्दी से ही बोलचाल की भाषा मे सस्कृत क तत्सम शब्द आने लगे थ[3] किन्तु देशी भाषा के गद्य के उदाहरण तेरहवी शताब्दी स पहले क नहीं मिलते। उक्ति व्यक्ति प्रकरण[4] देशी भाषा गद्य का सबस प्राचीन उदाहरण है। इसके रचयिता दामोदर भट्ट गाहडवार राजा गोविन्दचन्द्र के सभा पडित थे। सम्भवत राजकुमारों को काशी कान्यकुब्ज की भाषा सिखान के लिये इसकी रचना की गई।[5] गोविन्द चन्द्र का राज्यकाल सन् ११५४ ई तक था।[6] इस प्रकार विक्रम की बारहवीं शताब्दी की बनारस के आसपास के प्रदेश की भाषा का स्वरूप इसमे देखा जा सकता है।

१—श्यामसुन्दर दास भाषाविज्ञान —म० ४ ६ पृ० ७२
२—चन्द्रधर शर्मा गुलेरी पुरानी हिन्दी
३—हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य का आदिकाल पृ० २०
४—पाटन केटलौग आफ मेन्युस्क्रप्ट्स प्र० १२८
५—हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य का आदि काल प्र० २८
६—हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य का आदिकाल प्र० ८

कहा जाता है कि गोरखनाथ के गद्य को लगभग सं० १४०० के आसपास के ब्रजभाषा गद्य का नमूना मान सकते हैं।[1] मिश्रबन्धु गोरखनाथ का समय सं० १४०७ निश्चित करते हैं।[2] किन्तु राहुल सांकृत्यायन उसे मानने में विवश हैं उनके अनुसार गोरखनाथ विक्रम की दसवीं शताब्दी में विद्यमान थे[3] अतः गोरखनाथ का समय सर्वसम्मति से निश्चित नहीं हो पाया है। दूसरी बात गद्य के सम्बन्ध में है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने गोरखनाथ के ब्रजभाषा-गद्य के जो उदाहरण दिये हैं[4] "उनकी पुष्टि का कोई सबल प्रमाण नहीं मिलता। इन रचनाओं का गोरखनाथ की कृतियां होना संभव नहीं जान पड़ता"[5] अतः इस गद्य की प्रामाणिकता संदिग्ध है।

चौदहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिखित मैथली-गद्य के उदाहरण ज्योतिरीश्वर ठाकुर की "वृत्त रत्नाकर" में मिलते हैं इसका आनुमानिक रचना काल विक्रम की चौदहवीं शताब्दी का तृतीय-चतुर्थांश है।[6] इसमें सात वर्णन हैं:— १—नगरवर्णन २—नायिका वर्णन ३—स्थान वर्णन ४—ऋतु वर्णन ५—प्रयानक वर्णन ६—भट्टादि वर्णन ७-श्मशान वर्णन[7]। इन वर्णनों में प्रौढ़ मैथली-गद्य का प्रयोग है जिससे अनुमान किया जा सकता है कि इससे पूर्व भी गद्य रचना होती रही होगी। पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विद्यापति ने भी अपनी "कीर्तिलता" में मैथली-गद्य का प्रयोग किया है।[8]

मराठी-गद्य के उदाहरण भी लगभग इसी समय के मिलते हैं। "वैजनाथ कलानिधि"[9] प्राचीन मराठी-गद्य का उदाहरण है। यह ताड़पत्र

. ...

१—रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास सं० १९९९ पृ० ४३८
२—मिश्रबन्धु : मिश्रबन्धु विनोद भाग १ पृ० २११
३—नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग ११ अंक ४ पृ० ३८९
४—रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास सं० १९९९ पृ० ४३९
५—अगरचन्द नाहटा : कल्पना मार्च सं० १९५३ पृ० २११
६—सुनीतिकुमार चटर्जी : वृत्त रत्नाकर : अंगरेजी भूमिका पृ० १
७—बाबू मिश्र : वृत्त रत्नाकर : मैथिली भूमिका पृ० ४
८—रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास सं० १९९९ पृ० ६९.
९—पाटन केटेलौग आफ मेन्- स्क्रप्ट्स पृ० ७५.

पर लिखी हुई है। इसका आनुमानिक समय चौदहवीं शताब्दी का अंतिमांश है। इस प्रकार देशीभाषा-गद्य के उदाहरण चौदहवीं शताब्दी से मिलने लगते हैं। राजस्थानी में भी प्राप्त गद्य इसी शताब्दी के पूर्वार्द्ध का प्रयास है।



जैन विद्वानों का हाथ–

राजस्थानी भाषा की उन्नति के साथ साथ गद्य-साहित्य का भी उत्थान हुआ। राजस्थानी-गद्य-साहित्य के आरम्भ और उत्थान में जैन विद्वानों का बहुत हाथ रहा है। अपने धार्मिक विचारों को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिये इन विद्वानों ने गद्य का सहारा लिया। राजस्थानी-गद्य के प्रारम्भिक उदाहरण इन्हीं जैन आचार्यों की रचनाओं में मिलते हैं। जैन-विद्वानों का यह गद्य कलात्मक दृष्टिकोण से नहीं लिखा गया उसका उद्देश्य केवल धार्मिक शिक्षा मात्र था।

विकास की दृष्टि से राजस्थानी-गद्य के प्राचीन-काल सं० (१३०० से सं० १६००) तक को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है :—

१—प्रयास काल—सं० १३०० से सं० १४०० तक—
२—विकास काल–सं० १४०० से सं० १६०० तक—

प्रयास-काल (सं० १३०० वि० से सं० १४०० वि० तक)

राजस्थानी-गद्य के प्रामाणिक प्राचीन उदाहरण विक्रम की चौदहवीं शताब्दी से मिलने लगते हैं। इस समय तक राजस्थानी और गुजराती भाषाओं का पृथक्करण नहीं हुआ था। दोनों अभी तक एक ही भाषा थीं

जिसे विद्वानों ने "प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी" (ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी) नाम दिया है।[1]

चौदहवीं शताब्दी की राजस्थानी-गद्य की ८ रचनायें अभी तक प्राप्त हुई हैं जिनमें ७ रचनायें गुजरात में मिली हैं। इन रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं[2] :—

१—आराधना—र० सं० १३३० वि०—

२—बाल-शिक्षा—र० सं० १३३६ वि०—

३—अतिचार—र० सं० १३४० वि०—

४—नवकार व्याख्यान—र० सं० १३५८ वि०—

५—सर्वतीर्थनमस्कारस्तवन—र० सं० १३५९ वि०—

६—अतिचार—र० सं० १३६९ वि०—

७—तत्वविचारप्रकरण—र० काल लगभग चौदहवीं शताब्दी

८—धनपाल-कथा—र० काल लगभग चौदहवीं शताब्दी

....

१—क. टैसीटोरी –Notes on the Grammer of Old Western Rajasthani : Indian Antiquary . 1914-1916 (Introduction)

ख. सुनीतकुमार चटर्जी–The Origin and Development of Bangali Language Page : 9

२—इनमें १, ३, ४, ५, ६ रचनाओं को प्रकाश में लाने का श्रेय बड़ौदा के श्री चम्मनलाल डाल्हाभाई दलाल को है। यह रचनायें उन्हें पाटन के जैन भण्डारों में प्राप्त हुई थीं और उनके द्वारा संपादित "जैन-गुर्जर-काव्य-संग्रह" में प्रकाशित हो चुकी हैं। नं० ७ और ८ के अतिरिक्त शेष सभी रचनाओं को मुनि श्री जिनविजय जी ने अपने 'प्राचीन-गुजराती-गद्य-संदर्भ" में प्रकाशित किया है। अन्तिम दो रचनाओं को खोज निकालने का श्रेय श्री अगरचन्द नाहटा, बीकानेर को है। नं० ७ "राजस्थान भारती" के जुलाई सन् ६६५१ के अंक में प्रकाशित हुई है इसकी मूल ह० प्र० बीकानेर के बड़े उपासरे के ज्ञान भंडार में है। नं० ८ की ह० प्र० बीकानेर के बड़े उपासरे के महिमा-भक्ति-भंडार में रक्षित है।

इनमें दूसरी रचना व्याकरण-संबंधी है। एक, तीन, पांच और छै रचनायें जैन धर्म से सम्बन्धित विषयों पर लिखी गई स्फुट टिप्पणियां हैं। चौथी टीका है। सातवीं में जैन-धर्म सम्बन्धी तत्वों का नामोल्लेख है। आठवीं कथा रूप में है। यह सभी रचनायें जैन लेखकों की कृतियां हैं। "बालशिक्षा" के लेखक संग्रामसिंह के जैन होने में संदेह था किन्तु श्री लालचन्द भगवान दास गांधी की खोज के अनुसार वह भी जैन सिद्ध होता है।[1]

'आराधना' गुजरात के आशापल्ली (आसावल) नगर में आश्विन सुदी ४ गुरुवार सं० १३३० में ताड़पत्र पर लिखी गई थी। इसके लेखक का नाम नहीं दिया गया है पर यह किसी सुपठित जैन साधु की रचना जान पड़ती है।

'आराधना' जैन धर्म की एक विशेष क्रिया है जिसमें आचार सम्बन्धी अतिचारों की आलोचना, आचार्य आदि के सम्मुख गुह्यतम रहस्यों का प्रकटीकरण, व्रतों का वाणी द्वारा अंगीकरण, सब जीवों के प्रति अपने अपराधों की क्षमापना, अठारह पाप-स्थानों का त्याग, चार शरणों का ग्रहण, दुष्कृतों की गर्हणा, सुकृतों का अनुमोदन तथा पंच नमस्कारों का स्मरण किया जाता है।

प्रस्तुत "आराधना" में जैन-आराधन क्रिया की विधि निर्देशित की गई हैं जो याददाश्त के रूप में लिखी गई एक स्फुट टिप्पणी है। इसमें संस्कृत शब्दों की प्रचुरता तथा समास-प्रधान शैली का प्रयोग मिलता है। शब्दावली और रूपों पर अपभ्रंश का प्रभाव दिखाई देता है। शैली कुछ बोझिल सी हो गई है। भाषा-लेखन में सौकर्य नहीं आने पाया। लेखक प्रायः अधिक कवित्व मय हो उठता है और अनुप्रासान्त-काव्य-शैली को अपनाता चलता है।

गद्य का उदाहरण—

सात नरक तणा नारकि दशविध भवनपति अष्टविध व्यंतर पंचविध जोइसी द्वैविध वैमानिक देवा किं बहुना। दृष्ट अदृष्ट ज्ञात अज्ञात श्रुत-अश्रुत स्वजन परजन मित्रु शत्रु प्रत्यक्षि परोक्षि जे केइ जीव चतुरासी लक्ष योनि ऊपना चतुर्गति की संसारी भ्रमंता मई दूमिया वंचिया सीरीविया

....

१—लालचन्द भगवान गांधी :—भरत बाहुबली रास प्रस्तावना पृ० ४१

इन्द्रिया तिन्द्रिया चिउरिन्द्रिया दामिया पाडिया चूकिया भवि भवांतरि भवसति भवसहस्रि भवलखि भवकोडि मनि वचनि काइं तीह सवीहइं मिच्छामि दुक्कडं ।

तीसरी और छठी रचनायें-(अतिचार) हैं जो क्रमशः सं० १३४० वि०[1] के लगभग तथा सं० १३६६ वि०[2] में लिखी गई। अतिचार, आचार-सम्बन्धी व्यतिक्रम (नियम-भंग) को कहते हैं। अतिचारों की आलोचना तथा उनकी गर्हणा इन कृतियों का विषय है। उक्त "आराधना" से इनका बहुत कुछ साम्य है। इनकी भाषा कम संस्कृतनिष्ठ तथा पदावली कम समास-प्रधान है। संस्कृत से तद्भव शब्दों का प्रयोग हुआ है।

गद्य का उदाहरण-१

बारि भेदि तपु छहि भेदि बाह्य अणसण इत्यादि उपवास आंबिल नीविय एकासणु पुरिमड्ड-व्यासणं यथाशक्ति तपु तथा ऊनोदरि तपु वृत्तिसंखेवु। रसत्यागु काय किलेसु संलेखना कीधी नहि तथा प्रत्याख्यान एकासणां बिपुरिमड्ड साढपोरिसि पोरिसिभंगु अतिचारु नीविय आंबिलि उपवासि कीधइ निरासइं सचित पाणीउ पीधउं हुयइ पक्ष दिवसमांहि।

—सं० १३४०—

गद्य का उदाहरण नं०-२

मृषावादि मृषोपदेश दीधउ, कूड़उ लेख लिखिउ, कूड़ी साखि थापण मोसेउ, कुणहुसउं राडि भेडि कलहु विढाविढि जु कोई अतिचार मृषावादि वृति भग्न सगलाइ आहि हुउ त्रिविधमिच्छामि दुक्कडं।

—सं० १३६६—

चौथी रचना-नवकार व्याख्यान[3] सं० १३५८ वि० में लिखित एक गुटके में प्राप्त हुई है। नवकार नमस्कार का प्राकृत रूप है इसमें जैनों के नमस्कार मंत्र, जिसके द्वारा पंच-परमेष्ठियों को नमस्कार किया जाता है, की व्याख्या की गई है यह राजस्थानी के टीकात्मक गद्य का सर्व प्रथम

....

१—प्राचीन गूर्जर काव्य संग्रह पृ० ८८

२—प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ पृ० २२१

३—प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ पृ० २१६ और प्राचीन गूर्जर काव्य संग्रह पृ० ८६

उदाहरण है जो राजस्थानी में प्रचुर परिमाण में मिलता है इसकी शैली रूढ़िबद्ध टीकाओं जैसी है।

गद्य का उदाहरण—

नमो आर्यारियाणं । ३ । माहरउ नमस्कारु आचार्य हुउ। किसा जि आचार्य, पंच विधु आचारु जि परिपालइ ति आचार्य भणियइ। किसउ पंच विधु आचारु, ज्ञानाचारु, दर्शनाचारु, चरित्राचारु, तपाचारु, वीर्याचारु, यउ पच-विधु आचारु जि परिपालई ति आचार्य भणियइ। तीह आचार्य माहरउ नमस्कारु हूउ। सं० १३५८

पांचवीं रचना "सर्वतीर्थ नमस्कार स्तवन"[1] है जो सं० १३५६ में लिखी गई। यह एक छोटी सी टिप्पणी है जिसमें स्वर्ग, पाताल और मनुष्य लोक इन तीनों के विविध भागों में जितने जिन-मन्दिर हैं उनकी संख्या बताकर वंदना की गई है।

गद्य का उदाहण—

अथ मनुष्यलोकि नंदिसर वरि दीपि बावन्न च्यारि कुण्डलवल्लि, च्यारि रुचकि वल्लि, च्यारि मनुष्योत्तरि पर्वति, च्यारि इखार पर्वति, पंच्यासी पांच मेरे, वीस गजदंत पर्वति, दस कुर पर्वति, भीस सेल सिहरे सरिमउ वैताल्यपर्वति, एवं च्यारि सइ त्रिसट्ठि जियालइपरिमं, एवं आठ कोडि छप्पन लाख मत्ताणवइ सहस च्यारि सइ छियासिया तियलुक्के शास्वतानि महामन्दिर त्रिकाल तीह नमस्कार करउं। —सं० १३५६—

"तत्व-विचार प्रकरण" में जैन धर्म के तत्वों पर टिप्पणियां हैं इसका रचनाकाल ज्ञात नहीं पर जिस प्रति में यह प्राप्त हुई है उसका लेखन सं० १४२० के लगभग हुआ है अतः इसका रचनाकाल उसी के आसपास होना चाहिये।

गद्य का उदाहरण—

जीव किता होहि, चितु चेतना संज्ञा जाहं हुइ ति जीव भणियहि। ते पुणु अनेक विधि हुंहि। इत्थे पुणु पंच विधु अधिकारु ऐकेन्द्रिय, बेइंद्रिय, तिइंद्रिय, चउरिंद्रिय, पचेन्द्रिय। जि ऐकेंद्रिय ति दुविध-सूक्ष्म, वादर। वादर ति मोकला। बे इंद्रियादिक वादर। संकल्प ज मनि वचनि काहइ न

....

१—प्राचीन गुर्जर-काव्य-संग्रह पृ० ८८ : प्राचीन गुर्जर-काव्य-संग्रह पृ० २१६
२—"राजस्थानी-भारती" वर्ष ३, अंक ३–४ पृ० ११८

हणउ न हणावहुं । आरंभु सापरांधु सोकलउ । एउ पहिलउ अणुव्रतु ।

"बालशिक्षा"[1] की रचना संग्रामसिंह ने सं० १३३६ में की। संग्रामसिंह का जन्म श्रीमाल वंश में हुआ था इनके पिता का नाम ठक्कुर कूरसी और पितामह का नाम साढाक था। यह रचना संस्कृत के विद्यार्थियों के लाभ के लिये की गई थी। इसके द्वारा संस्कृत व्याकरण की शिक्षा दी गई है। समझाने के लिए तत्कालीन भाषा का प्रयोग किया है। संस्कृत के रूपों के साथ तुलनात्मक रीति से तत्कालीन-भाषा-शब्दों के रूप दिये गये हैं। अन्त में संस्कृत के अनेक क्रिया, क्रियाविशेषण आदि शब्दों के भाषा-प्रतिरूप संग्रहीत हैं। भाषा के रूपों और शब्दों को लेकर बताया गया है कि उनको संस्कृत में किस प्रकार व्यक्त किया जायगा। इस प्रकार यह अनुवाद पद्धति से संस्कृत की शिक्षा देने वाला छोटा सा बालोपयोगी व्याकरण है।

भाषा के तत्कालीन स्वरूप को समझने के लिए एक अत्यन्त उपयोगी रचना है। इसमें भाषा के व्यवहारिक और प्रचलित रूप संग्रहीत किये गये हैं जिनमें प्राचीनता तथा अव्यवहारिकता का संदेह नहीं हो सकता। इसी शैली पर आगे चल कर और भी रचनायें हुई जो साधारणतया "औक्तिक" नाम से प्रसिद्ध हैं।

गद्य का उदाहरण–

स्वर केता १४ समान केता १० सवर्ण १० ह्रस्व ५ दीर्घ ५ लिंगु ३ पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंगु, भलउ पुल्लिंग, भली स्त्रीलिग, भलु नपुंसकलिंगु। सं० १३३६

"धनपाल-कथा"[2] एक बहुत प्राचीन प्रति में लिखी हुई मिली है इसके साथ और भी छोटी मोटी अनेक रचनायें हैं जिनका रचनाकाल चौदहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है।

इस कथा में उज्जयिनी नगरी के महापंडित धनपाल के जैन श्रावक हो जाने का वृत्तांत है। इसमें एक छोटी सी घटना को लेकर धनपाल के

१—'प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ' में प्रकाशित

२—राजस्थान-भारती वर्ष ३, अंक १ पृ० ६४

जीवन में सहसा परिवर्तन होने, उसके द्वारा जैन धर्म स्वीकार करने तथा "तिलक मंजरी" कथा के अग्नि-शरण होने और पुनः लिखी जाने की कथा है।

इसकी भाषा ऊपर लिखे उदाहरणों की भाषा से प्राचीनतर जान पड़ती है वह अपभ्रंश के अधिक निकट प्रतीत होती है।

गद्य का उदाहरण—

उज्जयिनी नाम नगरी, तहिठे भोजुदेव नामि राजा, तीहइ तणइ पंचहसयह पंडितइ मांहि मुख्यु धनपालु नामि पंडितु, तिहइ तणइ घरि अन्यदा कदाचिन साधु विहरण निमत्तु पइठा, पंडितहणी भार्याभीजा दिवसहणी दधि लेउ उठी। बीजुतु काई तिपि प्रस्तावि वकतिया विहरावण मारीखेउं न हुम इति पभणियउं।

चौदहवीं शताब्दी का गद्य-प्रवृत्ति एवं भाषा स्वरूप की दृष्टि से विशेष महत्व है यद्यपि अब तक पद्य का ही प्राधान्य रहा तथापि गद्य लेखन की ओर भी ध्यान जा चुका था। पद्य-प्रवृति अधिक प्राचीन थी अतः उसकी भाषा प्रौढ़ और परिमार्जित हो चुकी थी। गद्य की भाषा अभी उस स्तर पर नहीं पहुंच पाई थी किन्तु उस ओर बढ़ने का प्रारम्भ होने लगा था। इस शताब्दी का लिपिबद्ध गद्य बहुत कम मिलता है इसके दो प्रमुख कारण थे १—पद्य को अधिक मान्यता मिली थी और उसके स्थायित्व पर अधिक आस्था थी। उसकी मनोरंजकता एवं आकर्षण-शक्ति के कारण गद्य लेखन की ओर अधिक ध्यान नहीं जा सका। २—इस शतक में जो भी गद्य लिखा गया वह पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं है। उसमें से कुछ तो, संभवतः, सामयिक होने के कारण नष्ट हो गया और कुछ हस्त-प्रतियां अज्ञात स्थानों में रहकर काल का कलेवा बन गईं।

जो कुछ भी अभी तक प्राप्त हैं उनके आधार पर कहा जा सकता है कि चौदहवीं शताब्दी में गद्य का स्वरूप न तो भाषा की दृष्टि से और न साहित्य की दृष्टि से प्रौढ़ हो पाया था, किन्तु उसमें विकास के तत्व विद्यमान थे इस काल के गद्य का महत्व गद्य के प्रारम्भिक रूप के उदाहरण होने के नाते है। इस समय गद्य लेखकों के सम्मुख कोई पूर्व निश्चित आधार नहीं था। उनको स्वयं अपना नवीन मार्ग बनाना पड़ा। फलतः भाषा लेखन में न तो सौकर्य ही आने पाया और न शैली ही जम पाई।

विकास-काल (सं० १४०० वि० से १६०० तक)

गत शताब्दी के प्रयास अब प्रौढ़ता प्राप्त करने लगे। शैली बदली। विषयों का क्षेत्र भी विस्तृत हुआ। इस काल के साहित्य को पांच भागों में विभक्त किया जा सकता है —

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य
२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य
३—कलात्मक-गद्य-साहित्य
४—व्याकरण-गद्य-साहित्य
५—वैज्ञानिक-गद्य-साहित्य

इन दो शताब्दियों का गद्य-साहित्य प्रधानतया जैनों की धार्मिक रचना हैं। जैन आचार्यो ने प्रधानतः ३ प्रकार के गद्य-ग्रंथ लिखे हैं। १—सरल गद्य-कथायें २—विशिष्ट गद्य-निबंध ३—टीका-टिप्पणी, अनुवाद, बालावबोध, व्याकरण आदि। सरल गद्य-कथाये विशेषकर धार्मिक रहीं। विशिष्ट गद्य-निबन्धों में कलात्मक छटा दिखलाई पड़ती है। बालावबोध-लेखन की प्रथा का आरम्भ आचार्य तरुण प्रभ सूरि से होता है। यह परम्परा बराबर चलती रही। जैन लेखकों ने ऐतिहासिक तथा व्याकरण सम्बन्धी रचनाये भी की किन्तु इनकी संख्या अधिक नहीं है।

चारणी-गद्य-साहित्य भी इसी काल से मिलता है उसका सर्वप्रथम उल्लेखनीय ग्रंथ "अचलदास खीची री वचनिका" १५ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिखा गया।

माणिक्यचन्द्र सूरि द्वारा लिखित "पृथ्वीचन्द्र-चरित्र या वाग्विलास" इस काल की महत्वपूर्ण जैन कलात्मक कृति है जो वचनिका शैली में लिखी गई है।

१—धार्मिक-गद्य-साहित्य

राजस्थानी के धार्मिक गद्य के उदाहरण पन्द्रहवीं शताब्दी के आरम्भ से ही मिलने लगते हैं। जैन आचार्य तथा उनके शिष्य इस प्रकार की रचनाओं में सदैव योग देते रहे। इनमें प्रमुख गद्यकारों के नाम इस प्रकार हैं :— १—तरुणप्रभ सूरि, २—सोमसुन्द सूरि, (तपागच्छ) तथा

उनका शिष्यवर्ग— मुनिसुन्दर सूरि, जयसुन्दर सूरि, भुवनसुन्दर सूरि, जिनसुन्दर सूरि और रत्नशेखर सूरि ३–मेरुसुन्दर (खरतरगच्छ) ४–शिवसुन्दर ५–जिन सूरि (तपागच्छ) ६–संवेगदेव गणि (तपागच्छ) ७–राजवल्लभ (धर्मघोषगच्छ) ८–लक्ष्मीरतन सूरि ९–पार्श्वचन्द्र १०–जयशेखर (अंचलगच्छ) ११–साधुरत्न सूरि (तपागच्छ) १२–शुभवर्धन १३–हेमहंस गणि ।

इन सब में निम्नलिखित चार गद्य लेखकों ने राजस्थानी के प्रारम्भिक धार्मिक गद्य-साहित्य को जीवन दान दिया है। १–आचार्य तरुणप्रभ सूरि २–श्री सोमसुन्दर सूरि ३–श्री मेरुसुन्दर और ४–श्री पार्श्वचन्द्र। यह चारों इस काल के ज्योति-स्तम्भ हैं।

१–आचार्य तरुणप्रभ सूरि :–

आचार्य तरुणप्रभ सूरि का नाम राजस्थानी गद्य लेखकों में सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। इनके जीवनकाल, जन्म-स्थान, वंश आदि का कुछ भी पता नहीं चलता। "युगप्रधानाचार्य-गुर्वावली"[1] के अनुसार इनका दीक्षा-नाम तरुण कीर्ति था। खरतरगच्छ के पट्टधर आचार्य जिनचन्द्र सूरि ने सं० १३६८ वि० में भीमपल्ली (भीलड़िया)[2] में इनको दीक्षा दी[3]। राजेन्द्रचन्द्र सूरि तथा जिनकुशल सूरि के पास इन्होंने विविध शास्त्रों को अध्ययन किया।[4]

श्री जिनकुशल सूरि इनकी विद्वता एवं योग्यता से प्रभावित थे। उन्होंने इनको सं० १३८८ में आचार्य पद प्रदान किया। श्री तरुणप्रभ सूरि धुरन्दर जैन विद्वानों में से थे इन्होंने संस्कृत प्राकृत एवं तत्कालीन लोक-भाषा में कई स्तोत्र-ग्रंथ भी लिखे हैं। राजस्थानी गद्य की सबसे प्रथम प्रौढ़ रचना "षड़ावश्यक बालावबोध"[5] इन्हीं की कृति है।

....

१—हस्तप्रति क्षमा-कल्याण-ज्ञानभंडार, बीकानेर में विद्यमान है।

२—यह स्थान पालणपुर एजेन्सी के डीसा केम्प से १६ मील है।

३—मोहनलाल दुलीचन्द देशाई : जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टिप्पणी संख्या ६५६, ७६४

४—तरुणप्रभ सूरि : षड़ावश्यक बालावबोध : यशःकीर्ति गणिमासि पूर्व विद्यागमाणयत्, राजेन्द्रचन्द्रसूरिन्द्रोर्विद्या काचन काचन जिनादि कुशलाख्यौ....

५—हस्तप्रति अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

षड़ावश्यक बालावबोध

जैसाकि नाम से ही संकेत मिलता है यह पुस्तक जैन धर्म के छै आवश्यक कर्मों[1] का बोध कराने के लिये लिखी गई है । अतः इसके लिखने में तरुणप्रभ सूरि का उद्देश्य धार्मिक शिक्षा ही रहा। इसकी रचना सं० १४११ वि० में दीपोत्सव के अवसर पर हुई ।[2] इस उपदेशात्मक गद्य-ग्रंथ में एक प्रकार की टीका का ही अनुसरण हुआ है। इसमें संस्कृत, प्राकृत तथा लोक भाषा (राजस्थानी) का प्रयोग है । संस्कृत और प्राकृत के अंशों को लोकभाषा में समझाया गया है। एक एक शब्द के साथ शब्द का जो अर्थ है उसकी व्याख्या साधारण से साधारण व्यक्ति को समझाने के दृष्टिकोण की गई है जैसे-प्राकृत-अंश "अन्नाणी किं काही किंवा नाही छेय पावयंती" संस्कृत-अंश 'अज्ञानी किं करिष्यति' लोकभाषा "किसी करसइ" अथवा "किसउं जाणिसइ" इत्यादि।

भाषा पर पूर्ण अधिकार होने के कारण आचार्य तरुणप्रभ सूरि को इस ग्रंथ की व्याख्यात्मक शैली में सफलता मिली । प्रसंगानुसार दृष्टान्त रूप में अनेक कथाओं का प्रयोग इसमें किया गया है । ये कथायें इस ग्रंथ का महत्वपूर्ण अंश हैं। इस "षड़ावश्यक बालावबोध" की रचना के उपरान्त बालावबोध-लेखन की बाढ़ सी आ गई। ये बालावबोध राजस्थानी गद्य के अच्छे उदाहरण हैं।

इस ग्रंथ की भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित राजस्थानी का सर्वप्रथम उदाहरण है। सम्पूर्ण ग्रंथ में कहीं भी भाषा-शैथिल्य नहीं है उसमें एक प्रकार का प्रवाह है जो उससे पूर्व की रचनाओं में नहीं मिलता। शब्द-चयन सरल होते हुए भी उसमें भाव प्रकाशन की अद्भुत शक्ति है। पांडित्य प्रदर्शन की भावना से यह सर्वथा मुक्त है।

गद्य का उदाहरण—

इसी परि महाविषाद करतउ जिनदत्तु लोकि जाणिउ । किं बहुनां, राजेन्द्रि पुणि जाणिउ। धम्यु जिनदत्तु जु इसी परि भावना भावइ। तदा

....

१—द्वितीय प्रकरण

२—तरुणप्रभ सूरि : षड़ावश्यक बालावबोध : सं० १४११ वर्षे दीपोत्सव दिवसे शनिवारे श्री अणहिल्ल पतने — —षड़ावश्यक वृत्ति सुगमा बालावबोध कारिणी सकलं संतोषकारिणी लिखिता।

तिरिंग नगरी केवली आविउ । राजादिके लोके वांदी पूछिउ-भगवन् जिनदत्तु पुण्यवन्तु, किवां अभिनवु पुण्यवन्तु, केवली कहीइ जिनदत्तु पुण्यवन्तु। लोक कहइ-भगवन् अभिनवु पाराविउ जिनदत्तु न पाराविउ....

आचार्य श्री तरुणप्रभ सूरि से पूर्व राजस्थानी गद्य लड़खड़ाता हुआ उठने का प्रयत्न कर रहा था। उन्होंने उसे वह शक्ति प्रदान की कि वह उठकर चलने में समर्थ हो गया। अब राजस्थानी-गद्य ने एक दिशा प्राप्त करली जिस पर वह वेग से बढ़ चला और थोड़े ही समय में वह पूर्ण प्रौढ़ता को प्राप्त हो गया।

२—सोमसुन्दर सूरि[1] सं० १३३० से १४६६

आचार्य तरुणप्रभ सूरि के उपरान्त श्री सोमसुन्दर सूरि[2] का कार्य महत्वपूर्ण है। यह अपने युग के एक बहुत बड़े आचार्य हुए। इनका जन्म प्रह्लादनपुर[3] (गुजरात) में सं० १४३० वि०[4] में हुआ। इनके पिता का नाम सज्जन श्रेष्ठि[5] तथा माता का नाम माल्हण देवी[6] था। दोनों धार्मिक विचारों के श्रावक थे। कुछ बड़े होने पर अपने पुत्र सोमकुमार को सज्जन-श्रेष्ठि ने एक विद्वान तथा तेजस्वी उपाध्याय के पास शिक्षा प्राप्त करने के लिये रखा।[7] कुमार ने शीघ्र ही लिंगानुशासन एवं छन्द शास्त्र की शिक्षा प्राप्त करली। एक बार जयानन्द सूरि उस नगर में आये। उनके उपदेशों को सुनकर सोमकुमार को वैराग्य हो गया।[8] जयानन्द सूरि भी उनसे प्रभावित हुए और सज्जनश्रेष्ठि से यह बालक उन्होंने दीक्षा के लिए मांगा। सं० १४३७ वि० में जयानन्द सूरि ने इनको दीक्षा दी और इनका दीक्षा

....

१—प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ पृ० ६७
२—देसाई जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास : टिप्पणी—६५२, ६५३, ६८६, ७०८, ७०९, ७२१, ७२८, ७२६, ७४६, ७५३, ७८८
३—सोम-सौभाग्य काव्य पृ० ५ श्लोक ५२
४—वही : पृ० २६ श्लोक ११
५—वही : पृ० १५ श्लोक ४०
६—वही : पृ० १६ श्लोक ५०
७—वही : पृ० ३५ श्लोक ५६, ५७, ५८, ५६
८—वही : पृ० ५८ श्लोक १६ वही पृ० ६५ श्लोक ६०

नाम सोमसुन्दर रखा गया। इन्होंने सं० १४५०[1] वि० में वाचक पद तथा सं० १४५७[2] में सूरि पद प्राप्त किया।

जैन धर्म के, इतिहास एवं साहित्य के क्षेत्र में श्री सोमसुन्दर सूरि का बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व रहा है। इन तीनों क्षेत्रों में समान रूप से अधिकार रखने वाले उनके समान आचार्य बहुत कम हुए हैं। अपने जीवनकाल में इन्होंने अनेक भव्य एवं कलाकौशल पूर्ण जैन मन्दिरों के निर्माण में प्रेरणा दी, प्राचीन ताड़पत्र पर लिखी हुई कृतियों का जीर्णोद्धार किया और नवीन प्रतिलिपियां तैयार करवाकर उनकी सुरक्षा की व्यवस्था करवाई। साहित्य-सृजन को इनके द्वारा बड़ा भारी प्रोत्साहन मिला। उन्होंने विपुल मात्रा में स्वयं साहित्य की रचना की तथा दूसरों को भी उसके लिए प्रेरित किया। उनकी शिष्य-मण्डली बहुत बड़ी थी। उनकी शिष्य परम्परा में संस्कृत प्राकृत और भाषा के अनेकों महत्वपूर्ण लेखक हुए। उन्होंने खम्भात के प्रसिद्ध प्राचीन पुस्तक भण्डारों की व्यवस्था की।[3]

साहित्यिक गति विधि के मेरुदण्ड होने के नाते सोमसुन्दर सूरि का समय "सोमसुन्दर-युग" (सं० १४५६ से सं० १५०० तक) कहा गया है। उन्होंने स्वयं कई ग्रंथों का निर्माण किया। उनके द्वारा राजस्थानी-गद्य में लिखे गये ८ बालावबोध हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं—१-उपदेशमाला बालावबोध (र० सं० १४८५)[4] २-षष्ठि शतक बालावबोध (र० सं० १४९६)[5] ३-योगशास्त्र बालावबोध ४-भक्तामर स्तोत्र बालावबोध ५-नवतत्व-बालावबोध ६-पर्यन्ताराधना-आराधना-पताका बालावबोध ७-षडावश्यक बालावबोध ८-विचार ग्रंथ बालावबोध।

उदाहरण के लिए उपदेशमाला बालावबोध तथा योगशास्त्र बालावबोध को लिया जा सकता है।[6] प्रथम प्राकृत का एक प्रसिद्ध ग्रंथ है जिसमें सदाचार के उपदेशों का संग्रह है। इसमें छोटी बड़ी कथाओं का प्रयोग किया गया है। श्रावकों को धार्मिक उपदेश देने के लिए इस ग्रंथ की

....

१—सोम-सौभाग्य काव्य : पृ० ७५ श्लोक १४
२—वही : पृ० ८६ श्लोक ५१
३—नेमिचन्द्र : षष्ठि शतक प्रकरण पृ० १३
४—ह० प्र० : अभय-जैन पुस्तकालय बीकानेर में प्राप्त
५—ह० प्र० : अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर में विद्यमान
६—के० एम० मुन्शी : गुजराती एण्ड इट्स लिटरेचर पृ० ९२

रचना हुई है। मूल गाथा के प्राकृत प्रयोगों का पहले उल्लेख कर पश्चात् उनकी व्याख्या की गई है। योगशास्त्र की रचना जैन श्री हेमचन्द्र सूरि ने संस्कृत में की थी उसी पर प्रस्तुत बालावबोध लिखा गया है इसमें योग का स्वरूप, उसकी महिमा एवं महात्म्य के ५ महाव्रत, उन पांचों में प्रत्येक की पांच पांच भावना तथा योगपुरुष के लक्षण बतलाए हैं। इसके अतिरिक्त श्रावक के ३ गुण, चार व्रत के अतिचार तथा श्रावक के कृत्य-सम्यक्त्व का स्वरूप, श्रावक के ५ अनुव्रत, ५ इन्द्रियों की शुद्धि का स्वरूप, ४ भावना तथा नवआसन का विश्लेषण है।

इन दोनों बालावबोधों की कथाओं में तरुणप्रभ सूरि का "षडावश्यक बालावबोध" की कथाओं से साहित्यिक तत्व कम है फिर भी भाषा के विकास की दृष्टि से श्री सोमसुन्दर की बालावबोध की कथायें महत्वपूर्ण हैं।

गद्य का उदाहरण–

१—चाणक्य ब्राह्मणि चन्द्रगुप्त क्षत्रीपुत्र राज्य योग्य भणी संगठियो छइं। अनइं एक पर्वतक राजा मित्र कीधओ छइं। तेहनइं बलिं चाणक्यइं कटक करी पाडलिपुरि आवी नंदराव काढी राज्य लीधउं। पर्वतक अर्ध राज्यनु लेणहार भणी एक नंदरायनी बेटी तक्षणे करी विषकन्या जांणी नइं परणाविओ चन्द्रगुप्त विसना उपचार करतओ वारिओ। तिम अनेराइं आपणां काज सरिया पूंठि मित्र हुइं अनर्थ करइं।

(उपदेशमाला बालावबोध)

गद्य का उदाहरण–

२—वेणातट नगरि मूलदेव राजा। एक वार लोके विनविउ-स्वामी को एक चोर नगर लूसइ छइ, पुण चोर जाणीर नहीं, राजइं कहिउं–थोड़ा दिहाड़ा मांहि चोर प्रगट करिसु तुम्हें असमाधि म करिसउ। पछइ राजाइं तलार तडि हाकिउं। तलार कहइ मइं अनेक उपाय कीधा पुण ते चोर धराइ नही। पछइ राजा आपण पइं रात्रिइं नीलउ पडलउ पहिरि नगर बाहरि जे जे चोर ने स्थान के फिरते, चार जोवउ एकइं स्थान कि जइ सूतउ। तेतलइं मंडिक चोरिइं दीठउ जगाविउ पूछिउ-कउण तउं, तीणि कहिउं-हुं कापडी भीषारी। मंडिक चोरि कहिउं आवि तउं मूं साथिइं जिम तुहइं लक्ष्मीवंत करउं। (योगशास्त्र बालावबोध)

३—मेरुसुन्दर (खरतरगच्छ)

श्री मेरुसुन्दर[1] खरतरगच्छ के पांचवे आचार्य श्री जिनचन्द्र सूरि (सं० १४८७-१५३०) के शिष्य थे।[2] इनके जीवन-वृत्त के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है। राजस्थानी के टीकाकारों में सबसे अधिक टीकायें इन्हीं की मिलती हैं। अब तक इनके १७ बालावबोध उपलब्ध हुए हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं :— १-शीलोपदेश माला[3] बालावबोध (सं० १५२५) २-पुष्पमाला बालावबोध[4] (सं० १५२८) ३-षडावश्यक बालावबोध[5] (सं० १५२५) ४-शत्रुञ्जय-स्तवन[6] बालावबोध (सं० १५१८) ५-कर्पूर-प्रकरण[7] बालावबोध (सं० १५३४) ६-योगशास्त्र बालावबोध[8] ७-पंच-निर्ग्रंथी बालावबोध[9] ८-अजितशान्ति बालावबोध ९-भावारिवारण-बालावबोध १०-वृत्त-रत्नाकर बालावबोध ११-सम्बोधसत्तरी बालावबोध[10] १२-श्रावकप्रतिक्रमण बालावबोध १३-कल्पप्रकरण बालावबोध १४-योग-प्रकाश बालावबोध १५-षष्टिशतक[11] बालावबोध १६-वाग्भटालंकार[12] बालावबोध (सं० १५३५) १७-विदग्धमुखमंडन[13] बालावबोध।

इन बालावबोधों के अतिरिक्त मेरुसुन्दर की दो गद्य रचनायें

....

१—युग प्रधान जिनदत्त सूरि : पृ० ६६, ७०। देसाई : जैन गूर्जर कविओ भाग ३ पृ० १५८२। जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास : टि० ७६४

२—नेमिचन्द्र भंडारी : षष्टि शतक प्रकरण पृ० १५

३—अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर। मुनि विनयसागर संग्रह कोटा

४—संघ भंडार वखत जी शेरी पाटन। अभय जैन पुस्तकालय बीकानेर

५—डोसाभाई अभयचन्द संघ भंडार, भावनगर

६—भंडारकर इंस्टीट्यूट, पूना

७—पुराना संघ भंडार, पाटण

८—विवेक विजय भंडार, उदयपुर

९—गोड़ीजी भंडार, उदयपुर। मुनि विनयसागर संग्रह, कोटा

१०—डूंगर जी यति भंडार, जैसलमेर। मुनि विनयसागर संग्रह कोटा

११—संघ भंडार वखत जी शेरी पाटण

१२—नेमिचन्द्र भंडारी षष्टि शतक प्रकरण पृ० १६

१३—पार्श्वनाथ भंडार, जोधपुर

१–अंजनासुन्दरी-कथा[1] और २–प्रश्नोत्तर-ग्रंथ[2] प्राप्त हैं।

इन रचनाओं के निर्माणकाल को देखने से श्री मेरुसुन्दर का समय सोलहवीं शताब्दी का प्रारम्भ निश्चित होता है।

श्री मेरुसुन्दर की यह सभी रचनायें राजस्थानी प्रौढ़ गद्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। उदाहरण के लिये शीलोपदेशमाला बालावबोध को देखा जा सकता है। इस ग्रंथ का मूल लेखक श्री जयकीर्ति है। इस ग्रंथ में शील (ब्रह्मचर्य) सम्बन्धी उपदेश दिये गये हैं।

गद्य का उदाहरण–

आबाल ब्रह्मचारी आजन्म चतुर्थ व्रतधारी श्री नेमिकुमार बावीसमा तीर्थंकर तिणां नै नमस्कार करी नै शील रूप उपदेश तेहनी माला नौ बालावबोध मूर्ख जनना उपकार भणी हूँ कहिस्यु नेमिकुमार ए नाम श्या-मणी जे गृहस्थ वास मै त्रिणी से वरस घर रही राज अनै राजीमती परहरी कुमार पणइ चारित्र लीधो। वली केहवा छै जयसार जय कही जै त्रिभुवन ते माहि शील रूप धरवाइ सु एक सार प्रधान छै अथवा बाह्य अनै अंतरंग वयरी जीपवइं कर सार छै। (शीलोपदेशमाला बालावबोध)

४–पार्श्वचन्द्र सूरि (सं० १५३७–१६१२)

राजस्थानी गद्य के इतिहास में श्री पार्श्वचन्द्र सूरि का नाम भी महत्त्व का है। इनका जन्म सं० १५३७ में हुआ। दीक्षा सं० १५४६ में, उपाध्याय पद सं० १५६५ में, तथा युगप्रधान पद सं० १५९९ में प्राप्त किया। इन्होंने सं० १५६५ में अपने गुरु बृहत्तपा-नागोरी-तपागच्छ के साधुरत्न-सूरि की आज्ञा से आगमानुसार क्रिया उद्धार किया। मारवाड़ के मालदेव राजा को जैन धर्म का उपदेश दिया। मुंहणोत गोत्रीय क्षत्रियों को जैन धर्म का बोध करवा ओसवाल श्रावक बनाया।[3] इस काल के अधिक बालावबोध लिखने वालों में मेरुसुन्दर के उपरान्त इन्हीं का स्थान है।

....

१—सिद्ध क्षेत्र साहित्य मन्दिर, पालीताना।
२—महिमा भक्ति भंडार, बीकानेर।
३—बृहत्तपागच्छ पट्टावली पृ० ४४

इनकी निम्नलिखित ११ बालावबोध प्राप्त हैं :—१–आचारांग बालावबोध[1] २–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध ३–औपपातिक सूत्र बालावबोध[2] ४–चउसरण प्रकीर्ण बालावबोध (सं० १५१७) ५–जम्बू-चरित्र बालावबोध[3] ६–नवतत्व बालावबोध ७–प्रश्न व्याकरण बालावबोध ८–रायपसेणी सूत्र बालावबोध ९–साधु प्रतिक्रमण बालावबोध १०–सूत्रकृतांग सूत्र बालावबोध[4] ११–तंदुलवैयालिय बालावबोध[5] । इनके अतिरिक्त इनकी स्वतन्त्र गद्य रचना "प्रश्नोत्तर ग्रंथ" भी मिलती है ।

गद्य का उदाहरण–

हिव तेहना नाम कहइ छइं । ते अनुक्रमइ जाणिवा । नारी समान पुरुष नइं अनेरउ अरि न थी इणि कारिणी नारि कहीयइं । नाना प्रकार कर्मइं करी पुरुष नइं मोहइं तिणि कारणि महिला कहियइं । अथवा महान्तकालनी उपजावणहार तिणि कारिणी महिला कहीयइं । पुरुष नइं मत्त करइं मद चड़वइं तिणि कारिणी प्रमदा कहियइं । पुरुष नइं हावभावादिकइ करी माहइं । तिणि कारणि रामा कहियइं । पुरुष नइं अंग ऊपरि अनुरक्त करइं तिणि कारिणी अंगना कहियइं । (तंदुलवैयालीय)

इन चारों जैन विद्वानों ने इस काल के गद्य लेखन को बहुत प्रोत्साहन दिया । उसके लिए नवीन विषय प्रस्तुत किए तथा नवीन शैली प्रतिपादित की । इनमें सोमसुन्दर सूरि का शिष्य मंडल उल्लेखनीय है । इन शिष्यों में श्री मुनिसुन्दर सूरि, श्री जयसुन्दर सूरि, श्री भुवनसुन्दर सूरि, श्री जिनसुन्दर सूरि आदि प्रमुख हैं तथा इनकी शिष्य परम्परा में जिनमण्डन, जिनकीर्ति, सोमदेव, सोमजय, विशालराज, उभयनन्दि, शुभरत्न आदि अनेक विद्वानों ने साहित्यिक जाग्रति को प्रसुप्त नहीं होने दिया । उपरान्त के जैन आचार्यों का ध्यान इस ओर गया इससे भाषा का स्वरूप विकसित हुआ ।

....

१—लीमड़ी भंडार तथा खेड़ासंघ भंडार । मुनि विनयसागर भंडार, कोटा

२—लीमड़ी भंडार

३—वही

५—खम्भात

६—अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर

अन्य जैन गद्य लेखक :—

इस युग के अनेक जैन गद्यकारों में श्री जयशेखर सूरि (सं० १४००—१४६२) आंचलगच्छ के श्री महेन्द्रप्रभ सूरि के शिष्य थे इन्होंने गद्य और पद्य के कुल मिला कर १८ ग्रंथों की रचना की जिनको देखने से पता चलता है कि यह कैसे विद्वान आचार्य थे ।[1] प्रबोध चिन्तामणि के विषय पर स्वतन्त्र रूप से इन्होंने जो त्रिभुवन दीपक प्रबन्ध नामक ग्रंथ लिखा वह पन्द्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की राजस्थानी का उल्लेखनीय उदाहरण है । गद्य-ग्रंथों में "श्रावक बृहद्तिचार"[2] महत्वपूर्ण हैं ।

"नवतत्व विवरण बालावबोध"[3] (सं० १४५६ के लगभग) के रचयिता श्री साधुरत्न सूरि (तपागच्छ) श्री देवसुन्दर सूरि के शिष्य थे ।[4] श्री साधुरत्न सूरि अपने समय के मान्य विद्वानों में से थे इनके गद्य में प्रौढ़ भाषा के उदाहरण मिलते हैं ।

हेमहंसगणि तपागच्छ सोमसुन्दर सूरि मुनिसुन्दर सूरि आदि के शिष्य थे इन्होंने सं० १५०१ में षडावश्यक बालावबोध[5] की रचना की ।

शिवसुन्दर वाचक सोमध्वज खेमराज के शिष्य थे । इनकी गद्य रचना "गौतमपृच्छा बालावबोध"[6] खीमासर में सं० १५६६ में लिखी गई ।

जिनसूरि तपागच्छीय सोमसुन्दर सूरि विशालराज, विद्याभूषण आदि के शिष्य थे । इनकी "गौतमपृच्छा बालावबोध" शिवसुन्दर की बालावबोध जैसी ही है । दोनों में केवल लेखकों के व्यक्तित्व का अन्तर है । इसमें कुछ दृष्टान्त नये जोड़ दिये गये हैं और कुछ कम कर दिये गये हैं ।

....

१—देसाई : जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ६५०, ६८१, ७०६, ७१२, ७१४, ७१७, ८६५, ६०६, ६८१
२—देसाई : जैन गूर्जर कविओ : भाग ३ पृ० १५७३
३—गोड़ीजी भंडार, बम्बई
४—देसाई : जैन गूर्जर कविओ भाग ३ पृ० १५७२
५—अभय जैन पुस्तकालय तथा मेहरचन्द भंडार नं० १ बीकानेर
६—अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर

संवेगदेव गणि[1] तपागच्छीय श्री सोमसुन्दर सूरि के शिष्य थे। इनकी ३ गद्य-रचनायें प्राप्त हैं जिनमें दो बालावबोध और १ टब्बा है। "पिंडविशुद्धि बालावबोध"[2] (सं० १५१३) तथा "आवश्यकपीठिका-बालावबोध" सं० १५१४ में लिखी गई। इनका चउसरण टब्बा[3] भी प्राप्त है।

राजवल्लभ धर्मघोषगच्छीय श्री धर्म सूरि की शिष्य परम्परा में श्री महिचन्द्र सूरि के शिष्य थे।[4] इनकी सं० १५३० में लिखी हुई "षडावश्यक बालावबोध"[5] मिलती है। जिसकी सारी कथायें संस्कृत में हैं। जहां जैन धर्म के नियम, सिद्धान्त आदि की व्याख्या का प्रसंग आया है वहां संस्कृत एवं प्राकृत के अतिरिक्त राजस्थानी का प्रयोग किया गया है।

अज्ञात लेखक रचनायें :-

इस काल में "श्रावक व्रतादि अतिचार"[6] (सं० १४६६) और "कालिकाचार्य-कथा"[7] (सं० १४८५) नामक दो रचनायें ऐसी हैं जिनके लेखकों का नाम ज्ञात नहीं है। प्रथम का सं० १३६६ में लिखित "अतिचार" से विषय-साम्य है। दूसरी रचना के गद्य में पद्य का सा लावण्य एवं माधुर्य भरने का प्रयास किया गया है। शब्द योजना को इस प्रकार संवारा गया है कि अनुप्रास छटा आकर्षक हो गई है। जैसे :—जिसिउ चंचल वीज नु झत्कार। जिसिउ चंचल इंद्र धनुष नु आकार। जिसिउ चंचल मन नउ व्यापार। जिम दोहि लउं तिखडु धार ऊपरि चालतां तिसउं दोहिलउं ऐ चारित्र।" जिसउं चंचल ठाकुर नउ अधिकार। जिसउं पीपल नु पान। तिसी चंचल राज्य-लक्ष्मी जाण तुम्ह सरीखा सुविवेकी प्राणी इसिया संसार रूपीया कूआ मांहि काइं पडइ दुर्गति काइं रडवडइं।

....

१—देसाई : जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५८०
२—मुनि विनयसागर संग्रह, कोटा
३—अभय जैन पुस्तकालय कोटा
४—देसाई : जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास पृ० ५१६
५—अभय जैन-पुस्तकालय, बीकानेर। मुनि विनयसागर संग्रह, कोटा
६—प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ : पृ० ६६
७—अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर

२—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

जैन-श्वेताम्बर तपागच्छीय श्री जिनवर्धन की सं० १४८२ में लिखित "गुर्वावली"[1] इस काल की एक मात्र ऐतिहासिक गद्य-रचना है। जैन-साधक-संघ के तपागच्छ आचार्यों की नामावली और उनका वर्णन इसका विषय है। इसमें जैनों के चौवीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामी से सं० १४८२ में होने वाले पचासवें पट्टधर आचार्य श्री सोमसुन्दर सूरि तक के आचार्यों का विवरण है।[2]

ऐतिहासिक महत्व के साथ साथ इस गुर्वावली की भाषा अधिक आकर्षक है। इसमें पद्यानुकारी अर्थात् अन्त्यानुप्रास युक्त गद्य का प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा में प्रवाह, गति एवं रोचकता है। क्रिया पदों की अपेक्षा समास प्रधान पदावली का प्रयोग अधिक किया गया है।

गद्य का उदाहरण—

जिम देव माही इन्द्र, जिम ज्योतिश्चक्र माहि चन्द्र।
जिम वृक्ष माहि कल्पद्रुम, जिम रक्त वस्तु माहि विद्रुम।
जिम नरेन्द्र माहि राम, जिम रूपवन्त माहि काम।
जिम स्त्री माहि रंभा, जिम वादित्र माहि भंभा।
जिम सती माहि सीता, जिम स्मृति माहि गीता।
जिम साहसीक माहि विक्रमादित्य, जिम ग्रहगण माहि आदित्य।
जिम रत्न माहि चिन्तामणि, जिम आभरण माहि चूड़ामणि।
जिम पर्वत माहि मेरु भूधर, जिम गजेन्द्र माहि एरावत सिंधुर।
जिम रस माहि घृत, जिम मधुर वस्तु माहि अमृत।
तिम सांप्रतिकालि सकल गच्छ अन्तरालि।
ज्ञानि, विज्ञानि तपि जपि शमि दमि संयमि करी अतुच्छ,
ए श्री तपोगच्छ, आचंदार्क जयवंतउ वर्त्तइ।

....

१—अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर
२—मोहनलाल दुलीचन्द देसाई : "भारतीय-विद्या" वर्ष १ अङ्क २ पृ० १३३

३—कलात्मक-गद्य-साहित्य

इस काल में लिखित कलात्मक-गद्य-साहित्य की दो महत्वपूर्ण रचनायें मिलती हैं। पहली एक जैन आचार्य की लिखी हुई धर्म कथा है और दूसरी एक चारण कवि की वीर-रसात्मक-गाथा। दोनों वचनिका, शैली में लिखी गई हैं जिसमें गद्य में भी, पद्य की भांति अन्त्यानुप्रास का प्रयोग होता है। यह रचनायें निम्न प्रकार हैं :—

१—पृथ्वीचन्द्र वाग्विलास[1]

इसकी रचना आंचलगच्छीय माणिक्यसुन्दर सूरि[2] ने सं० १४७८ वि० में की थी। यह आचार्य श्री मेरुतुंग के शिष्य थे।[3] श्री जयशेखर सूरि (सं० १४००—१४६२) इनके भाई थे। श्री माणिक्यसुन्दर सूरि के जीवन के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं है। इनकी रचनायें गुणवर्माचरित्र, सत्तरभेदी पूजा कथा, चतुःपर्वी कथा, शुकराज कथा, मलयसुन्दरी कथा, संविभाग व्रत कथा, पृथ्वीचन्द्र चरित्र हैं। इन सब में अंतिम रचना बहुत अधिक महत्व की है। यह राजस्थानी गद्य साहित्य में कलात्मक गद्य का सर्वप्रथम उदाहरण है।

"पृथ्वीचन्द्र-चरित्र" में महाराष्ट्र के पहुठाणपुर पट्टण के राजा पृथ्वीचन्द्र तथा अयोध्या के राजा सोमदेव की पुत्री रत्नमंजरी की प्रणय-कथा है। रत्नमंजरी को प्राप्त करने की दैवी-प्रेरणा पृथ्वीचन्द्र को स्वप्न द्वारा मिलती है। उसके स्वयंवर में वह ससैन्य पहुंचकर वरमाला प्राप्त करता है। इसी समय बैताल माया का प्रसार कर उसे (रत्नमंजरी) ले जाता है। किन्तु अन्त में पृथ्वीचन्द्र देवी की अनुकम्पा एवं सहायता से उसे पुनः प्राप्त करता है।

इस छोटे से कथानक पर विद्वान लेखक ने अपनी रचना को आधारित किया है। देवी और बैताल जैसी अलौकिक शक्तियों की ओर भी

....

१—कस्तूर सागर भंडार, भावनगर : प्राचीन गुजराती-गद्य-संदर्भ में कुछ अंश प्रकाशित।

२—देसाई : जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ६८१, ७०८, ७१५

३—देसाई : जैन गूर्जर-कविओ भाग २ पृ० ७७२

उसका ध्यान गया है। नायक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जैन आचार्य तथा देवी जैसी सात्विक शक्तियों की सहायता से वह सफल होता है। इन कठिनाइयों के तीन प्रमुख स्थल हैं:- १-वन २-संग्राम ३-स्वयंवर। इन तीनों स्थलों पर रुकता हुआ कथानक प्रधान कार्य "रत्न मंजरी की प्राप्ति" की ओर बढ़ जाता है। इस प्रकार धर्मनिष्ठा एवं कष्ट सहिष्णुता से वांछित फल की प्राप्ति होती है। यह इस कृति की रचना का मूल उद्देश्य है।

वस्तु वर्णन इस रचना की विशेषता है जिसमें वस्तु-परिगणन-शैली का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार की शैली प्रायः अरोचक एवं मन को उकता देने वाली होती है। किन्तु माणिक्यसुन्दर ने इन दोनों में से एक भी दोष नहीं आने दिया है। सात द्वीप, सात क्षेत्र, सात नदी, ६ पर्वत, बत्तीस सहस्र देश नगर, राज सभा, नायक, नायिका, वन, सेना, हाथी, घोड़ा, रथ, युद्ध, स्वयंवर, लग्नोत्सव, भोजन-समारम्भ, स्वप्न आदि का विस्तृत विवरण माणिक्यसुन्दर ने दिया है। उदाहरण के लिये वन का चित्र देखिये :—

"मार्ग जातां आवी एकी अटवी। हिव ते किसी परि वर्णविवी। जेह अटवी माहि तमाल, ताल (आदि अनेक वृक्षों की नामावली) प्रमुख वृक्षावली दीसइं, बीहंता सूर्य तणा किरण माहि न पइसइं। अनइ किहांइं सिवा तणा फेत्कार, घूक तणा घूत्कार, व्याघ्र तणा घुरहराट, न लाभई वाट नइ घाट। मांहि वानर परम्परा उछलइं, मदोन्मत्ता गजेन्द्र गुलागलइं। सिंहनाद भयभीत मयगल खलभलइं। जिस्या दवि दाधा खील, तिस्या भील। सूअर घुरकइं चीत्रा बुरकइं। वेताल किलकिलइं, दावानल प्रज्वलइं। रीछ सांचरइं, विरुत्तणा यूथ विचरइं। इसी महा रौद्र अटवी।

ऋतुवर्णन और प्रकृति चित्रण बहुत ही स्वाभाविक एवं रोचक है। ऋतु विशेष में प्रकृति का कैसा शृंगार होता है इसका सूक्ष्म विवेचन यहां पर मिलता है। इससे पूर्व इस प्रकार के प्रकृति-चित्रण के उदाहरण नहीं मिलते। अनुकरणात्मक शब्दों का चयन, रूपक एवं उपमाओं का हृदय-ग्राही प्रयोग इसकी विशेषता है। प्रकृति के सुन्दर शब्द चित्र सजीव एवं आकर्षक बन पाये हैं। उदाहरण के लिए वर्षा और बसंत के चित्र देखे जा सकते हैं। दोनों स्थलों पर अनुकूल शब्दावली के कारण अनुपम दृश्य प्रस्तुत हुए हैं।

वर्षा–

"......................विस्तारिउ वर्षाकाल जे पंथी तणउ दुकाल आविउ वर्षाकालि। मधुर-ध्वनि मेघ गाजइ, दुर्भिक्ष तणा भय भाजइं, जाणे सुभिक्ष भूपति आवतां जयढक्का बाजइ। चहुँ दिशि बीज भलहलइ, पंथी गरमणी पुलइ। विरीत आकाश, सूर्य चन्द्र परिपास राति अंधारी लवइं तिमिरी। उत्तरनउ ऊनयण, छायउ गयण। दिसि घोर, नाचइं मोर। सधर वरसइं धराधर। पाणीतणा प्रवाह खलहलइं, वाडि ऊपर वेल वलइं। चीखलि चालतां शकट स्खलइं, लोक तणा मन धर्म ऊपरि वलइं। नदी महापूरि आवइं, पृथ्वी पीठ प्लावइं। नवां किसलय गहगहइं, वल्ली वितान लहलहइं। कुटुम्बी लोक माचइं। महात्मा बइठा पुस्तक वांचइं। पर्वतउ नीझरण विछूटइं, भरिया सरोवर फूटइं......................"

वसंत–

महरिया सहकार, चंपक उदार बेउल बकुल, भ्रमर संकुल कलरव करइं कोकिल तणा कुल। प्रवर प्रियंगु पाडर निर्झर जल विकसित कमल। राता पलास, सेवंभी वास। कुंद मुचकुंद महमहइं नाग पुन्नाग गहगहइं। सारस तणी श्रेणिदिसि वासीइं कुसुम रेणि लोक तणे हाथि वीणा वस्त्राडम्बर झीणा। धवल शृंगार सार मुक्ताफल तणा हार। सर्वांग सुन्दर, वन माहि रमइं भोग पुरंदर हिंडोलइं हीचइं, भीलतां वादिइं, जलिइं सींचइं।

भाषा की दृष्टि से इस ग्रंथ का महत्व बहुत अधिक है। सम्पूर्ण रचना में अनुप्रासान्त-पदावली का प्रयोग किया गया है। राजस्थानी भाषा की कोमलता एवं मोहारिता के उदाहरण इस ग्रंथ में देखे जा सकते हैं। यह ग्रंथ राजस्थानी का सबसे पहला साहित्यिक रूप है। अनुप्रासान्त-शब्दावली का उदाहरण निम्नलिखित है :—

"उद्धमंताणं शंखाणं संगीपाणं खरमुहीयाणं, अहम्मंताणं पणवाणं पडहाणं अफालिज्जंताणं भंभाणं, झलरीणं दुंदुभीणं अलिप्पंताणं मुखाणं मुक्तिगाणं नदीमुक्तिगाणं"

इस प्रकार के उदाहरण इस कृति में कई जगह मिलते हैं।

सम्पूर्ण कथा का दृष्टिकोण धार्मिक है। धार्मिक-शिक्षा के उद्देश्य से ही इसकी रचना हुई है। सदुपदेश एवं चरित्र-निर्माण इसका आधार

हैं। पाप और पुण्य की मीमांसा की गई है। धार्मिक गद्य का उदाहरण देखिये :—

"अहो भव्य जीव। ए इस्यां धर्मनां फल जाणिवां। कवण कवण पहिलुं तां उत्तमकुलि अवतार, ए धर्म तणां फल सार। जइ जीव नीच कुलि अवतरइ, तु किसउं पुण्य करइ। एह विश्व मांहो एक माछी तणा कुल, भील तणा कुल, कोली तणा कुल। ईसि परि थोहरी आहेडी वागुरी खाटकी पचप घांची चोर वैश्या वाकरी मेय डुंब पाणपेरणीयां तणां पाप तणां कुल जाणिवां।"

अचलदास खीची री वचनिका[1]

इस वचनिका के रचयिता श्री शिवदास हैं। यह जाति के चारण थे। गागरोण (कोटा राज्य के अन्तर्गत) के राजा अचलदास खीची इनके आश्रय दाता थे। इनके जीवन वृत्त के विषय में इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता।

इस वचनिका में शिवदास ने अपने आश्रयदाता अचलदास खीची के यश का चित्रण किया है। मांडू के मुसलमान शासक ने गागरोण पर घेरा डाला। अचलदास अपनी राजपूत मर्यादा के अनुसार उसके आगे सिर नहीं झुका सके। उससे लोहा लेने के लिए उन्होंने अपने किले के द्वार बन्द करवा दिये। इसके उपरान्त दोनों में घोर युद्ध हुआ जिसमें अचलदास वीर गति को प्राप्त हुये। अन्य राजपूत सरदारों ने जौहर किया। शिवदास चारण भी युद्ध के मैदान में उपस्थित थे किन्तु राजकुमारों की सुरक्षा के लिये जीवित रहकर वे अपने राजा को काव्य रचना के द्वारा अमर कर सकें इस उद्देश्य से वे जौहर में सम्मिलित नहीं हुए। उन्होंने सम्पूर्ण युद्ध को अपनी आंखों से देखा तथा अपने आश्रयदाता को अमर करने के लिए यह रचना की।[2] इस वचनिका का रचनाकाल निश्चित रूप से निर्धारित नहीं किया जा सकता, पर इतना निश्चित है कि इसकी

....

१—ह० प्र० अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर, में विद्यमान

२—Tesitoni:—A Description catalogue of Bardic and Historical Msc. Sect. II

—Bardic Poetry : pt. I Bikaner State Page 41

रचना उक्त युद्ध के समकालीन ही है। इस युद्ध का समय श्री टैसीटोरी एवं टाड संवत् १४७५ वि० मानते हैं।[1] श्री मोतीलाल के अनुसार यह समय सं० १४८५ है।[2] इस प्रकार यह निर्णय किया जा सकता है कि यह पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की रचना है।

इस कृति का कथानक ऐतिहासिक है किन्तु काव्य होने के कारण कल्पना एवं अतिरंजना को भी स्थान मिला है। इस सम्पूर्ण वचनिका के दो प्रधान विषय हैं १—युद्ध और २—जौहर

युद्ध वर्णन में युद्ध के पहले युद्ध की तैयारियों का वर्णन किया गया है। प्रबल शत्रु से लोहा लेने में ही वीरता का आदर्श है इसी लिए शिवदास चारण ने मांडू के बादशाह की सेना का चित्रण पहले किया है—

"इसउ हिन्दु राजा उपकंठि कउण अइ जिकइ मनि पातिसाह की रीस वसी, कउण का माथा-तइं खिसी। कउण सइ दई रूठउ, कउण की माई विधाणी, जू सामउ रहइ अणी पाणी। .. ..अउर पातिसाह हुआ आला आगिलेरा, अर भलभलेरा, त्यां तउ चउरासी द्रुग लिया था दिहाड़इ पाडइ। यउ तउ सुरताण दूसरउ अलाउद्दीन जिणी चउरासी द्रुग लिया था एकइ दिहाड़इ।"

"तेणि पातिसाह आयां। सांचरि कुण महइ, कुण सहिजइ,

....

1—The event happened during the earliar half of the fifteen the centuary A. D as indirectly brought out by the existing tradition that Achal Das had married a daughter of Rana Mokala of Citora and that the latter was assassinated whilst marching to the aid of his son-in law on the occasion of the siege mentioned above.

The date of the assassination of Mokala is given by Coitol as sammuat 1475

Vacanika Ratan Singh Rathorari Mahesdasutari Khiriya Jaga ri kahi.

Introduction p VI.

2—मोतीलाल मेनारिया : राजस्थानी भाषा और साहित्य पृ० १००.

कुण की कुक्ति, कुण की प्रसति, कुण की माइ विआयी जू सामउ रहइ अणी पाणी।"

इसके उपरान्त अपने आश्रयदाता का महत्व शिवदास ने बतलाया है।

अचलेसवर तउ किसउ, उत्तर दक्खिन पूरब पच्छिम कउ भड़ किवाड़ आहन्या अजयपाल। अहंकारि रावण दूसरउ धारउ। तीसरउ सिंघण छइ वरसण छाया सावइ पाखंड कउ आधार बालउ चकरवति। धन धन, हो राजा अचलेसर। थारउ जियउ जिणि हइ पातसाह सउं खांडउ लियउ।

गौरी की सेना का गागरोण पर आक्रमण, खीची द्वारा उसका उत्तर, चतुरंगिणी-सेना का भिड़ना, तोपों की गड़गड़ाहट, रणभेरी का नाद आदि सभी मिलकर मानसिक चक्षुओं के सामने युद्ध का जीवित चित्र प्रस्तुत करते हैं। शैली में कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाई है। युद्ध की एक झलक देखिये:—

"एक घायल घुलै घूमै लड़ै लड़थड़ै जाणक मतवालो मतवाले मिलै। जाणक वसंतरित केसू फूल्या। रात-दिवस दीसै समान। मुहरत दिया, गढ़ि ढोवा किया। तीन लाख भड़ आया। इसा, मीरी आंख मुख माकड़ जिसा। करै घात बोले पारसो, बगतर तरा झिवै जाणै आरसी। कबाणां कुजां जिम कुरवरिया, बी लाख मेहाजिम ओसरिया। काली निहाव, गोला बुहाव। गढ़ सिखर उड़ी, कायरां रा जीव तुड़ी। सूरां अछरंग जोध चो जंग। गड़डिमल भुरज गंगाहिड, चतुरंगणि बंका चंगा चाहड। आडा अचल तणी अणियाला पनरै सहस जोध पौचाला। सौह संग्राम का समरा, अणी का भमरा। गाहडि का गाडा, फौजां का लाडा। चाचरली का वींद, नरां का नरींद। चौइस आखडी चालण, सुनौ राव ताल्हण। महाराज मांगियौ सो पायो। बाचा बंधो सुरताण पातसाह आयो। रावजी खत्री धरम रो क्रितारथ कीजै, लंका प्रमाण गढ़ि गागुरण लीजै। मीर मुगल साके आण धमधमो उठायो, गढ़ि प्रमाण मोरचो बणायो। धारा पनडा बखड़ा जजड़ा, पमाय तेल ले हाम पड्या। इग्यारै हजार नर खत्रहाण. हिन्दू मुसलमाण। राव ताल्हण हूँ गढ़ मौरचै लडे तो सुरा सोहड़ां समवडै। जो हूँ गढ़ पोलयां मरूं, तो च्यार जुगां लग उबरूं। उबरै सो उबरो मरै सो मरो। गढ़ खवै अधारो, राव ताल्हण पधारो।"

इस गद्यांश में तुकांत प्रौढ़ गद्य की छटा दिखाई दे रही है। वाक्य छोटे छोटे हैं। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक अभिव्यंजना का संभार है।

साधारण विवरणात्मक स्थलों पर गद्य प्रवाह-प्रधान हो गया है ऐसे स्थलों पर शिवदास ने शब्दों के द्वारा नक्काशी करना छोड़ दिया है। जैसे—

"तितरइ तउ वात कहतां वार लागइ अस्त्री जन सहस चालीस-कउ संघाट आइ संप्राप्तो हुवइ बाली-भोली अबला, प्रौढ़ा षोडस बरस की राणी क्षत्राणी आपणा आपणा देवर जेठ भरतार का पुरसारथ देखती फिरइ छई।"

जहां इस प्रकार का सीधा सादा गद्य प्रयुक्त हुआ है वहां लेखक अपनी कला प्रदर्शन में नहीं उलझा है। जहां उसने अपनी कला का प्रदर्शन करना चाहा वहां वह रुका है और रुक कर अपने कलाकार होने का पूर्ण परिचय दिया है।

उक्त वचनिका चारणी गद्य का सबसे पहला उदाहरण है इसकी शैली की प्रौढ़ता को देखते हुए अनुमान लगाया जा सकता है कि पंद्रहवीं शताब्दी में इस प्रकार का गद्य-लेखन हुआ होगा। किन्तु अभी तक उसके उदाहरण नहीं मिल पाये हैं।

जैन वचनिका

सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जैन आचार्यों ने भी वचनिका के प्रयोग किए। ऐसी दो वचनिकायें मिली हैं—१-जिन समुद्रसूरि की वचनिका २-शान्तिसागर सूरि की वचनिका।[1]

प्रथम वचनिका में रावसातल के वंश का वर्णन है जिसने जैसलमेर स्थित खरतरगच्छाचार्य श्री जिन समुद्र सूरि को सम्मान पूर्वक अपनी राजधानी में आमंत्रित किया। सं० १५४८ के वैसाख मास में आचार्य श्री जोधपुर पधारे थे। इस वचनिका का वर्ण्य विषय इस प्रकार है :—

१—राव सातल द्वारा खरतरगच्छाचार्य श्री जिन समुद्रसूरि को आमंत्रित किया जाना।

२—राव सातल का यश-वैभव का वर्णन।

३—आचार्य का नगर प्रवेश, उनका स्वागत और उत्सव।

१—यह दोनों वचनिकायें "राजस्थानी" भाग २ पृ० ७७ में प्रकाशित हो चुकी है।

दूसरी वचनिका खरतरगच्छाचार्य श्री शान्तिसागर सूरि से संबन्धित है। ये खरतरगच्छ की आद्य पक्षीय शाखा के प्रमुख आचार्य थे। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आप विद्यमान थे। सं० १५५६ वि० में श्री जिनहंससूरि को तथा सं० १५६६ में श्री जिनदेव सूरि को आपने आचार्य पद प्रदान किया था।

प्रस्तुत वचनिका का वर्ण्य विषय इस प्रकार है —

१—खरतरगच्छाचार्य श्री शान्तिसागर-सूरि का यश वर्णन

२—राव जोधा के पुत्र श्री सूर्यमल के वैभव का दिग्दर्शन

३—रिणमल के पुत्र कर्णराव द्वारा आचार्य को मेड़ता बुलाया जाना स्वागत समारोह तथा उत्सव।

४—जोधपुर में श्री जिणराज ठाकुर द्वारा उनका प्रवेशोत्सव

५—जोधपुर में आचार्य का चातुर्मास

यह दोनों वचनिकायें अन्त्यानुप्रास-प्रधान गद्य में लिखी हुई हैं। श्लोक संस्कृत में हैं। दोनों रचनाओं के लेखकों का नाम ज्ञात नहीं है। जैन-गद्य-साहित्य में वचनिका-शैली के यह प्रथम प्रयोग हैं।

गद्य के उदाहरण—

१—मोटइ माहस कीधउ, बड़उ पवाडउ पसीधउ, बंदी छोड़ावी तउ, इग्यारस तणउ पारणउ कीधउ। किन दातार रिण झूझार। वाचा अविचल, कोट कटक धन सबल। घूहड़िया माल जगमाल वीरम चउंडा रिणमल कुलमंडण, श्री योधराणां नंदण। ...... प्रतापी प्रचंड। आण अखंड। राजाधिराज, सारइ सर्व काज। —जिन समुद्रसूरि की वचनिका

२—"इसी परि श्री कर्ण दूदा आगलि गाइ हरखित थाई रूदि बुद्धि उपाई कहवा लागउ लाई, अम्हे तांहरा ज खाई, राखि अम्हां-सउं सगाई। अचरज उरही आपि, रिस-वर म संतापि, अम्ह कइ मोटा कर थापि, सकल श्रावक नी आरित कापि।" —शान्तिसागर सूरि की वचनिका

४—व्याकरण गद्य

इस काल में व्याकरण ग्रंथ लिखे गये जिनमें तीन अभी तक उपलब्ध हो सके हैं—१—कुलमंडन कृत "मुग्धावबोध औक्तिक" (लेखन

समय सं० १४५०) २–श्री सोमप्रभ सूरि कृत "औक्तिक" ३–श्री तिलक कृत "उक्ति संग्रह"।

१–मुग्धावबोध औक्तिक[1]–

श्री कुलमंडन सूरि तपागच्छ श्री देवसुन्दर सूरि के शिष्य थे। इनका जन्म सं० १४०६ में, व्रत ग्रहण सं० १४१७ में, सूरि पद सं० १४४२ तथा स्वर्गवास सं० १४५५ में हुआ।[2] इनकी रचनाओं में "मुग्धावबोध औक्तिक" अधिक प्रसिद्ध हैं इसमें राजस्थानी के माध्यम से संस्कृत व्याकरण को समझाने का प्रयत्न किया गया है। इस काल की भाषा के स्वरूप को समझने के लिए इससे अधिक सहायता मिलती है।

संग्रामसिंह के "बाल शिक्षा" (सं० १३३६) के उपरान्त यह राजस्थानी का महत्वपूर्ण व्याकरण-ग्रंथ है। इसमें "बाल-शिक्षा" की अपेक्षा अधिक विस्तार एवं विवेचना के साथ व्याख्या की गई है।

गद्य का उदाहरण–

छ कारक, सातमउ सम्बन्धु, कर्त्ता, कर्मु, करणु, सम्प्रदानु, अपादानु, अधिकरणु, सम्बन्धु। जु करइ सु कर्ता, ज कीजइ तं कर्मु। जीणकरी क्रिया कीजइ तं करणु। येह देवतणी वांछा, ये रूपइ कांइ। धरीइ कांइ तं कारकु सम्प्रदान संज्ञकु हुइ। जेह तउ आपाय विश्लेषु हुइ, जेह तउ भय हुइ, जेह तउ आदान ग्रहणु हुइ तं कारकु अपादान संज्ञकु हुइ। जेह कन्हइ, जेह माझि, जेह पास, जेह तणउ, जेह तणी, जेह तणउ जेह रहीं इत्यार्थे सम्बन्धु। गामि, पलइ, क्षेत्रि, वनि, पर्वति माझि बाहरि इत्यार्थे अधिकरणु।

२–औक्तिक–

इसके रचयिता भट्टारक श्री सोमप्रभ सूरि तपागच्छीय जैनाचार्य थे। स्वर्गीय देसाई ने इनका जन्म सं० १३१०, दीक्षा ग्रहण सं० १३२१, सूरि पद प्राप्ति सं० १३३२ और स्वर्गवास सं० १३७३ में माना है।[3] किन्तु

१—प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ पृ० १७२
२—जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० १४०, ६५२, ६५३
३—देसाई : जैन गूर्जर कविओ भाग २ पृ० ७१७

इनका व्याकरण ग्रंथ "औक्तिक" पंद्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की रचना है[1] अतः इनका समय पंद्रहवीं शताब्दी ही सिद्ध होता है।

गद्य का उदाहरण–

"एउ करइ तउ करइ लेइ इत्यादि इउ करउ लिउ दिउ इत्यादि तथा करावइ लिखावइ यथा लभाउइ लंभयति संपादयति उतारउ उत्तारयति इउ कीजइ तीण कीजइ यथा देवदत्ति मइ हुइ अइ सुइ अइ यथा सेहि आवश्यकु पढिउ, ऐउ सवेहि राजि जाणीइ तथा करतउ लेतउ दंतउ इत्यादि तथा गुरि अणु जाणिउ चेलु व्याकरण पढ़त............।"

३–उक्ति संग्रह–

इस व्याकरण ग्रंथ के लेखक श्री तिलक, देवभद्र के शिष्य थे। इनका उक्ति संग्रह उक्त दोनों व्याकरणों से मिलता जुलता है श्री तिलक के विषय में और अधिक ज्ञात नहीं है।

उपाध्यायु मइ पढावइ, दवदत्ति मयि पाणिउ पावइ। पापियउ सांपु मारइ।..................देवदत्तु पढीयइ, दवदत्त करइ।

४–वैज्ञानिक-गद्य :

वैज्ञानिक गद्य की दो रचनायें इस काल में प्राप्त होती हैं। इन दोनों का विषय गणित से सम्बन्धित है। १–गणित सार[2] २–गणित पंचविंशतिका बालावबोध।[3]

१–गणित सार :–

इसकी रचना मूल रूप में श्री राजकीर्ति मिश्र ने सं० १४४६ में अणहिलपुर में की। श्रीधर नामक ज्योतिषाचार्य ने इस संस्कृत कृति का

....

१—श्री डी० सी० दलाल : पांचवीं गुजराती साहित्य परिषद की रिपोर्ट पृ० ३६

२—श्री भोगीलाल ज० सांडेसरानो : १२ वें गुजराती साहित्य सम्मेलन की रिपोर्ट, इतिहास विभाग पृ० ३६-३६।

३—हस्तप्रति अभय जैन पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

राजस्थानी में अनुवाद किया। अनुवादक एवं मूल लेखक का परिचय नहीं मिलता। इस छोटी सी रचना में मध्यकाल में गुजरात में व्यवहृत नाप तौल के उपकरण एवं सिक्कों का उल्लेख महत्वपूर्ण है।

गद्य का उदाहरण–

"किसु श्रु परमेश्वरु, कैलाश शिषरु मंडनु, पारवती हृदय रमणु, विश्वनाथु। जिणं विश्व नीपजाविउं तसु नमस्कारु करीउ। बालावबोधनार्थु, बाल भणीहि अज्ञान तीहं अवबोध जाणिआ तणउ अर्थि, आत्मीय यशोवृद्धयर्थु श्रीधराचार्यु गणितु प्रकटीकृतु।"

२–गणित पंचविंशतिका बालावबोध–

यह इसी नाम के संस्कृत ग्रंथ की टीका है। इसकी रचना शंभूदास मन्त्री ने सं० १४७५ में की थी। टीका के साथ साथ संस्कृत श्लोक भी इसमें दिये हुए हैं।

गद्य का उदाहरण–

"मकर संक्रांति थकी घस्न जाणि दिन एकत्र करी त्रिगुणा कीजइ। पछइ पनरसइत्रीसां मांहि घातीइ अनइ साठिं भाग दीजइ दिनमान लाभइ।"

विकास काल की इन दो शताब्दियों में राजस्थानी गद्य की रूपरेखा ही बदल गई। अब उसका मार्ग निश्चित हो गया। चौदहवीं शताब्दी में केवल स्फुट टिप्पणियां लिखी गई थीं किन्तु पंद्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही राजस्थानी गद्य में ग्रंथ निर्माण की योजना होने लगी। जैन आचार्यों ने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व से इस कार्य में सक्रिय सहयोग दिया।

गद्य के विकास की तीन दिशायें इस काल में मिलती हैं—१–भाषा के क्षेत्र में २-शैली के क्षेत्र में ३–विषय के क्षेत्र में।

प्रयास काल की भाषा, स्वाभाविक रूप से, घुटनों चलते हुए बालक की भांति थी जो उठने के प्रयास में कई बार गिरता है। इतने ही उत्थान पतन इस काल की भाषा में हुए और अन्त में वह अपने पैरों पर खड़ी हो गई। शब्द-चयन और वाक्य-विन्यास में आशातीत सुधार हुआ इससे भाषा में प्रवाह एवं रोचकता आई।

टिप्पणी शैली का इस काल में में सर्वथा अभाव मिलता है। बालावबोध की टीकात्मक शैली अधिक अपनाई गई। इस शैली की दो प्रमुख विशेषतायें हैं :— १-सरल से सरल भाषा में अधिक से अधिक विचारों की अभिव्यंजना करना २-दृष्टान्त रूप में कथाओं का प्रयोग इसके अतिरिक्त चारणी गद्य की वचनिका शैली, व्याकरण शैली एवं ऐतिहासिक विवरणात्मक-शैली के प्रयोग हुए।

विषय के क्षेत्र में भी क्रान्ति हुई। जैन धार्मिक गद्य के अतिरिक्त चारणी ऐतिहासिक गणित तथा व्याकरण सम्बन्धी विषयों पर भी गद्य लिखा गया। चरित्र चित्रण, प्रकृति वर्णन, युद्ध की तैयारियां और युद्ध, विवाह प्रेम आदि कई पक्षों में प्रौढ़ गद्य का प्रयोग हुआ। इस प्रकार विषय में विस्तार एवं विषय में अनेक रूपता आई।



चतुर्थ–प्रकरण

विकसित - काल

१६०० से १६५० तक

राजस्थानी गद्य का विकास २

विकसित काल

राजनैतिक-क्षेत्र में इस समय तक शान्ति हो गई थी। मुसलमान शासक अपनी हिन्दू जनता को प्रसन्न रखने का प्रयास करने लगे थे। अब सामन्त-काल का संघर्ष समाप्त प्रायः हो चुका था। हिन्दू-मुसलमानों के सामाजिक संपर्क से दोनों संस्कृतियों में आदान-प्रदान के भाव जागृत हो रहे थे। लोक-मानस भक्ति की ओर झुक रहा था।

इस प्रकार के अनुकूल वातावरण मे राजस्थानी गद्य का विकास भी हुआ। प्राय सभी विषयों के लिये इसका प्रयोग किया गया। पिछले काल मे जिन पाच धाराओं में गद्य का प्रवाह बह चला था अब वे धाराएँ गहरी और विस्तृत हो चलीं।

१—ऐतिहासिक-गद्य-साहित्य

सत्रहवीं शताब्दी के पूर्व का राजस्थानी ऐतिहासिक-गद्य बहुत ही कम मिलता है। केवल जैनों ने इस विषय पर लिखने का प्रयास किया था पर वह परिपाटी नहीं चल सकी। सत्रहवीं शताब्दी के उपरान्त ऐतिहासिक गद्य लिखा गया और बहुत लिखा गया। इसके दो विभाग किए जा सकते हैं १—जैन ऐतिहासिक-गद्य २—जैनेतर ऐतिहासिक गद्य। जैनेतर रचनाओं का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण ऐतिहासिक बाते तथा ख्यात-साहित्य है। जैन-ऐतिहासिक-गद्य का क्षेत्र भी इस काल में विस्तृत हुआ।

१—जैन-ऐतिहासिक-गद्य-

जैन ऐतिहासिक-गद्य ५ रूपों में प्राप्त है १—वंशावली २—पट्टावली ३ ऐतिहासिक टिप्पण ४—दफ्तर बही (डायरी) ५—उत्पत्ति ग्रन्थ।

वंशावली :—

मनुष्य की जीवित रहने प्रवृति स्वाभाविक होती है। उसका जीवन सीमित होने हुए भी वह उसे असीम बनाना चाहता है। इसकी तुष्टि वह दो प्रकार से करता है, पहली सतान रूप में दूसरी इतिहास रूप में। स्वयं

मर्त्य होकर भी वह संतान या वंश परम्परा के रूप में अनन्त काल तक जीवित रहने का अभिलाषी रहता है। इसीलिये सन्तान काम्य होती है। इतिहास-प्रसिद्ध होने के लिए वह असाधारण कार्य करता है। इन दोनों का एक समन्वित रूप भी है। जिसका उदाहरण "वंशावली" में मिलता है। अन्य जातियों की भांति जैनियों में भी प्राचीनकाल से वंश-विवरण लिखा जाता रहा है, कुलगुरु और भाट इस कार्य को करते रहे हैं। पीढ़ियों के नामों के साथ-साथ प्रत्येक पीढ़ी का संक्षिप्त इतिहास इनमें दिया जाता है। आज भी यह परम्परा अवरुद्ध नहीं हो पाई है। जैन श्रावकों की कई वंशावलियां आज इन लेखकों के पास प्राप्त हो सकती हैं। इन वंशावलियों के प्रमुख विषय निम्नांकित होते हैं :—

१—श्रावकों के वंशों और पुरुषों के नाम तथा विवरण और उनके महत्वपूर्ण कार्य।
२—कौन वंश कहां से कहां फैला।
३—वंशों की महत्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख
४—कहीं कहीं वंशजों की विस्तृत नामावली
५—वंशजों के स्थान का पूर्ण पता आदि

"ओसवाल वंशावली"[1] "मुहतां बछावतां री वंशावली"[2] "श्रीमाल-वंशावली"[3] ये तीन वंशावलियां उदाहरण के लिये देखी जा सकती हैं। इन वंशावलियों में बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया जाता है—

गद्य का उदाहरण—

"करमचन्द सांगावत रो प्र० बेटा २ भागचन्द १ लखमी चन्दर, भागचन्द रो बेटा १ मनोहरदास १ राजा सूरजसिंघ मुहतां ऊपरि कोपियो तिवारे फौज विदा कीधी, माणस १००० मेली साथ घर दोलो फिरीयो। भागचन्द पौढीया था, लखमीचन्द अनै मनोहरदास दरबार गया था। भागचन्द जी सूता जागीया तिवारे बहू मेवाड़ी जी मालिम कीयो राज ऊपरि फौज आई।— —मुहता बछावतां री वंशावली

... .

१—अ० जै० पुस्तकालय, बीकानेर में प्राप्त
२—अ० जै० पु०, बीकानेर में प्राप्त
३—अ—जैनाचार्य श्री आत्मानन्द जन्म शताब्दी स्मारक ग्रंथ पृ० २०४
आ—आत्माराम शताब्दी-ग्रंथ इ—जैन-साहित्य-संशोधक वर्ष १ अंक ४
४—युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि

पट्टावली–

पट्टावली लिखने की परिपाटी भी प्राचीन है। संस्कृत एवं प्राकृत में भी उनके लिखने की प्रथा प्रचलित थी। अतः कालान्तर में भाषा (राजस्थानी) में भी ये लिखी जाने लगी। इनके विषय निम्नलिखित हैं—

१—गच्छोत्पत्ति का वर्णन
२—एक गच्छ से निकले अनेक उपगच्छ तथा उनकी साखा प्रशाखाओं का उल्लेख
३—विविध गच्छों के पट्टधर आचार्यों के जन्म, दीक्षा, आचार्य पद-प्राप्ति एवं मृत्यु आदि के संवत्
४—उनके द्वारा किये गये विहारों का वर्णन
५—उनके प्रमुख शिष्यों एवं उनके द्वारा लिखे गये ग्रंथों का विवरण
६—उनके चमत्कारों का उल्लेख
७—उनके समय के प्रमुख श्रावक, उनके द्वारा किये गये धार्मिक-उत्सव आदि।

इन पट्टावलियों का ऐतिहासिक महत्व है। जिन आचार्यों के जीवन-काल में इनका निर्माण होता था उन तक का पूर्ण विवरण इनमें मिल जाता है। इसके साथ साथ आनुषंगिक रूप से तत्कालीन इतिहास की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं पर भी इनके द्वारा प्रकाश पड़ता है। प्राचीन इतिहास की अनेक गुत्थियों को सुलझाने में ये पट्टावलियां सहायक हो सकती हैं।

ये सभी पट्टावलियां प्राय एक ही शैली में लिखी गई हैं। इनमें कुछ बहुत संक्षिप्त हैं और कुछ बहुत विस्तृत। एक ही गच्छ की एक से अधिक पट्टावलियां मिलती हैं जिनमें प्रायः एकसा ही विषय रहता है।

उदाहरण के लिये विस्तार से लिखी गई ४ पट्टावलियों को लिया जा सकता है १–कडुआ मत पट्टावली[1] २–नागौरी लुंकागच्छीय पट्टावली[2] ३–वेगड़गच्छ (खरतर) पट्टावली[3] ४–पिप्पलक शाखा पट्टावली।[4]

१—अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर
२—वही :
३—वही :
४—वही :

इनमें प्रथम पट्टावली सबसे प्राचीन है। इसकी रचना सं० १६८५ में हुई। इसमें कडुआ मत गच्छ के आचार्यों का विवरण है। प्रारम्भ में युग प्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि को नमस्कार किया गया है। दूसरी में नागौरी लुंकागच्छ के पट्टधर आचार्यों का इतिहास है। तीसरी पट्टावली में सं० १८८१ तक होने वाले ६७ जैन आचार्यों का उल्लेख है। अन्तिम आचार्य श्री जिन उदयसूरि हैं। चौथी रचना गुब्बर ग्राम वासी गौतम गोत्रीय वसुभूति ब्राह्मण से प्रारम्भ होती है इसका रचना काल संवत् १८६२ है।

इन पट्टावलियों का गद्य वंशावलियों के गद्य की भांति जन-प्रचलित-भाषा का उदाहरण है।

गद्य का उदाहरण–

१—"परम गुण निधेय एकोन पंचाशत्तम पद धारिणे श्री जिनचन्द्र-सूरिये नमः। कडुआमनी नाग गच्छनी वार्ता पेठी बद्ध यथा श्रुत लिखीइ छइ। तंबोलाइ ग्रामे नागर ज्ञातीय वृद्ध शाखायां महं श्री ५ कान्हजी भार्या बाई कनकादे सं० १४६५ वर्षे पुत्र प्रसूतः नामतः महं कडूआ बाल्यतः प्रज्ञावान् स्तोक दिने भाई प्रमुख सूत्रां भणी चतुरपणइ आठमा वर्ष थी हरिहर ना पद गंध अरइ केत-लइकि दिनान्तर पल्लत्रिक श्राद्ध मिल्यो।"

—कडूआ मत पट्टावली सं० १६८५

२—"तत्पट्टे श्री शिवचन्द सूरि सं० १५२६ हुआ तिके शिथिलाचारी स्थान पकड़ी ने बैसी रह्या। साधु रा व्यवहार मात्र सुं रहित हुवा। सूत्र सिद्धान्त बांचे नहीं, रास भास बांचण में लागा। ते एकदा अकस्मात शूल रोगै करी मृत्यु पाम्यो। तिणा रे शिष्य केवलचन्द जी १, माणकचन्द जी २, दोय हुआ। तिणा माहे देवचन्द जी तो व्यसनी भांग अमल जरदो खावै। . ...अर माणकचन्द जी जती रो आचार व्यवहार राखे।"

—नागौरी लुंकागच्छीय पट्टावली

३—"... ... . तत्पट्टे श्री जिनपद्म सूरि सं० १३९० वर्षे श्री देरावरै पट्टाभिषेक बाला धवल सरस्वती वरलब्ध महाप्रधान थया।

तत्पट्टे श्री जिनलब्धि सूरि सं० १४०० वर्षे आसाढ़ वदि ६ दिने पट्टाभिषेक थया। तत्पट्टे श्री जिनचन्द्र सूरि सं० १४०६ वर्षे माह सुदी १० दिने पट्टाभिषेक थया।"

—बेगड़गच्छ पट्टावली

४—तिवारपछइ वाछिग बाहड़देवि नन्दन। सं० ११३२ जन्म, सं० ११४१ दीक्षा, सं० ११६६ वैशाख वदि ६ दिनि श्री देवभद्राचार्य सूरिपद दीधउ। एहवा श्री जिनदत्तसूरि ज्योतिर्बल सम्पन्न विक्रमपुरी नगरि मारी निवर्त्तावी ५०० शिष्य दीक्षा दायक।

—पिप्पलक शाखा पट्टावली सं० १८६२

पट्टावलियां ख्यालों की अपेक्षा अधिक ऐतिहासिक हैं। कहीं कहीं आचार्यों के प्रभुत्व एवं चमत्कार को दिखाने के लिए अभौतिक एवं अलौकिक तत्वों का समावेश अवश्य मिलता है। इनको निकाल देने से यह शुद्ध इतिहास का अंग मानी जा सकती हैं।

३—दफतर बही (डायरी)

स्मृति-संचय के रूप में लिखी गई कुछ बहियां ऐसी भी मिलतीं हैं जिनमें रोजनामचे की भांति दैनिक व्यापार का संग्रह रहता है। इनमें विषय या घटनाक्रम नहीं होता। यह डायरी - शैली में लिखी गई हैं। इस प्रकार की बहियां सामयिक उपयोगिता रखने के कारण अधिकांश रद्दी की टोकरी में डाल दी गई। उदाहरण के लिए अभय-जैन-पुस्तकालय में विद्यमान एक १२ पत्र की दफतर बही ली जा सकती है। इसमें सं० १७६१ से सं० १६०४ तक विभिन्न समयों में विभिन्न व्यक्तियों द्वारा लिखी गई घटनाओं का उल्लेख है। जैसेः—

'संवत् १८०६ वर्षे फाल्गुन वदि ११ इष्ट घट्य ११।२५ तदा गुलाल चंद रै शिष्य विजयचंद री दीक्षाः दीक्षा रौ ग्रंथ रामचन्द्र चंद्रिका भंडार दाखल कीधों।"

४—ऐतिहासिक टिप्पण

जैन विद्वानों द्वारा संग्रहीत ऐतिहासिक टिप्पणियों के संग्रह भी मिलते हैं। इनमें प्रकीर्णक ऐतिहासिक बातों का संग्रह होता है। ये संग्रह बांकीदास की ख्यात की शैली के हैं। उदाहरण के लिए आचार्य जिनहरिसागर सूरि के शास्त्र-संग्रह में एक पुराने गुटके[1] में संग्रहीत

....

१—गुटका मुनि विनयसागर भंडार, कोटा में विद्यमान

टिप्पण को लीजिए। इसके मुख्य विषय इस प्रकार हैं :—

१—पुराने शहरों की स्थापना का समय निर्देशन ।
२—राठोड़ों से पूर्व मारवाड़ के प्रादेशिक भूमिपति ।
३—नवकोट मारवाड़ का भौगोलिक परिचय ।
४—राजपूतों की भिन्न भिन्न शाखाओं की नामावली ।
५—उदयपुर के राज-वंश की सूची इत्यादि

गद्य का उदाहरण—

"सं० १६१४ चैत वदि ६ निवाब कासम खान जैतारण मारी राठौड़ रतनसिंघ खींवावत काम आयो। कोट मांहि छतरी छै। कोट तो ऊदा सूजावत करायो छै"

५—उत्पत्ति-ग्रंथ

१—अंचलमतोत्पत्ति[1] २—रिषमतोत्पत्ति[2] इन दोनों उत्पत्ति ग्रंथों में मत विशेष की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है। मत की उत्पत्ति किस समय हुई, कौन उसके आदि प्रवर्तक थे, उससे पूर्व वह मत किस अवस्था में था आदि का उल्लेख इन ग्रंथों में है।



१—हस्त प्रति अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान
२—हस्त प्रति अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

१ जैनेतर-ऐतिहासिक-गद्य

ख्यात-साहित्य

"ख्यात" का आरम्भिक रूप--

"ख्यात" वंशावली का विकसित रूप है। वंशावली लिखने की परम्परा पौराणिक काल से मिलती है।[1] यह परम्परा आज भी उसी प्रकार चली आती है। जब से पश्चिमी भारत में राजपूत-शक्ति का उदय हुआ, प्रशस्ति-लेखन के रूप में यह परिपाटी चलती रही। ईसा की चौदहवीं शताब्दी से यह प्रशस्ति-लेखन प्रारम्भ हुआ।[2] मालवा के परमारों की उदयपुर-प्रशस्ति,[3] जोधपुर-प्रशस्ति[4] (प्रतिहारों की), गहलोतों की आबू प्रशस्ति[5] इसके प्रारम्भिक उदाहरण हैं। यह प्रशस्तियां भट्ट कहलाने वाले संस्कृत के विद्वान ब्राह्मण कवियों के द्वारा लिखी जाती थीं। ईसा की चौदहवीं-शताब्दी के उपरान्त संस्कृत के स्थान पर तत्कालीन लोक-भाषा में ये प्रशस्तियां लिखी जाने लगीं। फलस्वरूप भट्ट अपने संस्कृत ज्ञान को भूलने लगे। भाषा का ज्ञान प्राप्त करना उनके लिए आवश्यक हो गया।

ख्यातों का आरम्भ—

इस प्रकार प्रशस्ति और वंशावलियों के रूप में ख्यातों का आरम्भिक रूप मिलता है जो धीरे धीरे विस्तृत होता गया। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अकबर के समय में अबुल फजल ने "आईने-अकबरी" की

१—टैसीटोरी : जे० पी० ए० एस० बी० (न्यू सीरीज), खंड १५, नं० १, सन् १९१९ पृ० २०

२—टैसीटोरी : वही पृ० २१

३—एपीग्रेफिक इंडिका खण्ड १ पृ० २२२

४—जनरल एण्ड प्रोसीडिंग्स् ऐशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल सन् १८६४ पृ० १–९

५—इंडियन एन्टीक्वेरी खण्ड १६ सं० १८८७ पृ० ३४५

रचना की, इसके उपरान्त देशी राज्यों में भी ख्यातों का लिखा जाना प्रारम्भ हुआ[1]। अकबर ने अपने शासनारूढ़ होने के ६ वर्ष उपरान्त सन् १५७४ में एक इतिहास विभाग की स्थापना की[2]। तत्कालीन राजपूत-नरेश अकबर की इस इतिहास प्रियता से प्रभावित हुए। उन्होंने भी अपने अपने राज्यों में इतिहास लिखने के विभागों की स्थापना की । इससे पूर्व विस्तृत इतिहास लिखने की परिपाटी नहीं के बराबर थी।[3] अकबर की इच्छा या प्रेरणा से, इस प्रकार, देशी राज्यों में इतिहास लिखा जाना प्रारम्भ हुआ। इस इतिहास लेखन को प्रोत्साहन देने वाले दो प्रमुख कारण थे.-१ अकबर के दरबार में राजस्थान के कुछ राजाओं को छोड़कर प्रायः सभी राजा रहते थे। अपने गौरव को बनाये रखने तथा दूसरों को नीचा दिखाने के लिए ये राजा अपने इतिहास को अतिशयोक्तियों से सजाकर प्रकाशित करते थे। यह इतिहास उनकी मान मर्यादा का रक्षक समझा जाता था। २-अकबर के सम्मुख प्रतिष्ठा पाने के दृष्टिकोण से भी इन राजाओं ने अपने इतिहास संकलित किए। यह इतिहास ही ख्यात के नाम से प्रसिद्ध हुए।

ख्यातों के प्रकार—

प्राप्त ख्यातों को प्रधान रूप से २ भागों में विभक्त किया जा सकता है १-राजकीय ख्यातें:—इसके अन्तर्गत वे ख्यातें आती हैं जो राजाश्रय में राजकीय विभागों में तैयार करवाई गईं। २-व्यक्तिगत ख्यातें:—ये वे ख्यातें हैं जिनकी रचना स्वतन्त्र व्यक्तियों ने अपनी इतिहास प्रियता के कारण कीं।

१—राजकीय ख्यातें

राजकीय ख्यातों के लेखक राज-कर्मचारी मुत्सद्दी पंचोली थे। ये ख्यातें पक्षपात से भरी हुई हैं तथा इनमें असत्य घटनाओं की भरमार है।

.. ..

१—ओझा, गौ० ही० —नैणसी की ख्यात भाग २ पृ० १ (भूमिका)
जगदीश सिंह गहलोत राजपूताने का इतिहास पृ० २६

२—टैसीटोरी : बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल सोसाइटी आफ राजपूताना रिपोर्ट सन् १९१९ पृ० २७

३—ओझा, गौ० ही० :—जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम भाग भूमिका पृ० ५

पुरानी ख्यातों में बहुत कम ख्यातें उपलब्ध हैं क्योंकि १—अकबर और उसके उपरान्त लगभग एक शताब्दी तक मुत्सद्दी ख्यात लेखन का कार्य करते रहे और ये ख्यातें इन्हीं लोगों की व्यक्तिगत सम्पत्ति बन गई २—राजपूत नरेशों ने इन लिखी जाने वाली अमूल्य रचनाओं को सुरक्षित रखने की ओर ध्यान नहीं दिया फलतः ये ख्यातें राज्य के अधिकार से बाहर जाकर या तो नष्ट हो गई या लेखकों की वैयक्तिक संपति बन जाने के कारण प्रकाश में न आ सकीं। आज भी इन लेखकों के वंशज इन ख्यातों को प्रकाश में लाते हुए झिझकते हैं[1]।

सबसे प्राचीन उपलब्ध ख्यात—

सबसे प्राचीन उपलब्ध ख्यात "राठौड़ां री वंशावली – सीहै जी सूं कल्याण मल जी ताई"[2] है। इस ख्यात की रचना बीकानेर नरेश राव कल्याण मल के शासन के अन्तिम वर्षों में या उनकी मृत्यु (सं० १६३०) के ठीक उपरान्त हुई। क्योंकि इसमें राव कल्याणमल जी तक का ही विवरण है। अतः अकबर के समय की यह प्रथम ख्यात है। इसमें राठौड़ों के इतिहास की राव सीहौ से राव कल्याणमल जी तक की प्रमुख घटनायें तथा वंशावली का उल्लेख है। प्रारम्भिक पंक्तियों में सीहौ जी तक राठौड़ों की उत्पत्ति दिखाई गई है। गद्य-शैली सरल है।

गद्य का उदाहरण—

पछै वीरम जी की वइर भटियाणि चूंडै जी नूं मेल्हि नै सती हुई चांवड़ै जी नू धरती नू सौंपि, नै ताहरा चारण अल्हो लै नै कालाऊ गयो, नै गोगादेजी थल देवराज कन्हा रहा। पछै गोगादेजी मोटा हुवा। ताहरा जोइयां री हेरो कराडियौ मै जोइयौ धीर दे पूगल भाटी राणकदे रै परणीज गयौ हुतौ नै वांसिया गोगादेजी साथ करि नै जोइयै दलै उपरि गया सु दलौ सूवतौ। नेथ न रहै बीजी ठौड़ रहौ पछै उवा ढाल गोगादेजी गया ताहरा घाउ वाहौ सु दलै रौ जावाई दीकरी सूता हुता तांह नू वाहौ सु वाहण रा ऊधण वांम मांचौ वाढि नैं बेउ मारिया।

... .

१—जे० पी० ए० एस० बी० (न्यू सीरीज) खण्ड १५ सन् १६१६ पृ० २८

२—ए डिस्क्रपटिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टौरिकल मैन्युस्क्रप्टस बार्डिक एण्ड हिस्ट्रौरिकल सर्वे आफ राजस्थान रिपोर्ट सन् १६१६ पृ० ३१ मैन्यु० नं० २। अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान

२–बीकानेर रै राठौड़ां री बात तथा वंसावली[1]

इस हस्त प्रति में तीन संग्रह हैं १–राठौड़ां री बात राव सीहै जी सूं राजा रायसिंघ जी ताईं २–जोधपुर रै राठौड़ राजावां री वंसावली ३–बीकानेर रै राठौड़ राजावां री वंसावली। इनमें अन्तिम दो में तो केवल वंशावलियां हैं। प्रथम में राव सीहै जी से राव कल्याणमल के पुत्र राजा रायसिंघ जी तक का वर्णन है। यह ख्यात रायसिंघ जी के शासन काल में (सं० १६२८ से सं० १६६८ तक) लिखी गई अतः सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इसका रचना काल माना जा सकता है।

गद्य का उदाहरण–

सीहो जी पेड गाव आय नै रहीया। पछै श्री द्वारका जी री जात नु हालीया। बीच पाटंण सोलंकी मूलराज री रजवार, उठै डेरा कीया सु मूलराज चावोड़ां रो दोहीतो चावोडां रे भाटी लाखे फुलाणी सुं वैर सु लाखे पेटे करण मैं निबला घात दीया तै सुं राजरो धणी मूलराज हुयो। सु मूलराज सीहै जी सूं मिलीयो कहो मारे लाखे सुं वैर छै, थे मारी मदद करो ....।

३–बीकानेर री ख्यात-महाराजा सुजाणसिंघ जी सूं महाराजा गजसिंघ जी ताईं[2]

इस ख्यात में महाराजा सुजानसिंह जी से महाराजा गजसिंह (सं० १७४७ से १८४४ तक) का विवरण है। बीकानेर नरेश महाराजा सुजानसिंह (स० १७४७–१७९२), महाराजा जोरावरसिंह (सं० १७९६–१८०३) तथा महाराजा गजसिंह (मृ० स० १८४४) के शासनकाल का वर्णन, जोधपुर से उनके द्वारा किये गये युद्ध आदि इसके वर्ण्य विषय हैं।

१—डिस्कपटिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्टस ह० प्र० अनूप० सं०-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। मेन्यु० नं० ४

२—ए डिस्कपटिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स भाग १ प्रोज क्रौनीकल्स भाग २ बीकानेर स्टेट पृ० २६ .

गद्य का उदाहरण—

"माहरी डांठा री सु बुध थी नै बालक था नै भांग आरोगतां तरी तरंगा उठती कयु' सोच विचार कियो नहीं तीण सु सं० १७८१ मिति आसाढ़ सुध १३ रात रा सुतां नै छिद्र माय चूक कियो सु हुणहार रा कारण पुठै बड़ौ केहरवाणों हुवो..........."

जोधपुर रा राठौड़ां री ख्यात[1]

यह जोधपुर के राठौड़ वंशी नरेशों का विरवणात्मक इतिहास है। इसमें राठोड़ों की उत्पत्ति से महाराजा मानसिंह तक का विवरण मिलता है। इसके चार बृहद् भागों में प्रथम अप्राप्य है। महाराजा अजीतसिंह, महाराजा अभयसिंह, महाराजा रायसिंह, महाराजा बखतसिंह, महाराजा विजयसिंह से महाराजा मानसिंह तक के जोवन वृत्त, शासन, रानियां आदि का विवरण दिया गया है। इसमें राव जोधा से पूर्व के दिये हुये सभी संवत् अशुद्ध हैं आगे के राजाओं के सं० भी कहीं कहीं दूसरी ख्यातों से मेल नहीं खाते।[2]

गद्य का उदाहरण—

"जोधपुर माहाराज अजीतसिंघ जी देवलोक हुवा आंण दुवाई माहाराज अभैसिंघ जी री फिरी नै बखतसिंघ जी बड़ा माहाराज देवलोक हुवां री हकीकत अभैसिंघ जी ने लिखी सो दिली खबर पोहती तरै अभैसिंघ जी संपाड़ो करवा जमना जी पधारिया। सं० १७८१ रा सांवण वद ८ सुकर राजतिलक विराजिया"

५ उदयपुर री ख्यात[3]

इस ख्यात के प्रारम्भ में ब्रह्मा से राजाओं की वंश परम्परा का उद्गम माना गया है। १२५ वें राजा सिंहरथ तक केवल राजाओं के नाम मात्र का

....

१—टैसीटोरी : ए डिस्क्रपटिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल सर्वे आफ राजस्थान सेक्सन १ प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ७ मेन्यु० नं० ३-४

२—ओझा : जोधपुर का इतिहास-प्रथम खण्ड भूमिका पृ० ५

३—ह० प्र० : अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

उल्लेख है इसके पश्चात प्रत्येक राजा पर संक्षिप्त टिप्पणियां दी गई हैं। कुल १६६ राजाओं के नाम हैं। अन्तिम राणा रायसिंह हैं। टिप्पणियों में अश्व, गज, वाद्ययंत्र, रानियां आदि का विवरण है। राणा रायसिंह का राज्यारोहण संवत् १६१० दिया हुआ है इससे स्पष्ट है कि यह ख्यात बीसवीं शताब्दी की रचना है।

गद्य का उदाहरण—

"रावल श्री वैरसिंघ, राणी हाड़ी पुरबाई रा पुत्र वास चत्रकोट, सेन अश्व ७००० हस्ती १४०० पदादित्त ५००० वजत्र ३०० राजा बड़ा परवत्र, सेवा करत समत्र १०२६ राजबैठो, मारवाड़रा धणी राव महाजल थी युध जीत षेत्र संभर राज लोक राणी १६ खवास २ पुत्र ११ आयु वर्ष ३० मा० ६"

६—जोधपुर रा महाराजा मानसिंघ जी री तथा तखतसिंघ जी री ख्यात[1]

इस ख्यात में महाराजा मानसिंह जी के अन्तिम ५ वर्ष तथा महाराजा तखतसिंह जी का सं० १६०० से १६२१ तक का विवरण मिलता है। श्री भीमनाथ द्वारा उपस्थित की गई कठिनाइयों, महाराजा मानसिंह की मृत्यु, महाराजा तखतसिंह का राज्यारोहण तथा अन्य तत्कालीन जीवन की झांकियां इसके विषय हैं।

गद्य का उदाहरण—

"और भींवनाथ जी उदेमंदर वालां री राजरै काम में आगया हालै सो सरब ओधा खिजमतां त्था जबती वाहाली त्था केद कर बिगाड़णा भींवनाथ जी री दुवायती सुं हुवै अर भींवनाथ जी रा बेटा लिखमीनाथ जी माहामंदर रा जिणां रै बाप बेटां रै आपस में मेल नहीं...... "

....

१—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्शन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ३३ मेन्यु नं० १०

स्फुट-ख्यातें

इन ख्यातों के अतिरिक्त कुछ ख्यातें स्फुट गुटकों में यत्र तत्र संग्रहीत हैं। "किशनगढ़ की ख्यात[1]" जोधपुर के महाराजा मानसिंह के समय में लिखी गई। यह महाराजा किशनसिंह के जन्म तथा उनके द्वारा आसोप की जागीर प्राप्ति से प्रारम्भ होती है। किशनगढ के इतिहास के लिए यह ख्यात उपयोगी है।[2]

"जोधपुर की ख्यात"[3] में रावसीहो जी से महाराजा जसवंत सिंह जी की मृत्यु तक मारवाड़ के राठोड़ों का इतिहास है इसमें मंडोवर का विस्तृत विवरण है।[4]

"अजित विलास"[5] या महाराजा अजीतसिंह जी की ख्यात में

....

१—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्शन १, प्रोज क्रोनीक्लस भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० १६ मेन्यु नं० १०

२—गद्य का उदाहरण—

"मोटा राजा उदैसिंघ जी रा बेटा कीसनसिंघ जी कछावा रा भाणेज राणी पनरंगदे रा पेट रा सं० १६३६ रा जेठ वद २ रो जनम। मोटा राजा उदैसिंघ जी सं० १६४१ आसोप कीसनसिंघ नै पटै दीवी।..........."

३—टैसीटोरी ए डिस्क्रप्टिव केटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० १७

४—गद्य का उदाहरण—

"आद सहर मंडोवर थो। सासत्र मे पदमपुरांण मे इण समत नै मंडोवर सुमेर रो बेटो कहै छै तीणरो महातम घणो कहै छै मंडलेश्वर महादेव नंदी नागदरी सुरजकुंड रो घणो महातम छै।"

५—टैसीटोरी : डिस्क्रप्टिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० १८

जोधपुर नरेश महाराजा अजीतसिंह के शासन का वृत्तान्त है। यह सेतराम और सीहो के कन्नोज आगमन से प्रारम्भ होता है।[1]

"जोधपुर की ख्यात"[2] (महाराजा अभयसिंह जी से महाराजा मानसिंह तक) इसमें जोधपुर नरेश सर्व श्री अभयसिंह, रामसिंह, बख्तसिंह, विजयसिंह, भीमसिंह तथा मानसिंह का ऐतिहासिक विवरण है। उनके शासन की प्रमुख घटनाओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

"राव अमरसिंघ की ख्यात"[3] में जोधपुर के महाराजा गजसिंह के ज्येष्ठ पुत्र राव अमरसिंह के जीवन की एक झांकी है। उनको उत्तराधिकार से वंचित कर आगरा के इम्पीरियल कोर्ट में मृत्यु दंड दिया गया था। इस ख्यात के अंतिमांश से ज्ञात होता है कि प्रस्तुत हस्तप्रति सं० १७०३ में लिखी गई प्रति की वास्तविक प्रतिलिपि है। इस प्रकार इस ख्यात का रचनाकाल सं० १७०३ निश्चित है।[4]

"खावड़िया राठौड़ां री ख्यात"[5] में खावड़िया राठोड़ों का ऐतिहासिक विवरण है जिन्होंने पहले नीलमा और फिर गिराब को अपनी राजधानी

....

१—गद्य का उदाहरण—

"अथ राठौड़ मारवाड़ मैं आया तीण री हकीकत लीखते। राव सीहोजी सेतराम रो राव सीहोजी कनवज सु आया सं० १२१२ रा काती सुद २ लाखा फुलांणी सु मार पाटण रा चावड़ा मूलराज नु फतै दीराई नै मूलराज रे वेण सोलंकणी परणीजिया—"

२—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव केटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुरस्टेटपृ० १६

३—वही : पृ० २१

४—गद्य का उदाहरण—

अमरसिंघ जी रो जनम १६७० रो थो नै १६६० रा............ मैं राजा जी श्री गजसिंघ जी वारवटो दीयो जद पातस्यां स्हाजांहा लाहोर पधारीया थां सु महाराज पीण साथै लाहौर थां नै कंवर अमरसिंह जी बरस २० री उमर मैं थां।

५—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव कैटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युक्रिप्ट्स सेक्सन १ प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ३५

बनाकर खावड़ प्रदेश पर शासन किया। रिड़मल जगमालौत ने खावड़ प्रदेश को जीत कर नीलमा को अपनी राजधानी बनाया। अन्त में रावत धनराज एवं महाराजा विजयसिंह के समय में वह जोधपुर राज्य में मिल गया।[1]

"राठोड़ा री ख्यात"[2] में प्रारम्भ से महाराजा अजीतसिंह तक के राठोड़ राजाओं का विवरण है। इसमें राठोड़ राजाओं की वंशावली तथा संवत् ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हैं।

इस प्रकार अब जो भी राजकीय ख्यातें प्राप्त हैं वे इतिहास लेखन में बहुत अधिक सहायक हो सकती हैं। ये ख्यातें राजस्थानी-गद्य-साहित्य की अपूर्व निधि हैं।

२—व्यक्तिगत ख्यातें

राजाश्रय में लिखी गई इन उक्त-वर्णित ख्यातों के अतिरिक्त कुछ ख्यातें लेखकों की व्यक्तिगत रुचि एवं इतिहास प्रियता का परिणाम है। इनमें प्रमुख ख्यातें इस प्रकार हैं :—

१—नैणसी की ख्यात[3] (संकलन काल सं० १७०७-१७२२)

इस ख्यात के रचयिता मुहणोत नैणसी राजस्थानी के सर्व प्रथम ख्यात लेखक हैं जिन्होंने राजस्थान के इतिहास के लिए प्रचुर सामग्री प्रस्तुत की है। यह मुहणौत गोत्र के ओसवाल महाजन थे। मुहणौत गोत्र की उत्पत्ति राठोड़ों से मानी गई है[4]। मोहन जी मुहणौत इस गोत्र के

१—गद्य का उदाहरण—

रिड़मल जगमालौत खावड़ ने खावड़ मैं नीलमों सहर वसाय आप री नीलमै बांधी। पछै रिड़मल रा वंस में गांगौ खावड़ियो हुऔ।

२—टैसीटोरी : ए डिस्क्रप्टिव कैटेलोग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्सन १, प्रोज क्रोनीकल्स भाग १ जोधपुर स्टेट पृ० ३६

३—राजस्थान-पुरातत्व-मन्दिर द्वारा मुद्र्यमाण

४—गौरीशंकर हीराचन्द ओझा : नैणसी की ख्यात (द्वितीय भाग) भूमिका पृ० १; हिन्दुस्तानी सन् १६४१ पृ० २६७-६८।

आदि पुरुष थे। कुमटसेन मोहन जी के छोटे भाई थे, इनकी परम्परा में उन्नीसवें वंशधर जयमल हुए जो जोधपुर नरेश राजा सूरसिंह और राजा गजसिंह के समय में राज्य के प्रतिष्ठित पदों पर रहकर सं० १६८८ में जोधपुर राज्य के मंत्री बने। इनकी पहली पत्नी सरूपदे श्री नैणसी की माता थी। नैणसी का जन्म सं० १६६७ वि० मार्गशीर्ष सुदी ४ शुक्रवार को हुआ। बाल्यकाल में इनको पिता ने उपयुक्त शिक्षा दी। ये २२ वर्ष की आयु में उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात राज्य सेवा करने लगे। वीर प्रकृति के पुरुष होने के कारण इन्होंने अपने कार्यों से जोधपुर नरेश महाराजा गजसिंह को शीघ्र ही प्रसन्न कर लिया। संवत् १६८६ में इनको मगरा के मेरों का दमन करने के लिए भेजा गया, वहां ये अपने कार्य में सफल हुए। सं० १६६४ में ये फलौधी के नियंत्रक बनाये गए जहां उनको बिल्लोच से युद्ध करना पड़ा। सं० १७०० में महाराजा जसवंतसिंह की आज्ञा से इन्होंने बागी महेचा महेसदास को राडधरे में परास्त किया। संवत् १७०२ में रावत नारायणसिंह के विरुद्ध इनको भेजा गया। उसके उपद्रव को इन्होंने शान्त किया। संवत १७०६ में जैसलमेर के भाटियों का अधिकार पोकरण के परगने पर था। बादशाह शाहजहां ने यह परगना महाराजा जसवंत को प्रदान किया किन्तु भाटियों ने उसे नहीं माना। उनको दबाने के लिये सेना भेजी गई जिसमें नैणसी भी थे। इस प्रकार इनकी वीरता और बुद्धिमानी पर प्रसन्न होकर महाराजा जसवंतसिंह ने सं० १७१४ वि० में मियां फरासत के स्थान पर इनको अपना प्रधान अमात्य नियुक्त किया। संवत् १७२३ तक यह इस कार्य को करते रहे। इतने समय तक नैणसी ने अपना कार्य बड़ी ही योग्यता के साथ किया।

संवत् १७२४ में नैणसी तथा इनके भाई सुन्दरसी महाराजा जसवंतसिंह के साथ औरंगाबाद में रहते थे। किसी कारण वश महाराजा इन दोनों से अप्रसन्न हो गए[1] और दोनों को बंदी बना लिया गया। संवत् १७२५ में महाराजा जसवंतसिंह ने दोनों भाइयों को एक लाख रुपया दंड रूप में देने पर मुक्त कर देना चाहा। दोनों भाइयों ने इसे अस्वीकार

१—इस अप्रसन्नता का कारण स्पष्ट नहीं है किन्तु जन-श्रुति के अनुसार ऐसा प्रसिद्ध है कि नैणसी अपने सम्बन्धियों को उच्च पदों पर नियुक्त कर दिया करते थे जिससे स्वार्थी लोग राजकीय व्यवस्था में घुस आये थे। फलतः राजकार्य में बाधा पड़ती थी।

किया। इस सम्बन्ध में दो दोहे प्रसिद्ध हैं :—

लाख लखारां नीपजैं, बड़-पीपल री साख।
नटियो मूंतो नैणसी, तांबो देण तलाक ॥१॥
लेसौ पीपल लाख, लाख लखारां लावसो।
तांबो देण तलाक, नटिया सुन्दर नैणसी ॥२॥

इस प्रकार दया-व्यवस्था को अस्वीकृत कर देने पर सं० १७२६ में दोनों को फिर बंदी बनाया गया। उनके कारावास की यातनाएँ बढ़ाई गईं। दोनों भाइयों को औरंगाबाद से मारवाड़ भेजा गया। मार्ग में इनके साथ चलने वालों ने इनके साथ और भी कठोर व्यवहार किया। जिसके कारण दोनों को अपने ऐहिक-जीवन से घृणा सी हो गई अतः फूलमरी नामक ग्राम में भाद्रपद बदि १३ सं० १७२७ में दोनों भाइयों ने अपने पेट में कटारी मारकर अपने बन्दी जीवन का अन्त कर लिया। दोनों भाई कवि थे तथा अपनी बन्दी अवस्था में दोहे बना बनाकर खेद प्रकट किया करते थे जैसे :—

दहाड़ौ जितरै देव, दहाड़े बिन नहीं देव हैं।
सुर नर करता सेव, नैड़ा न आवे नैणसी ॥ —नैणसी
नर पै नर आवत नहीं, आवत है धन पास।
सो दिन केम पिछाणिये, कहते सुन्दरदास ॥ —सुन्दरसी

नैणसी की सन्तति

नैणसी के करमसी, वैरसी तथा समरसी तीन पुत्र थे। नैणसी के आत्मघात के पश्चात जसवंतसिंह ने इन तीनों भाइयों को भी मुक्त कर दिया। मुक्त होने पर यह मारवाड़ में नहीं रहे। नागौर जाकर महाराजा रायसिंह के आश्रय में रहने लगे। रायसिंह ने अपना सारा कार्य करमसी को सौंप दिया। एक दिन रायसिंह की अचानक मृत्यु हो गई। करमसी पर उन्हें विष देने का झूंठा संदेह किया गया। फलस्वरूप करमसी जीवित दीवार में चुनवा दिये गये तथा उनके सम्पूर्ण परिवार को कोल्हू में कुचलवा देने की आज्ञा हुई। करमसी का पुत्र प्रतापसी अपने परिवार के साथ मारा गया। करमसी की दो पत्नियां अपने पुत्र संग्रामसी एवं सामन्तसी के साथ भागकर किशनगढ़ की शरण में आई और वहां से फिर बीकानेर चली गई।

महाराजा जसवंतसिंह के पुत्र महाराजा अजीतसिंह ने जब मारवाड़ पर अपना अधिकार स्थिर कर लिया तब उन्होंने सामन्तसी तथा संग्रामसी को फिर से मारवाड़ बुलाकर सान्त्वना दी।

जोधपुर, किशनगढ़ एवं मालवा के मुलथाण में अब भी नैणसी के वंशजों का निवास स्थान बताया जाता है, जोधपुर में उनके पास कुछ जागीरें भी हैं। कुछ राज्य-सेवा भी करते हैं।

नैणसी के ग्रंथ

नैणसी वीर होने के साथ साथ नीति निपुण, इतिहास प्रिय तथा विद्यानुरागी भी थे। उनकी ख्यात उनकी इतिहास प्रियता की साक्षी है।

बाल्यकाल से ही मुहणोत नैणसी को इतिहास के प्रति अनुराग था। उन्होंने ऐतिहासिक वृत्तान्तों का संकलन सं० १७०७ से ही प्रारम्भ कर दिया था। उन्हें जो कुछ भी प्राप्त होता उसको ज्यों का त्यों ये अपनी डायरी में लिख लिया करते थे। चारण, भाट, अनेक प्रसिद्ध पुरुष, कानूनगो आदि से उन्होंने अपनी सामग्री को समृद्ध किया। जोधपुर का दीवान नियुक्त होने पर उन्हें अपने कार्य में बहुत अधिक सुभीता हो गया। नैणसी के लिखे हुए दो ग्रंथ मिलते हैं १—नैणसी की ख्यात २-जोधपुर राज्य का सर्व संग्रह (गजेटियर)। इनमें प्रथम ग्रंथ विशेष महत्वपूर्ण है। सर्वसंग्रह में नैणसी ने पहले परगनों का विवरण दिया है। अमुक परगने का नाम अमुक क्यों पड़ा, उसके कौन कौन राजा हुए उनके महत्वपूर्ण कामों का उल्लेख, जोधपुर के इतिहास में वे क्यों और कब आये आदि का उत्तर इस सर्वसंग्रह में मिलता है। गांवों के विषय में भी इसी प्रकार का उल्लेख है। अमुक गांव का जागीरदार कौन है, उसकी जमा कितनी है कौन कौनसी फसलें होती हैं, तालाब, नाले, नालियां आदि कितनी हैं, उसके आस पास किस प्रकार के वृक्ष हैं आदि भौगोलिक वृत्तान्त इस सर्वसंग्रह में संग्रहीत हैं।

नैणसी की ख्यात

"नैणसी की ख्यात", राजपूताना तथा अन्य प्रदेशों के इतिहास का बहुत बड़ा संग्रह है। इसमें राजपूताना, काठियावाड़, कच्छ, मालवा, बघेलखंड आदि के राज-वंशों का वृत्तान्त मिलता है। उदयपुर, डूंगरपुर बांसवाड़ा और प्रतापगढ के सिसोदिया, रामपुरा के चन्द्रावत, खेड़ के

गुहिलोत, जोधपुर, बीकानेर, और किशनगढ़ के राठौड़, जयपुर के कछवाहा, सिरोही के देवड़ा चौहान, बूंदी के हाड़ा-चौहानों की विभिन्न शाखायें, गुजरात के चावड़ा एवं सोलंकी, यादव और उनकी सखैया, जाड़ेचा आदि कच्छ और काठियावाड़ की शाखायें, बघेलखण्ड के बघेला, काठियावाड़ के झाला, दहिया, गौड आदि का इतिहास इस ख्यात में संग्रहीत है[1]। राजस्थान के इतिहासकारों के लिये यह ख्यात बहुत ही महत्व की है।

ख्यात के प्रमुख विवरण इस प्रकार हैं :—

१–सिसोदियां री ख्यात— २–बूंदी रा धणियां हाडां री ख्यात— ३–बागड़ियां चहुवाणां री पीढ़ी— ४–दहियां री वात— ५–बुंदेलां री वात– ६–गढ़बंधव रा धणियां री वात— ७–सीरोही रा धणियां देवड़ां री ख्यात– ८–भायलां राजपूतां री वात— ९–सोनगरा चहुवाणां री वात— १०–साचौर रा चहुवाणां री वात— ११–कांपलिया चहुवाणां री वात— १२–खीचियां चहुवाणां री वात— १३–अणहलवाड़ा पाटण री वात— १४–सोलंकियां री वात— १५–जाड़ेचा लाखानुं सोलंकी मूलराज मारियां री वात— १६—रुद्रमालौ प्रासाद सीधराज करायो तिण री वात— १७–कछवाहां री ख्यात— १८–गोहिलां खेड़ रायणियां री वात— १९–सांखला पवांरा री वात— २०–सौढ़ा पवांरा री वात— २१–भाटियां री ख्यात— २२–रावसीहा री वात— २३–कानड़दे री वात— २४–वीरम जी री वात— २५–राव चूंडे जी री वात— २६–गोगा दे जी री वात— २७–अरड़कमल चूंडावत री वात— २८–राव रिणमल जी री वात— २९–रावल जगमाल जी री वात— ३०–राव जोधा जी री वात— ३१–राव बीकै जी री वात— ३२–भटनेर री वात— ३३–राव बीकै जी री वात (बीकानेर बसायो तै समय री) ३४–कांधल जी री वात— ३५–राव तीडै री वात— ३६–पताई रावल री वात— ३७–राव सलखे जी री वात— ३८–गढ़ मण्डिया तैरी ख्यात— ३९–राव रिणमल अहमद मारियौ तै री वात— ४०–गोगा दे वीरम देवौत री वात— ४१–राठौड़ राजावों रै अमलेवरां नाम— ४२–जैसलमेर री वात— ४३–वूदै जोधावत री वात— ४४–खेतसी रतनसी औत री वात—४५–गुजरात देस री वात— ४६–पाबू जी री वात— ४७–राव गांगे वीरमदे री वात— ४८–हरदास ऊहड़ री वात— ४९–नरै सूजावत खीमै पोहू करणे री वात— ५०–जैमल वीरमदे औत राव मालदे री वात— ५१–सीहै सींधल री वात— ५२–राव रिणमल जी री वात— ५३–नरबद सतावत सूपियार

---

[1]—ओझा : नैणसी की ख्यात, प्रथम भाग–भूमिका पृ० ६

दे लायो तै समय री वात— ५४–राव लूणकरण री बात— ५५–मोहिलां री बात— ५६–छतीस राजकुली इवरे गढै राज करै तैरी वात— ५७–पंवारां री बंसावली— ५८–राठोड़ां री बंसावली— ५६–पातसाहां गढ़ लिया तैरा संवत— ६०–दिल्ली राजा बैठा तियां री विगत— ६१–सेतराम वरदाई सेनौत री वात— ६२–राठौड़ राजावां रै कंवरां नै सतियां रा नाम— ६३–किसनगढ़ री विगत— ६४–राठौड़ा री तेरें साखां री विगत— ६५–जैसलमेर री ख्यात— ६६–अ'गौत नारणौत वगैरे बीकानेर रै सिरदारों री पीढियां— ६७–पातसाहां रा फुटकर संवत— ६८–चन्द्रावतां री वात— ६६–सिखरौ बहैल वै गयौ रहै तै री वात— ७०–उदै उगवणावत री वात— ७१– दूदै भोज री वात— ७२–क्यामखान्या री उतपत— ७३–दौलताबाद रा उमरावां री वात— ७४–मलकम्बर ने आकूत खां री याददाश्त— ७५–सांगमराव राठौड़ री बात आदि।

ख्यात में दोष–

सं० १५०० से पूर्व की वंशावलियां जो प्रायः भाटों आदि की ख्यातों के आधार पर हैं कहीं कहीं पर ऐतिहासिक दृष्टि से अशुद्ध हैं। नैणसी को जो कुछ मिला उसको यथावत ही रख दिया है ऐतिहासिक दृष्टि से उनकी शोध नहीं की। इसी प्रकार एक ही विषय से सम्बन्ध रखने वाले वृत्तान्तों को वैसा का वैसा ही लिख दिया है जिनमें कुछ अशुद्ध भी हैं संवत भी कहीं कहीं गलत हो गये हैं।[1]

ख्यात का महत्व–

१–ऐतिहासिक :– देखने से पता चल सकता है कि इतिहास की दृष्टि यह ख्यात बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके संवत तथा घटनायें ऐतिहासिक आधार पर हैं। "वि० सं० १३०० के बाद से नैणसी के समय तक राजपूतों के इतिहास के लिये तो मुसलमानों की लिखी हुई तवारीखों से भी नैणसी की ख्यात कहीं कहीं विशेष महत्व की है। राजपूताने के इतिहास में कई जगह जहां प्राचीन शोध से प्राप्त सामग्री इतिहास की पूर्ति नहीं कर सकती वहां नैणसी की ख्यात ही कुछ कुछ सहारा देती है।[1] वस्तुतः

१—ओझा :–नैणसी की ख्यात-प्रथम भाग-भूमिका पृ० ७

राजपूत नरेशों के इतिहास को जानने के लिये तो अन्य साधन मिल मिल सकते हैं किन्तु उनकी छोटी छोटी शाखाओं और सरदारों के विषय में जानने के लिये तो नैणसी की ख्यात के अतिरिक्त कुछ भी नहीं ।[1]

साहित्यिक–महत्व

ऐतिहासिक उपयोगिता के अतिरिक्त "नैणसी की ख्यात" का साहित्यिक महत्व भी कम नहीं। सं० १७०७ से १७२२ तक के १५ वर्ष के समय में नैणसी को जो भी वृत्तान्त मिला उसको उन्होंने लिख लिया। इस प्रकार इस ख्यात में २७८ वर्ष पूर्व की राजस्थानी भाषा पर प्रकाश पड़ता है। इसकी भाषा प्रौढ़ राजस्थानी है। राजस्थानी के गद्य के विकास को जानने के लिए "नैणसी की ख्यात" की भाषा बहुत काम की है। समय समय पर जो विवरण नैणसी को मिला उसे या तो उन्होंने स्वयं लिख लिया या दूसरों से लिखवाया जैसे राणा उदैसिंह और पठान हाजी खां के बीच हुये युद्ध का वर्णन सं० १७१४ में खेमराज चारण ने लिख भेजा : सीसोदिया की चूड़ावत शाखा का वृत्तान्त खींवराज खड़िया (चारण) ने लिखवाया : बूंदी राज्य का वृत्तान्त सं० १७२१ में रामचन्द्र जगन्नाथौत ने लिखवाया : बुंदेला बरसिंह देव के राज्य का वर्णन सं० १७१० में बुंदेला शुभकर्ण के सेवक चक्रसेन ने संग्रहीत किया। जैसलमेर का कुछ वर्णन विट्ठलदास से लिया : सं० १७२२ में परबतसर में रहने समय वहां के दहिया राजपूतों का वृत्तान्त नैणसी ने संग्रहीत किया : इसी प्रकार नैणसी ने अपनी ख्यात का संकलन किया अतः राजस्थानी के कई रूपों का संग्रह भी इसमें आप ही आप हो गया। जन-प्रचलित राजस्थानी-भाषा का एक उदाहरण यहां देखा जा सकता है :—

"बूंदी सहर भाखर भाखर लगती बसै छै। रावला घर भाखर रै आधो फरै छै। पिण माहे पांणी मामूर नहीं। सहर रै आयो बीजै भाखर वलारौ सहर लागतौ काउ घणा वला रै भाखर में पाणी घणौ। सहर माहे पाखती पाणी घणो बड़ौ तलाब सूर सागर तिण री मौरी छूटै छै। तिण सूं बागवाड़ी घणा पीवै बागै आंबा फूलाद चंपा घणा। सहर री वस्ती उनमान घर-घर ५०० वांणीयांरा घर १००० बांमण बिणजारां रा घर १०००

....

१—ओझा – नैणसी की ख्यात – द्वितीय भाग – भूमिका पृ० १

पांच भाई साही बागरा रा। राव भावसिंह नु' हमार जागीर मे इतना परगना छै सिवांरा गाव ३१६।[1]।

२—दयालदास री ख्यात[2]

दयालदास—जन्म तथा परिचय

दयालदास सिंढ़ायच की लिखी हुई ख्यात 'दयालदास की ख्यात' के नाम से प्रसिद्ध है। "सिंढ़ायच" माड़ू चारण जाति की भावलिया शाखा की एक उपशाखा है। ऐसी प्रसिद्धि है कि नरसिंह भावलिया को, नाहड़ राव पड़िहार ने, कई सिंहों को मारने के उपलक्ष में "सिंहदाहक" की उपाधि प्रदान की थी। सिंढ़ायच उसी का अपभ्रंश है। इसी वंश में बीकानेर के कूबिया गांव में सं० १८५५ के लगभग सिंढायच दयालदास का जन्म हुआ[3]। दयालदास के विषय में इससे अधिक परिचय प्राप्त नहीं होता। दयालदास की मृत्यु ६० वर्ष की आयु में सं० १६४८ में हुई[4]।

दयालदास बड़ा विद्वान और योग्य व्यक्ति था। बीकानेर नरेश महाराजा रत्नसिंह सं० (१८४७-१६०८) का वह विश्वास पात्र था। इसके अतिरिक्त महाराजा सूरतसिंह (सं० १८२२-१८८५), महाराजा सरदारसिंह (सं० १८७५-१६२६) और महाराजा डूंगरसिंह (सं० १६४४) की भी उस पर बहुत कृपा रही। इतिहास का प्रेमी होने के कारण उसने बड़ा परिश्रम करके पुरानी वंशावलियों, पट्टों, बहियों, शाही फरमानों तथा राजकीय पत्र व्यवहार के आधार पर अपनी ख्यात की रचना की[5]। उसने किसी प्रकार के शिलालेख, मुसलिम इतिहास आदि का उपयोग नहीं किया जिससे उसकी ख्यात में कहीं कहीं पर ऐतिहासिक अशुद्धियां रह गई हैं फिर भी उसका काम बड़ा ही महत्वपूर्ण है[6]।

....

१—नैणसी की ख्यात पृ० ५६, अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय बीकानेर

२—द्वितीय खण्ड, अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, द्वारा सादूल प्राच्य ग्रंथ माला में प्रकाशित

३—ओझा : बीकानेर का इतिहास, द्वितीय भाग, भूमिका पृ० ७–८

४—ओझा : बीकानेर का इतिहास, दूसरा भाग, भूमिका पृ० ८

५—ओझा : बीकानेर का इतिहास, प्रथम भाग, भूमिका पृ० ५

६—डा० दशरथ शर्मा : दयालदास की ख्यात, भूमिका पृ १६

दयालदास के ग्रंथ

दयालदास ने तीन ख्यातों की रचना की:— १-राठौड़ां री ख्यात २-देश-दर्पण[1] ३-आर्यख्यान कल्पद्रुम[2]

इन तीनों ख्यातों में प्रथम अधिक महत्व की है। इसी को "दयालदास की ख्यात" के नाम से पुकारा गया है। दूसरे ग्रंथ में भी बीकानेर का ऐतिहासिक विवरण है। इसमें प्रधानतः बीकानेर-नरेश महाराजा सरदार सिंह के शासन का विवरण अधिक है। तीसरी पुस्तक ख्यात की अपेक्षा गजेटियर अधिक है। इसके अन्त में बीकानेर राज्य के गांव की नामावली, उनकी आय, जनसंख्या आदि के साथ दी हुई है।

दयालदास की ख्यात

इस ख्यात की रचना दयालदास ने महाराजा सरदारसिंह की आज्ञा से की। इसके अन्त में महाराजा सरदारसिंह के राज्यारोहण (सं० १६०६) तक का वर्णन है। महाराजा रत्नसिंह की आज्ञा से यदि यह लिखी गई होती तो प्रारम्भ में उनकी स्तुति अवश्य ही की गई होती अतः इस सम्बन्ध में श्री ओझा जी का मत[3] अमान्य ठहरता है।

ख्यात का ऐतिहासिक महत्व

यह ख्यात बीकानेर राज्य का सर्व प्रथम क्रम-बद्ध इतिहास है। इसमें राव बीका (सं० १४६५-१५६१) से महाराजा सरदारसिंह के राज्यारोहण (सं० १६०६) तक का विस्तृत विवरण है। प्रारम्भिक पृष्ठों में स्तुति के उपरान्त नारायण से सूर्य-वंश की परम्परा चलती है। श्री रामचन्द्र (६४ वें) श्री जयचन्द्र (२५४ वें) आदि अनेक अनैतिहासिक नामों के उपरान्त सीहोजी का नामोल्लेख है। इस प्रकार के काल्पनिक अंशों को छोड़ देने के उपरान्त बीकानेर का शुद्ध इतिहास शेष रहता है। इस ख्यात का उपयोग श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने बीकानेर राज्य का इतिहास लिखते समय

....

१--कैटेलौग आफ दी राजस्थानी मैन्युस्क्रिप्ट्स इन अनूप-संस्कृत-लाइब्रेरी पृ० ७४

२--वही : पृ० ७६

३--ओझा : बीकानेर का इतिहास, प्रथम खण्ड, भूमिका पृ० ५

किया है जो इसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता का प्रमाण है[1]। दयालदास यद्यपि नैणसी या अबुलफजल के समान इतिहासकार नहीं था किन्तु उसकी ऐतिहासिक रचनाएं अपना विशिष्ट अस्तित्व रखती हैं[2]।

ख्यात का साहित्यिक महत्व

यह बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक की रचना है। इस शताब्दी के राजस्थानी गद्य के उदाहरण इस ख्यात में मिलते हैं। नैणसी की ख्यात के उपरान्त इसकी रचना हुई अतः नैणसी के गद्य के उपरान्त दयालदास का गद्य राजस्थानी के विद्यार्थी के काम की वस्तु है। ऐतिहासिक रचना होने के कारण दयालदास ने इस ख्यात की भाषा को साहित्यिक रूप में नहीं सजाया जो कुछ उन्होंने लिखा वह तत्कालीन बोलचाल की भाषा में ही लिखा। धारावाहिकता ही दयालदास की शैली की प्रधान विशेषता है।

गद्य का उदाहरण–

"पछै कमर बांधीज रावत जी बहीर हुवा। सू राजासर आया। अरु रावजी श्री जैतसी जा काम आया तिण समै सिरदार सारा आपणां ठिकाणां

....

1—ओझा : बीकानेर का इतिहास, प्रथम खण्ड, पृ० ६ (भूमिका)

२—We might regard Dayaldas Sindhayach as the last of the great bardic chroniclers of Bikaner. With the advance of the Western system of education and increasing materialism their days are were speedily coming to an end. Dayaldas, however, was an honoured courtier trusted adviser and emissary besides being a state chrnicler. He was no Abul Fazal, but his position in the state affairs was high enough to suggest some comparison with that great Historian of the Mughal period. Like him Dayaldas was an erudite scholar. He was an accomplished rhetoricaian, a writer of excellent Marwari, only a little imperior to that of Naissi Munot................

—Dr. Dashrath Sharma–Introduction of Dayaldas Rekhat Part 2. Page 15

गया परा था। सु किता एक नूं किसनदास जो लिखावट करी। तिण माथै लोक हजार छव भेलौ हुवो। पीछै जोईये चावै चीगड़ रै नूं सिहाणसूं बुलायौ। तद चावौ फौज हजार आय सामल हुवौ। फौज हजार दस हुई। पीछे जोधपुर रा धाणा ऊपर चलाया। सू पहली लूणकरण सर वडौ थाणौ हौ तठै आया नै अठै वड़ौ झगड़ौ हुवौ। मारवाड़ रा राजपूत तीन सौ काम आया। अरु किता एक मारवाड़ रा भाज नीसरिया। नै रावजी री फतै हुई। अरु आण फेरी। घोड़ा दो सौ ऊँट सौ मारवाड़ां रा लूट में आया"[1]

देशदर्पण[2]

"देशदर्पण" की रचना दयालदास ने वैद मेहता जसवंतसिंह के आदेशानुसार सं० १६२७ में की।[3] इसके पूर्वार्द्ध में बीकानेर नरेश महाराजा रतनसिंह का वर्णन लम्बी पीढ़ियावली के उपरांत है। उत्तरार्द्ध में बीकानेर के गांवों की विगत है। कुछ खरीतों की नकलें भी इस में संकलित हैं।

गद्य का उदाहरण–

"फेर पलीतो तारीख १३ अक्टूबर सन मजकुर कपतान फीरंच साहब इष्टंट साहब अजंट अजमेर रो श्री दरबार सामो आयो ते मे लीष्यो। लफटंट गवरनर जनरल कलारक साहब बहादुर सहसें होय बावलपुर तक तसरीफ ले जावेंगे सो मोतमद हुसीयार वा लयाकत वा कुल इकत्यार सरसै नबाब साहब ममदु की षीदमत में जाय देवे।[4]

आर्याख्यान कल्पद्रुम[5]–

महाराजा डूंगरसिंह जी को दयालदास की उक्त दोनों ऐतिहासिक रचनाओं से संतोष नहीं हुआ। अतः उन्होंने समस्त भारतवर्ष का इतिहास

१—दयालदास री ख्यात : भाग २ पृ० ७२
२—अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर
३—ओझा : बीकानेर का इतिहास : द्वितीय खण्ड, भूमिका पृ० ८
४—हस्त प्रति पत्र ५३ (अ)
५—ओझा : बीकानेर का इतिहास : द्वितीय खण्ड, भूमिका पृ० ८

प्रांतीय भाषा में लिखने की आज्ञा दी। इस पर दयालदास ने सं० १६३४ में इस ग्रंथ की रचना की।[1]

३ बांकीदास की ख्यात[2]

बांकीदास (सं० १८३८-सं० १८६०) जन्म तथा परिचय

बांकीदास का जन्म सं० १८३८ में आसिया जाति के चारण फतहसिंह के यहां हुआ। ये मांडियावास (परगना पचपदरा) के निवासी थे। बाल्यकाल से ही बांकीदास ने अपने पिता से मरुभाषा के गीत, कवित्त, दोहे आदि बनाना सीखकर कविता करना प्रारम्भ किया। १३ वर्ष की आयु में ये अपने मामा ऊक जी के साथ वाले गांव के ठाकुर नाहरसिंह के पास गये। आशु कवि होने के कारण इन्होंने वहीं दो दोहे और एक सेणोर गीत की रचना कर सुनाई। इससे पता चलता है कि ये बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे। १६ वर्ष की आयु में इन्होंने अपने पिता से आश्रयदाता खोजने की अनुमति प्राप्त करली।

सर्व प्रथम ये रायपुर (मारवाड़) के ठाकुर अर्जुनसिंह ऊदावत के समीप गये। इनकी प्रतिभा को देख कर उसने इनको जोधपुर पढ़ने के लिये भेज दिया। ५ वर्ष वहां अध्ययन करने के उपरान्त वापिस लौटे। सं० १८६० में जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह के गुरु आयस जी देवनाथ ने इनकी प्रशंसा सुनकर अपने यहां बुलाया तथा इनकी कवित्व-शक्ति देखकर महाराजा से उसकी चर्चा की। महाराजा ने इनको पर्याप्त पुरस्कार देकर अपने दरबार में रख लिया।

बांकीदास डिंगल, ब्रजभाषा और संस्कृत के विद्वान तथा इतिहास के अच्छे ज्ञाता थे। इनके ऐतिहासिक ज्ञान के विषय में एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है:—ईरान के बादशाह के बन्धुओं में से एक सरदार एक बार भारत की यात्रा करता हुआ जोधपुर पहुंचा। उसने महाराज से इच्छा प्रकट की कि कोई अच्छा इतिहास-वेत्ता उनके पास भेजा जाय। बांकीदास उसके पास

....

१—ओझा : बीकानेर का इतिहास : द्वितीय खण्ड, भूमिका पृ० ८

२—नरोत्तमदास स्वामी, बीकानेर, द्वारा संपादित तथा राजस्थान पुरातत्व मन्दिर द्वारा प्रकाशित।

पहुंचाये गये। उनसे बात करके वह इतना प्रसन्न हुआ कि उसने महाराज से कहा आपने जो व्यक्ति हमारे पास भेजा है वह केवल कवि ही नहीं इतिहास का पूर्ण विद्वान भी है। वह तो मुझसे भी अधिक मेरी जन्मभूमि (ईरान) का इतिहास जानता है।

ये बहुत ही स्वाभिमानी तथा स्वतन्त्र प्रकृति के व्यक्ति थे। इनके स्वाभिमान की एक घटना उल्लेखनीय है। एक बार महाराज की सवारी के समय महारानी की पालकी से आगे इन्होंने अपनी पालकी निकलवा ली। ऐसा देखकर महारानी इन पर कुपित हुई तथा इस मर्यादा उलंघन के लिए इनको प्राण-दंड देने का आग्रह उन्होंने महाराजा से किया। इस पर महाराजा मानसिंह ने उत्तर दिया "मैं तुम्हारी जैसी दूसरी रानी ला सकता हूँ किन्तु बांकीदास के स्थान पर मुझे दूसरा कवि मिलना असम्भव है।" इससे स्पष्ट है कि राज दरबार में इनका बहुत सम्मान किया जाता था।

उदयपुर के महाराणा भीमसिंह भी इनको आदर की दृष्टि से देखते थे। कवि के रूप में बांकीदास का व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली था। कई कवियों से इनका शास्त्रार्थ हुआ जिनमें ये सदैव विजयी हुये। इनकी पद्य रचनाओं का संग्रह नागरी-प्रचारिणी सभा की ओर से बांकीदास ग्रंथावली (तीन भाग) नाम से प्रकाशित हो चुका है। गद्य-लेखक के रूप में भी बांकीदास का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। इनका गद्य-ग्रंथ "बांकीदास की ख्यात" है।

बांकीदास की ख्यात

इस ख्यात में समय समय पर विविध विषयों पर लिखी हुई टिप्पणियों का संग्रह है। ये टिप्पणियां न तो विषयानुक्रम से लिखी गई हैं और न कालानुक्रम से ही। जैसे जैसे इनको रोचक विषय मिले उनको इन्होंने अपनी इस बृहद् डायरी में ज्यों का त्यों लिख लिया। भूगोल, इतिहास, नीति, वेदान्त, जैन दर्शन, नगर-परिगणन, जाति, शब्दों के अर्थ, प्रसिद्ध व्यक्ति, औषधि आदि अनेक विषयों पर इन्होंने अपने इस संग्रह में अनेक टिप्पणियां लिखी हैं।

ऐतिहासिक-विवरणों में सौलंकी, बाघेला, पवांर, चौहान, हाड़ा, सोनगरा, देवड़ा, गहलोत, तुंवर, झाला, बुंदेला, राठौड़ आदि राजपूत-वंशों की वंशावलियां : राव सूजा, जैमल, राजा सूरसिंह, राजा गजसिंह,

महाराजा जसवंतसिंह, महाराजा अजीतसिंह, महाराजा अभयसिंह, महाराजा रामसिंह, महाराजा बखतसिंह आदि का विस्तृत वर्णन है। साथ में संवत भी दिये गये हैं जिनमें कई अशुद्ध हैं। मुसलमान बादशाहों में अलाउद्दीन खिलजी, अकबर, बाबर, हुमायूं, तैमूर, अहमदशाह दुर्रानी आदि का उल्लेख है।

उदाहरणत :—

सौलंकिया रै भारदवाज गोत्र, खैत्रज चामुंडा दोय देवी, महिपाल पितर, परवर तीन, खिडियो चारण, बागडियो भाट, कंडारियो ढोली, सौलंकियां रै कुलदेवी कटेस्वरी : बड़ी चरादेवी अरथ कुक्कट वहणी लोक वहचरा कहै

सौलंकियां री साख री विगत :

दारिया १ भाणगौती २ बाघेला ३ लहारा ४ वालणौत ५ वीखुरा ६ नाथावत ७ वाराह ८ खाजीय ९ इत्यादिक हैं।

बांकीदास जहां जाते वहां की विशेषताओं को अपनी इस वही में लिख लेते थे। इस प्रकार भौगोलिक विषयों में रहन-सहन, रीति रिवाज, व्यवसाय आदि पर प्रकाश डाला गया है।

उदाहरणत :—

सिंध री तमाखू नव सेर बिकै रु १ री। जठै नालवण सेर बिकै! आंबा मुलताण रा आछा हुवै।

खुटिया लखनऊ को, गटा कनौज को, पेडा मथुरा को, औला सिकन्दरा को अद्भुत हुवै।

अभ्रक, कपूर, लोबान, कृष्णागुरु प्रमुख यवुनां रै देसां सूं हिंद में आवै। कांसी, पीतल, प्रमुख धातु मारवाड़ सूं सिंध में जावै।

धार्मिक-विषयों में कहीं वे हिन्दुओं के वेदान्त की चर्चा करते हैं तो कहीं जैनियों के जैनागमों की। कहीं पर कुरान की बातें उनकी टिप्पणियों का विषय है। जैसे—वेदान्त में बावन मत हैं जामें अद्वैतवाद प्रबल है।

"या"- नैयायिक अनित माने सब्द नूं, मीमांसक वैयाकरण सब्द नूं नित्य मानै।"

पिंडारा, मुसलमान, जैन, चारण, सिख, फिरंगी आदि विविध जातियों के विषय में भी उल्लेख किया गया है।

इनके अतिरिक्त और भी कई विभिन्न विषयों पर बांकीदास ने अपनी लेखनी चलाई है।

बांकीदास की भाषा जन-प्रचलित-राजस्थानी है। उन्नीसवीं शताब्दी की राजस्थानी के प्रयोग इनकी ख्यात में देखे जा सकते हैं। नैणसी या दयालदास की ख्यात से भी इनकी ख्यात इतिहास के क्षेत्र में अधिक उपयोगी एवं प्रमाणित है।

दलपत विलास

इन ख्यातों के अतिरिक्त "दलपतविलास" नामक एक अपूर्ण हस्त-प्रति अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, में विद्यमान है। इसके लेखक का नाम भी अज्ञात है। इस ग्रंथ में बीकानेर के महाराजा रायसिंह के द्वितीय पुत्र श्री दलपतसिंह का विवरण है। आरम्भिक दो पृष्ठों में सृष्टि की उत्पत्ति दिखाने के बाद राव सीहा जी से राव जोधा जी तक तथा राव बीका से दलपतसिह तक की वंशावली का उल्लेख है। श्री दलपतसिंह की किशोरावस्था, रायसिंह जी के दीवान कर्मचन्द बच्छावत के कार्य, रायसिंह जी के पुत्र भोपत का रुष्ट होना, उसका मारा जाना, दलपत सिंह जी को मारने का षड्यंत्र, उनके द्वारा बाल्यकाल में दिखलाई गई वीरता, अकबर के दरबार में की गई उनकी सेवायें आदि इसके विषय है। इस रचना में दलपतसिंह के विषय में ही अधिक मिलता है जिससे पता चलता है कि इस ख्यात की रचना इन्हीं के समय में हुई होगी। श्री दलपतसिंह का राज्यारोहण सं० १६६८ में हुआ तथा सं० १६७० में इनका स्वर्गवास हो गया अतः सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इसका रचना काल माना जा सकता है। महाराजा रायसिंह जी के समय का गद्य का सर्वोत्तम उदाहरण इसमें मिलता है[1]।

....

१—डा० दशरथ शर्मा : दयालदास की ख्यात भाग २ भूमिका पृ० ५

गद्य का उदाहरण—

"ताहरां कुंवर श्री दलपतसिंह जी री दृष्टि पडियो दलपत कुंवरे देखि अर राव दुरगै नूं कहियो जु औ कटारौ बाहे मानसिंघ नूं देखौ का सूं झालौ। ताहरां राव दुरगै हाथ झालियौ—"

ख्यातेतर-गद्य-साहित्य

ख्यातों के अतिरिक्त १—पीढ़ियावली (वंशावली), २—हाल, अहवाल, हगीगत, याददाश्त आदि -: ३—विगत : ४—पट्टा परवाना : ५—इलकाबनामा : ६—जन्म पत्रियाँ : ७—तहकीकात आदि मिलती हैं जिनका संक्षिप्त विवरण यहां दिया जाता है :—

१—पीढ़ियावली (वंशावली)

क—राठौड़ा री वंशावली—आदिनारायण से राठौड़ वंश की उत्पत्ति तथा उसकी एक अपूर्ण वंशावली।

ख—बीकानेर रा राठौड़ राजावां री वंशावली – आदिनारायण से महाराजा रतनसिंह (१६२ वें) तक बीकानेर के राठौड़ों की वंशावली है जिसमें केवल नाम ही अंकित हैं।

ग—बीकानेर रा राठौड़ राजावां री पीढ़ियां राव बीका सूं महाराजा अनोपसिंह जी ताई :—राव बीका जी से महाराजा अनूपसिंह जी तक की वंशावली : इसके उपरान्त ईडर राठौड़ शासकों की सोनग से भगवानदास तक पीढ़ियावली अंकित है।

घ—खीचीवाड़ा रा राठौड़ां री पीढियां:– सूजा के पुत्र देईदास तथा उनके पुत्र हरराज के वशजों की नामावली है। जो (हरराज) खीचियावाड़ा के पड में स्थिर हुआ। नामावली का संवत् १७६३ वि० दिया हुआ है।

च—राठौड़ अखैराजोतां री पीढ़ियां:– अखैराज राठौड़ के वंशजों की क्रमिक नामावली मात्र।

छ—सीसौदियां री वंसावली तथा पीढियां:– ब्रह्मा से राणा सरूपसिंह तक की वंशावली। राणा सरूपसिंह के शासन काल में वंशावली लिखने

का कार्य समाप्त हुआ, ऐसा लिखा है। इसके उपरान्त गुहादित्य से राणाओं की वंशावली लिखी हुई है जिसके अन्तर्गत विभिन्न शाखाओं की पीढ़ियावली भी सम्मिलित हैं। इसमें सं० १७७१ वि० तक का वृत्तान्त मिलता है।

ज—कछवाहां री वंसावलीः– कुन्तल से महासिंहोत जयसिंह तक की कछवाहा वंशावली अंकित है।

झ—देवड़ा सीरोही रा धणियां री वंसावली तथा पीढ़ियां:– राव लाखण से राव अखैराज तक सिरोही के देवड़ाओं की वंशावली।

ट—राठौड़ां ईडर रा धणियां री वंसावली तथा पीढ़ियां:–– सोनग सिंहावत से कल्याणमलौत जगन्नाथ तक के ईडर शासकों की वंशानुक्रमणिका जिसमें रानियों के नाम भी लिखे हुए हैं।

ठ—सीसोदियां री बंसावली तथा पीढियां नै जागीरदारां री फैरिस्तः– सीसोदिया राणा लिखमसी से जगतसिंह (मृत्यु सं० १७०६) तक की वंशावली तथा साथ ही उनके पुत्रों तथा पत्नियों की नामावली भी है। इसके उपरान्त शक्तावत एवं देवलिया वंशों की पीढ़ियावली लिखी है। तत्पश्चात फिर जगतसिंह की मृत्यु एवं उसकी रानियों का उल्लेख है। अन्त में विभिन्न जागीरों की नामावली तथा उनसे होने वाली आय के साथ उनके जागीरदारों का भी उल्लेख है।

ड—जैसलमेर रा भाटियां री वंसावली:–भाटियों की तीन विभिन्न पीढ़ियां : प्रथम में नारायण से रावल जसवन्त तक, द्वितीय में दशरथ से जैतसी एवं दयालदासौत सबलसिंह तक, तृतीय में जैसल से रावल भींव (जन्म सं० १६१८) तक की वंशावली है। द्वितीय वंशावली में जैतसी से सबलसिंह तक वंश की रानियों तथा राजकुमारों के भी नाम हैं। द्वितीय और तृतीय पीढ़ियावली में भाटियों को सूर्यवंशी बताया गया है।

ढ—हाडां री वंसावलीः– सोमेश्वर (प्रथम) पृथ्वीराज, से छत्रसालौत भावसिंह (२६ वां) तक हाडाओं की-वंशावली की सूची।

ण—राठौडां रा खांपां री विगत ने पीढ़ियां:- जसवंतसिंह के समय में बनी हुई राठौड़ों की विभिन्न खांपों का वर्णन उनकी उत्पत्ति तथा पीढ़ियावली।

त—राठौड़ां रै गनायतां री खांपवार पीढ़ियाँ :—जोधपुर नरेश महाराजा जसवंतसिंह जी के समय के राठौड़ों के अतिरिक्त सरदारों की नामावली उनकी छोटी छोटी वंशावली के साथ।

थ—बांधवगढ़ रा धणी बाघेलां री वंशावली :—बांधवगढ़ के (बघेलखंड में) बघेलों की वंशावली का संक्षिप्त परिचय जिसमें उनका उत्पत्ति स्थान गुजरात माना है। वहां से वे वीरसिंह के साथ बघेलखंड में आये (वीरसिंह प्रयाग की यात्रा के लिये गये वहां लोधा राजपूतों को मारकर बघेलखंड के अधिपति बन गये) उसकी पीढ़ी में विक्रमजीत से अकबर ने राज्य छीना तथा जहाँगीर ने उसे फिर से सिंहासन पर बिठा दिया।

द—राठौड़ां री पीढ़ियाँ राउ सीहै जी सूं बीकानेर रै राउ कल्याण-मल जी ताँई :—इसमें बीकानेर के राठौड़ शासकों की वंशावली है जिसमें केवल नामों का ही उल्लेख है।

ध—राठौड़ाँ री पट्टावली आसपास सूं बीकानेर रै राजा सूरजसिंघ जी तांई :—आसपास के राजा सूरजसिंह तक बीकानेर के राठौड़ शासकों की नामावली मात्र।

न—काँधलौतां री पीढ़ियाँ —काँधलौत राठौड़ों की वंशावली के नामों का उल्लेख मात्र है।

प—जोधावत जोधपुर रै धणियां री पीढ़ियां :—जोधा जी के वंश धारियों की नामावली जो सिंहासन के अधिकारी हुए। कहीं केवल नामों के स्थान पर विवरणात्मक लघु टिप्पणियां भी हैं।

फ—भाटियां री पीढ़ियां :—जैसलमेर, देरावर, वीकमपुर, पूगल, हापासर के भाटियों की नामावली।

ब—राठौणां री वंसावली :—राजा पदार्थ से कुंवर जगतसिंह की मृत्यु तक जोधपुर में राठौड़ों का ऐतिहासिक चित्रण है।

२—हाल अहवाल, हगीगत याददाश्त आदि

क—सांखलां दहियां सूं जांगलूं लियो तैरो हाल :—अजियापुर (जांगलू) एवं पृथ्वीराज पर छोटी सी मनोरंजक टिप्पणी तथा सांखलों

ने किस प्रकार दहियों से आँफलूं जीता इसका भी विवरण है।

ख—पातसाह औरंगजेब री हकीकत :—प्रारम्भिक दो पृष्ठों में अकबर, जहाँगीर तथा शाहजहाँ के शासनकाल की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख है। औरंगजेब के शासन का विस्तृत विवरण है जिसमें उसके जोधपुर से युद्ध तथा विजय (सं० १७४३) का विवरण है।

ग—दिल्ली रै पातसाहां री याद :—सुलतान समका गोरी से जहाँगीर (७३ वाँ) तक दिल्ली के मुसलमान सम्राटों की नामावली मात्र है। यह अपेक्षाकृत अर्वाचीन लिखी हुई ज्ञात होती है।

घ—राउ जोधै जी री वेढां कियां री याद :—राव जोधा जी द्वारा किये गये युद्धों की नामावली।

३–विगत

क—महाराजा मानसिंघ जी रै राणियां पासवानां कंवरां बाका भाई हुवा तिणां री वि.त :—महाराजा मानसिंह जी के पुत्रों की नामावली।

ख—महाराजा तख्तसिंह रै कंवरां री विगत :—महाराजा तख्तसिंह जी के पुत्रों की नामावली।

ग—चारणों रा सासणां री विगत :—इसमें सात स्वतंत्र टिप्पणियां हैं १—गोघेलावास नामक गांव जिसको सासण में बीकानेर नरेश पृथ्वीराज तथा मारवाड़ नरेश सगर के समय में (१६७२ वि०) खिड़िया चीर को दिया गया था उसका विवरण है। २—सगर के द्वारा चरणों का आसिपा गणेश, भीसणदुर्गा तथा धिमाच खींड़ा इन तीनों गांवों को दिये जाने पर टिप्पणियां हैं। ३—राव रणमल के सम्बन्ध में कुछ पद्य एवं गद्य में वर्णन जो चित्तौड़ में मारा गया था, खिड़िया चांनड़ के द्वारा जलाया गया वह (खिड़िया चांनड़) मारवाड़ आया वहां सं० १५१८ वि० में राव जोधा ने उसे गोघेलावास दिया। ४—चिरजी की लघु वंशावली का वर्णन ५—चुरली के चारण देमला पर टिप्पणी ६—खुण्डला तथा खातावास के आसिपा चारणों पर टिप्पणी। ७—जगदीशपुरा के खिड़िया चारणों पर टिप्पणी।

घ—बूंदेलां री विगत—बुन्देलों की पीढ़ियावली जिसमें उनको

गेरवार राजपूत बतलाया गया है तथा उनका बनारस से समीपवर्ती डूंडिया खेड़े, गेरशाह रायचन्दे के समय में जाना लिखा है। डूंडिया खेड़े से हाल (बेसस का एक सरदार) के साथ गोंडवाणा वहां से ओरछा के समीप कुड़ार जाकर बस गये। पीढ़ियावली झूंझारसिंह के पुत्रों तक चलती है जिनका (पुत्रों का) नाम नहीं दिया है।

च—गढ़ कोटां री विगत :—जोधपुर, मंडोवर, अजमेर, चित्तौड़, जेसलमेर, जालौर, सिवाणां, बीकानेर, सोजत, मेड़ता, जेतारण, फलोदी, सांगानेर, पोहकरण, आगरा, अहमदाबाद, बुरहानपुर, सीकरी फतहपुर, कुंभलमेर, उदयपुर एवं नागौर की स्थापना के विषय में टिप्पणियां हैं।

छ—जोधपुर रा देवस्थानां री विगत :—जोधपुर के प्राचीन मन्दिरों का (उनकी स्थापना के विषय में विशेष रूप से) विवरण तथा उनकी नामावली है।

ज—जोधपुररा निवाणां री विगत – जोधपुर शहर तथा उसके समीपवर्ती प्रदेश के तालाब, कुयें, बावड़ी, जंगल, कुंड आदि की नामावली।

झ—जोधपुर बागायत री विगत:– जोधपुर के प्रधान उद्यान उनकी स्थिति, वृक्ष, कुएं आदि का वर्णन।

ट—जोधपुर गढ थी जिके जितरे कोसे छै त्यांरी विगत:– जोधपुर तथा समीवर्ती गाँव, परगना, तथा इसके स्थानों की दूरी कोसों में उल्लिखित है।

ठ—गढ़ां साका हुवा त्यां री विगत:—रणथंभोर विजय (सं० १३५२ वि०) तथा अन्य कुछ शहरों के विजय तथा युद्धों की तिथियों का वर्णन टिप्पणियों के रूप में है।

ड—पातसाह साहजिहाँ रै बेटां उमरावां ने मनसप री विगतः– शाहजहां के पुत्र तथा उनको मनसब का विवरण। इसका आरम्भ शाहजादा दारा से होता है तथा अन्त भोजराज कछवाहा से।

ढ—पातसाह साहजिहां रै सूबां री विगत:– शाहजहां के २१ प्रान्तों की नामावली उनकी आय तथा परगना के साथ।

ण—पातसाही मुनसप री विगत:– मनसबदारों की विभिन्न श्रेणियां पूर्ण विवरण के साथ।

त—छत्रीवंस री सार्खा री विगतः– पंवार, गहलोत चौहान, भाटी, सोलंकी, परिहार, गोहिया एवं राठौड़ की शाखाओं की नामावली।

थ—श्री जी रा डेरां री विगतः– जोधपुर दरबार जब डेरों में होते थे उस समय विभिन्न मनुष्यों की विभिन्न श्रेणियों तथा स्थानों का विवरण।

द—हुजदारां रै गांव रोकड़ री विगतः– सं० १६६७ से सं० १७०५ वि० तक के जोधपुर प्रधान कर्मचारियों की तथा गांवों की नामावली।

ध—राजसिंघ जी रो बेटियां रा बनौला में दरबार सूं मेलियौ तिणरी विगतः– सं० १६६६ वि० में राजसिंह की सात पुत्रियों के विवाह में महाराजा जसवंतसिंह द्वारा लाहौर से आसोप को भेजे गये उपहारों का वर्णन।

न—आंबेर जैसिंघ जी रा मरण पर टीकौ मेलियो तिण री विगतः– जयसिंह जी की मृत्यु (सं० १७२४ वि०) पर उत्तराधिकारी रामसिंह के लिये जोधपुर नरेश द्वारा भेजा गया टीका– १ हाथी, २ घोड़े, कुछ वस्त्र उसका विवरण।

प—तिंहवारां में मोताद पावै त्यांरी विगतः– प्रमुख पर्वों पर महाराजा के द्वारा नाई, वैद्य, ड्योढीदार आदि को दिये जाने वाले उपहारों का वर्णन।

फ—जैसलमेर रावल अमरसिंघ जी रा मरण पर टीकौ मेलियौ तिण री विगतः– सं० १७६० वि० में जोधपुर नरेश अजीतसिंह के द्वारा जैसलमेर के रावल अमरसिंह जी की मृत्यु पर उत्तराधिकारी रावल जसवंतसिंह के राज्याभिषेक के समय पर भेजे गये (टीका) उपहारों का वर्णन।

ब—बहू जी सेखावत जी अन्तरंगदे जी री अधरणी री विगत– महाराज जसवंतसिंह जी की रानी सेखावत जी के अधरणी[1] के समय (सं० १७०८ वि०) दिये गये उपहारों का वर्णन।

भ—कंवर जी रै जनम उछव रा खरच तथा पटां री विगतः– महाराजा जसवंतसिंह जी के राजकुंवर पृथ्वीसिंह (जन्म सं० १७०६) तथा जगतसिंह (जन्म सं० १७२३) के जन्मोत्सव के उपलक्ष में हुए व्यय तथा उनको दी गई जागीरों का वर्णन।

....

१—एक प्रकार का उत्सव जो गर्भावस्था के समय मनाया जाता है।

म—जातां री खांपां री विगतः– वैष्णव, पुरोहित ब्राह्मण, पटेल, चारण, जाट, कलाल, रैबारी, कायस्थ, जैन गच्छ, सुनार, डूम, मुहणोत, बनिया आदि जातियों की शाखाओं को सूची मात्र : तथा अन्त में राणा लाखा की सहायता से राठौड़ राव रिणमल द्वारा सं० १४४४ वि० में मुसलमानों, नागौर-विजय पर तथा खींवसी द्वारा उनको फुसलाने पर टिप्पणियां।

य—पैडांरी विगतः– जोधपुर से मेवाड़ के तथा कुछ भारत के नगरों की दूरी (कोसों में) की सूची।

र—भुज नै नवानगर रा जाडेजां री विगतः—भुज तथा नवानगर के जाडेजां के स्थान पर टिप्पणी : यह राव भारा के द्वारा भुज नगर बसाने से (सं० १६४४) प्रारम्भ होती है। जाय जोसा की पुत्री प्रेमा का जोधपुर के महाराज गजसिंह से विवाह (सं० १६८०), अजा के पुत्र लाखा के राज्याभिषेक का समय सं० १७०२ तथा रिणमल के भाई रायसिंह का राज्याभिषेक का समय सं० १७१८ दिया है। शखपाड़ा के युद्ध सं० १७१६ वि० के साथ साथ इसकी समाप्ति होती है।

ल—हिन्दुस्तान रा सहरां री छेटी तथा विगतः– भारत के प्रमुख नगरों–प्रधानतः सागर (तटीय) का संक्षिप्त परिचय।

व—अणहलपाटण रा छावड़ा भाण नै सोलंकी (राज बीज) तथा मूलराज री विगतः– सोलंकी भाई राज तथा बीज अनहलवाड़ा के अन्तिम छावड़ा शासक के विश्वास पात्र बने। उसने अपनी बहिन रुक्मणी का विवाह राज के साथ किया। राज के पुत्र मूलराज ने किस प्रकार अपने पिता को मारकर राज्याधिकार किया इसका विवरण है।

श—बीदावतां री विगतः– राव जोधा जी द्वारा जीते गये लाडणू, छापर तथा द्रोणपुर का वर्णन है जो उन्होंने अपने पुत्र बीदे जी को दिये। बीदेजो के सात पुत्रों की नामावली है। आगे बीदावतों और बीकानेर के राठौड़ शासक तथा नागौर के नरेशों से सम्बन्ध बताया गया है।

४—पट्टा परवाना—

क—परधाना रौ तथा उमरावां रौ पटौः– महाराजा जसवंतसिंह जी (जोधपुर नरेश) के प्रधान खिंवावत राठौड़ की जागीर तथा उमराव सूरजमलौत महेशदास की जागीर का वर्णन।

ख—राणीपदां री नेग तथा पटौः– सूरजसिंह की रानी सौभागदे, गजसिंह की रानी प्रतापदे, जसवंतसिंह की रानी जसवंत दे को दिये गये उपहारों तथा जागीरों का वर्णन।

५–इलकाव नामा—

क—इलकावनांवौ अंगरेजां री तरफ सूं श्री हजूर साहिबां रै नावै आवै तथा श्री हजूर साहिबां री तरफ सूं जावै तिण री नकलः– महाराजा जोधपुर एवं ब्रिटिश सरकार के पत्र व्यवहार की प्रतिलिपि।

ख—कागदां रा इलकावः– जोधपुर के महाराजा गंगासिंह तथा जसवंतसिंह जी द्वारा जयपुर नरेश महाराजा जयसिंह को, बूंदी नरेश शत्रुसाल को, बीकानेर नरेश कर्णसिंह तथा अन्य मारवाड़ के प्रमुख जागीरदारों को लिखे हुये पत्रों का संग्रह है। महाराजा अजीतसिंह के द्वारा दी गई एक सनद भी इसमें संलग्न है।

ग—खलीतां री नकलः– जोधपुर के महाराजा तथा उदयपुर के राणा के मध्य में हुये पांच पत्रों की प्रतिलिपि।

१—महाराजा अजीतसिंह तथा राणा संग्रामसिंह के मध्य (सं० १७७५)
२—कुंवर विजयसिंह तथा राणा जगतसिंह के मध्य (सं० अज्ञात)
३—महाराजा विजयसिंह तथा राणा अड़सी के मध्य (सं० १८२१)
४—राणा अड़सी तथा महाराजा विजयसिंह के मध्य (सं० १८२४)
५—राणा संग्रामसिंह तथा महाराजा अजीतसिंह के मध्य (समय अज्ञात)

६–जन्मपत्रियां—

क—राजा री तथा पातसाहां री जनम पत्रियांः– जोधा से लेकर मानसिंह के पुत्रों तक जोधपुर के शासकों की; चौहान प्रथ्वीराज, कछवाहा सवाई जैसिंघ तथा प्रतापसिंह; एवं अकबर से लेकर औरंगजेब तक के देहली सम्राटों की जन्मपत्रियां इसमें हैं। जसवंतसिंह (द्वितीय) की जन्मपत्री पश्चात किसी दूसरे से बढाई है।

७—तहकीकात—

क—जयपुर वारदात री तहकीकात री पोथीः– इसमें जयपुर में होने वाली घटना का विवरण है।

२—धार्मिक-गद्य-साहित्य

"विकास काल" में धार्मिक-गद्य केवल जैन आचार्यों द्वारा ही लिखा गया था किन्तु इस काल में ब्राह्मण-विद्वानों ने भी धर्म-प्रचार के लिये राजस्थानी-गद्य का प्रयोग किया। इस प्रकार इस काल के धार्मिक-गद्य-साहित्य को दो भागों में विभक्त किया गया है :—

क—जैन-धार्मिक-गद्य-साहित्य

ख—पौराणिक-गद्य-साहित्य

क-जैन-धार्मिक-गद्य-साहित्य—

इस काल में जैन-धार्मिक-गद्य ६ रूपों में मिलता है :—१—टीकात्मक २—व्याख्यान ३-प्रश्नोत्तर-ग्रंथ ४-विधि-विधान ५-तत्व-ज्ञान ६—कथा-साहित्य।

टीकात्मक-गद्य :—

बालावबोध लेखन की परम्परा इस काल में भी चलती रही। अब गुजराती और राजस्थानी दोनों अलग अलग भाषायें हो गई थीं अतः जैन-आचार्यों ने दोनों भाषाओं के प्रयोग अपने बालावबोध में किये। राजस्थानी के प्रमुख बालावबोधकार इस प्रकार हैं :—

१—साधुकीर्ति[1] (खरतरगच्छ)

इनके पिता ओसवाल वंशीय सचिंती गोत्र के शाह वस्तिग थे। श्री दयाकलश जी के शिष्य श्री अमरमाणिक्य जी इनके गुरु थे। बाल्यकाल

....

१—देखिये :— क-जैन-गूर्जर-कविओ, भाग २ पृ० ७१६
ख-वही, भाग ३ पृ० १५६६
ग-जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टिप्पणी ८५१, ८८१, ८८४, ८९६-९७
घ-युग-प्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० १९२
च-ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह पृ० ४४

से ही इन्होंने अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय देना प्रारम्भ कर दिया था। सं० १६२५ में आगरे में अकबर की सभा में इन्होंने तपागच्छीय आचार्यों को पोषह की चर्चा में निरुत्तर किया।[1] वैशाख सुदी १५ सं० १६३२ में श्री जिनचन्द्र सूरि ने इनको उपाध्याय पद प्रदान किया। सं० १६४६ में जालौर पहुँचने पर वहीं इनका स्वर्गवास हुआ। यहां पर संघ ने इनका स्तूप भी बनवाया है।

इनके लिखे हुए गद्य और पद्य दोनों के ग्रंथ मिलते हैं। गद्य-ग्रंथों में "सप्तस्मरण बालावबोध"[2] है इसकी रचना सं० १६११ में हुई।

वाचक विमलतिलक, साधुसुन्दर, महिमसुन्दर आदि इनके शिष्य थे जिन्होंने अपनी विद्वत्ता का परिचय अपने ग्रंथों में दिया है। साधुसुन्दर का "उक्तिरत्नाकर"[3] उल्लेखनीय है।

२—सोमविमलसूरि[4] (लघुतपागच्छ)

इनका जन्म सं० १५७० में हुआ। सं० १५७४ वैसाख शुक्ला ३ को श्री हेमविमल सूरि द्वारा अहमदाबाद में इनका दीक्षा संस्कार हुआ। सं० १५६० में इन्होंने गणि-पद प्राप्त किया। सं० १५६५ में इनके वाचक-पद प्राप्त करने के उपलक्ष में महोत्सव मनाया गया। आचार्य श्री सौभाग्यहर्षसूरि ने इनको सूरिपद प्रदान किया। सं० १६०२ में अहमदाबाद में, सं० १६०५ में स्तम्भतीर्थ में, सं० १६०८ में राजपुर में, सं० १६१० में पाटण में, इन्होंने अपने चातुर्मास किये। सं० १६३७ में इनका स्वर्गवास हुआ। अपने जीवनकाल में इन्होंने कई ग्रंथों की रचना की। गद्य ग्रंथों में २ बालावबोध और एक टब्बा प्राप्त हैं :—

....

१—इस शास्त्रार्थ की विजय का वृत्तान्त कनकसोम कृत "जयतपद वेलि" में विस्तार से दिया गया है।

२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

३—ह० प्र० श्री मुनि विनयसागर-संग्रह, कोटा में विद्यमान।

४—देखिये :— क-लघु पोसालिक पट्टावली पृ० ४४-४७
ख-जैन-गूर्जर-कविओ भाग १ पृ० १५६६
ग-जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ७६१, ७७६, ८६१, ८६६, ६७३

१—दशवैकालिक सूत्र बालावबोध[1] २—कल्पसूत्र बालावबोध[2] (रचना सं० १६२५) ३—कल्पसूत्र टव्वा[3]

३—चारित्रसिंह[4] (खरतरगच्छ)

यह खरतरगच्छ श्रीमतिभद्र के शिष्य थे। इनकी गणना परम विद्वानों एवं उच्च कोटि के कवियों में की जाती थी। इन्होंने गद्य और पद्य दोनों में ८ रचनाये की हैं। गद्य रचना सम्यक्त्वविचारस्तवन बालावबोध सं० १६३३ में भ्रूमरपुर में लिखी गई। इसके अन्तिम २ पत्र अभय-जैन पुस्तकालय में विद्यमान हैं।

४—जयसोम[5]

श्री जिनमाणिक्यसूरि ने सं० १६०५ में इनको दीक्षित कर इनका नाम जयसोम रखा। इससे पूर्व की प्रशस्तियों में इनका नाम जयसिंह मिलता है, ये क्षेमशाखा में प्रमोदमाणिक्यजी के शिष्य थे। कहा जाता है कि इन्होंने अकबर की सभा के किसी विद्वान को शास्त्रार्थ में निरुत्तर किया था। यह इनकी विद्वत्ता का प्रमाण हो सकता है। इनके, सस्कृत प्राकृत एवं लोकभाषा के लगभग १२ ग्रंथ मिलते हैं। लोकभाषा-गद्य की कृति प्रश्नोत्तर ग्रंथ है जिसकी रचना सं० १६५० में की गई थी[6]।

५—शिवनिधान (खरतरगच्छ)

यह श्रीजिनदत्तसूरि की शिष्य-परम्परा में श्री हर्षसार के शिष्य थे। इनके शिष्यों में महिमसिंह, मतिसिंह आदि प्रमुख शिष्य थे जिन्होंने

....

१—ह० प्र० खेड़ा-संघ-भंडार में विद्यमान
२—ह० प्र० लीमड़ी-भंडार में विद्यमान
३—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान
४—देखिये:— क—जैन-गूर्जर-कविओ, भाग ३ पृ० १५१४, १५६६
ख—वही भाग २ पृ० ७३६
ग—जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ८५६, ८८२
घ—युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० १९७
५—देखिये:— क—जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५६७
६—युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० १९७-२०३
७—जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १५६८

कई पद्य ग्रंथों की रचनायें की। अपने पूर्वज मेरुसुन्दर की भांति इन्होंने भी कई उपयोगी ग्रंथों की लोक भाषा में टीकायें की। इनको गद्य पुस्तकों में ५ बालावबोध इस प्रकार हैं १-शाश्वत-स्तवन पर बालावबोध[1] (सं० १६५२ में शाकम्भरि में लिखित) २-लघु संग्रहणी बालावबोध[2] (सं० १६८० में अमरसर में लिखित) ३-कल्पसूत्र पर बालावबोध[3] (सं० १६८० में अमरसर में लिखित) ४-गुणस्थान गर्भित जिनस्तवन बालावबोध[4] (सं० १६६२ में लिखित) ५-कृष्ण वेलि पर बालावबोध। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित गद्य-ग्रंथ और मिलते हैं १-योगशास्त्र टब्बा+ २-कल्पसूत्र टब्बा[5] ३-चौमासी व्याख्यान ४-विधि प्रकाश[6]। ५-कालकाचार्य-कथा।

६-विमलकीर्ति[7]

इनके पिता हुंबड़ गोत्रीय श्री चन्द्रशाह और माता गवरा देवी थीं। सं० १६५४ में इन्होंने उपाध्याय साधुसुन्दर से दीक्षा ग्रहण की। श्री जिन-राजसूरि ने इनको वाचक पद पर प्रतिष्ठित किया[8]। सं० १६६२ में किरहोर में इनका स्वर्गवास हो गया[9]।

इनकी लिखी हुई १० गद्य-कृतियों में ६ बालावबोध हैं। "विचार पट्त्रिंशिका (दंडक) बालावबोध" एवं षष्ठिशतक-बालावबोध अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर, में विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त श्री देसाई ने अपने "जैन-गूर्जर-कवियो" भाग ३ में निम्नांकित रचनाओं का उल्लेख किया है:- १-जीवविचार बालावबोध २-नवतत्व बालावबोध ३-दंडक

....

१—म० जै० वि० में ह० प्र० विद्यमान।
२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।
३—ह० प्र० बीजापुर में विद्यमान।
४—ह० प्र० सांगानेर में विद्यमान।
५—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।
६—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। मुनि विनय-सागर संग्रह, कोटा।
७—जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १६०२।
+—ह० प्र० तपा भंडार जैसलमेर में विद्यमान।
८—ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह पृ० ४६
९—युग प्रधान जिनचन्द्र सूरि, पृ० १६३

बालावबोध ४-पक्खीसूत्र बालावबोध ५-दशवैकालिक बालावबोध ६-प्रतिक्रमण समाचारी बालावबोध ७-उपदेशमाला बालावबोध ८-प्रतिक्रमणटब्बा।

७-समयसुन्दर[1] (खरतरगच्छ)

इनके पिता श्री पोरवाड़ शाह रूपसी और माता लीलादेवी थीं। बाल्यकाल में ही इन्होंने श्री जिनचन्द्रसूरि से चारित्र ग्रहण किया। इनके विद्या गुरु वाचक श्री महिमराज एवं श्री समयराज वाचक थे। इनकी विद्वत्ता भी विख्यात थी। सं० १६४६ में यह श्री जिनचन्द्रसूरि के साथ लाहौर गये वहाँ अकबर की सभा में अष्टलक्षि नामक ग्रंथ सुनाकर वाचक पद प्राप्त किया। सिन्ध में विहार करके वहां गौ रक्षा का प्रशंसनीय कार्य किया। जैसलमेर में रावल श्री भीमजी को उपदेश देकर मीणों के हाथों से सांडा नामक जीवों को मारने से बचाया। सं० १६७१ में श्री जिनसिंहसूरि ने लवेरे नामक ग्राम में इनको उपाध्याय पद प्रदान किया। चैत्र शुक्ला १३ सं० १७०२ में अहमदाबाद में इनका देहावसान हो गया।

यह राजस्थानी साहित्य के एक बहुत बड़े लेखक थे। इन्होंने कई ग्रंथों की रचना की। गद्य-ग्रंथों में "षडावश्यक-सूत्र-बालावबोध"[2] (र० सं० १६८३) एवं "यति आराधना भाषा"[3] (रचना सं० १६८५) उल्लेखनीय हैं।

८-पूरचन्द्र[4]-

इनके जन्म-स्थान, माता एवं वंश आदि के विषय में कुछ भी नहीं

....

१-देखिये:—क-जैन-गूर्जर-कविओ, भाग ३ पृ० १६०७
ख-जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास टि० ५६, १३०, १३४, १४६, ३७४, ८४१, ८४४, ८४७, ५०७, ८६४, ८७६, ८६४, ६०४, ६०६, ६१०, ६५६, ९८०, ६६५
ग-युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरि पृ० १६७-६८
२—ह० प्र० ज्ञान भंडार जैसलमेर में विद्यमान।
३—ह० प्र० मुनि विनयसागर संग्रह कोटा में विद्यमान।
४—देखिये :—क-कविवर सूरचन्द्र और उनका साहित्य :-"जैन-सिद्धान्त-भास्कर" भाग १७, किरण १ पृ० २४
ख-जैन-गूर्जर-कविओ भाग ३ पृ० १६०६

मिलता। संस्कृत एवं लोकभाषा में इन्होंने लिखा है। राजस्थानी-गद्य में लिखी हुई 'चातुर्मासिक व्याख्यान बालावबोध" सं० १६६४ की रचना है।

मतिकीर्ति[1] (खरतरगच्छ)

यह श्री गुणविनय (खरतरगच्छ) के शिष्य थे। इनके गद्य-ग्रंथों में प्रश्नोत्तर-ग्रंथ का उल्लेख स्वर्गीय श्री देसाई ने अपने जैन-गूर्जर-कविश्रो भाग २ पृ० १६०६ में किया है।[2]

इन लेखकों के अतिरिक्त अनेक जैन-विद्वानों ने अपनी गद्य-रचनाओं में राजस्थानी का प्रयोग किया है। इन गद्य लेखकों एवं इनकी रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं:—

लेखक	गद्य-रचना	लेखन-समय
१०—चन्द्रधर्म गणि (तपा०)	युगादिदेव स्तोत्र बाला०	१६३३ वि०
११—पद्मसुन्दर (खरतर०)	प्रवचन सारोद्धार बाला०	१६५१ वि०
१२—नगर्षि (तपा०)	संग्रहणी टबार्थ	१६५३ लगभग
१३—श्रीपाल (ऋषि)	दशवैकालिक सूत्र बाला०	१६६४ वि०
१४—कमललाभ (खरतर०) जिनचन्द्रसूरि, समयराज, अभयसुन्दर शि०	उत्तराध्ययन बाला०	
१५—कल्याणसागर	दानशील तपभाव तरंगिनी	१६६४ वि०
१६—नयविलास (खरतर०)	लोकनाल बाला०	१६४० लगभग
१७—ब्रह्मर्षि (ब्रह्ममुनि)	लोकमालिका बाला०	
१८—विनयविमल शि०	जीवाभिगम सूत्र बाला०	
१९—धनविजय (तपा०)	छ कर्म ग्रंथ पर बाला०	१७०० वि०
२०—श्री हर्ष	कर्म ग्रंथ पर बाला०	१७०० वि०
२१—विमलरत्न सूरि	वीर चरित बाला०	१७०२ वि०
	जय तिहुअण बाला०	
	वृहत् संग्रहणी बाला०	
	शत्रुञ्जय स्तवन बाला०	
	नमुत्थुणं बाला०	
	कल्पसूत्र बाला०	

१—युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि पृ० २०२
२—ह० प्र० ज्ञान भंडार बीकानेर में विद्यमान

२२-राजसोम	श्रावकाराधना बाला०	
	इरियावही मिथ्यादुष्कृत स्तवन बाला०	
२३-हंसराज	द्रव्य संग्रह बाला०	१७०६ वि०
२४-कुंवर विजय	रत्नाकर पंचविंशति बाला०	१७१४ वि०
२५-पद्मचन्द्र	नवतत्व बाला०	१७१७ वि०
२६-वृद्धिविजय	उपदेशमाला बाला०	१७२३ वि०
२७-विद्याविलास	कल्पसूत्र स्तवन	१७३६ वि०
२८-यशोविजय उपा०	पंच निर्ग्रंथी बाला०	
	महावीर स्तवन स्वोपज्ञ बा०	१७३३ वि०
	ज्ञानसार पर स्वोपज्ञ बा०	
२९-जीतविमल	ऋषभ पंचाशिका बाला०	१७४४ वि०
३०-विजयजिनेन्द्रसूरि शि०	स्थूलिभद्र चरित्र बाला०	१७६२ वि०
३१-अमृतसागर	सर्वज्ञशतक बाला०	१७४६ वि०
३२-सुखसागर	कल्पसूत्र बाला०	१७६२ वि०
	दीवाली कल्प बाला०	१७६३ वि०
	नवतत्व बाला०	१७६६ वि०
	पाक्षिक सूत्र बाला०	१७७३ वि०
३३-सभाचन्द्र	ज्ञानसुखड़ी	१७६७ वि०
३४-रामविजय	उपदेशमाला बाला०	१७८१ वि०
	नेमिनाथ चरित्र बाला०	१७८४ वि०
३५-लावण्यविजय	योगशास्त्र बाला०	१७८८ वि०
३६-भोजसागर	आचार प्रदीप बाला०	१७६८ वि०
३७-भानुविजय	पार्श्वनाथ चरित्र बाला०	१८०० वि०

इन रचनाओं के अतिरिक्त कई रचनायें ऐसी प्राप्त हैं जिनके लेखकों के नाम अज्ञात हैं। यह रचनायें राजस्थानी एवं गुजराती गद्य में मिलती हैं क्योंकि राजस्थान और गुजरात यह दो क्षेत्र ही जैन आचार्यों की निवास भूमि हैं। सोलहवीं शताब्दी के उपरान्त जब राजस्थानी और गुजराती दोनों स्वतन्त्र भाषायें हो गईं तब भी इन जैन आचार्यों की रचनाओं की भाषा और शैली में कोई आकस्मिक अन्तर दिखाई नहीं पड़ता। धीरे धीरे उपरान्त की रचनाओं में यह भेद विस्तृत हो गया।

२-व्याख्यान

इन व्याख्यानों के विषय पर्व-विधि और पर्व-अनुष्ठान के महात्म्य

हैं। यह व्याख्यान टीका और स्वतन्त्र दोनों रूपों में मिलते हैं। सौभाग्य-पंचमी, मौन एकादशी, दीपावली, होलिका, ज्ञान पंचमी, अक्षय तृतीया, आदि सभी पर्वों पर इन व्याख्यानों का पठन पाठन होता है। पर्व को मनाने की विधि, उस दिन किये जाने वाले अनुष्ठान आदि का विवरण इस प्रकार के ग्रंथों में दिया जाता है। उदाहरण के लिये "दीपावली-कल्प" और "सौभाग्य-पंचमी" व्याख्यानों को लीजिए। प्रथम में दीपावली से सम्बन्धित व्रत एवं आचार विचारों को कहानियां द्वारा दृष्टान्त देकर समझाया गया है। इसी प्रकार "सौभाग्य पंचमी" व्याख्यान में कार्तिक सुदी पंचमी का माहात्म्य और उसकी तपस्या का फल दृष्टान्त देकर बताया है।

इनका गद्य समझने के लिये कुछ उदाहरण यहां दिये जाते हैं:—

१—श्री आदिनाथ पुत्र प्रथम चक्रवर्त्ति श्री भरत तेहनइ मरीचि इणै नामिइ पुत्र हूयउ। अनेरइ दिवसे आदिनाथ नइ केवलज्ञान ऊपनइ कुंतई अयोध्या आव्या, देवताए समोसरनो रचना कीधी, तिणि अवसर वन-पालिकि आवी भरत नई वधावणी दीधी[1]।

२—श्री फलवधी पार्श्वनाथ प्रतै नमस्कार करी नै काती सुद पांचम तप नो महिमा वर्णवीयै छै। भविक प्राणी नैं उपगार भणी जिम पूर्वले आचार्य कह्यौ छै तिम हुं पिण कहिस्युं। भुवन कहितां तीने त्रिभुवन में सर्व अर्थनो साधक नौ करणहार ज्ञान छै। ज्ञान सेती मुक्ति पांमी जै। ज्ञान सेती देवलोक का सुख पामो जै। तिणे वास्तै भविक प्राणियो प्रमाद छांडी नै काती सुदि पाँचम तपस्या करो भलो तरे आराधउ। जिण भांति तै गुण मंजरी अनै वरदत्त जिम पांचिम आराधी। दृष्टात ... .[2]

३—प्रश्नोत्तर-ग्रंथ

प्रश्नोत्तर रूप में ग्रंथ लिखना जैन धर्म में एक परिपाटी सी ही चल पड़ी है। संस्कृत और प्राकृत प्रश्नोत्तर ग्रंथों के अनुवाद राजस्थानी भाषा में भी हुये, साथ ही उसी अनुकरण पर स्वतन्त्र प्रश्नोत्तर - ग्रंथ लिखे जाते रहे। इन प्रश्नोत्तर ग्रंथों में जिज्ञासु प्रश्न करता है और आचार्य उसका उत्तर देकर उसकी जिज्ञासा का समाधान करते हैं। उदाहरण के

....

१—"दीपावली भाषा कल्प" ह० प्र० अ० स० पु० बीकानेर में विद्यमान
२—"सौभाग्यपंचमी व्याख्यान" ह० प्र० अ० जै० पु० बीकानेर में विद्यमान

लिये क्षमाकल्याण द्वारा रचित "प्रश्नोत्तर-सार्द्ध-शतक[1]" (रचना सं० १८७४) तथा "विशेष-शतक[2]" (रचना काल १८८१) देखे जा सकते हैं। पहले ग्रंथ में भगवान तीर्थंकर व्याख्यान दे रहे हैं, जिज्ञासु प्रश्न करता है, और तीर्थंकर उसका समाधान करते हैं। इस ग्रंथ में कुल १५० प्रश्नों के उत्तर संग्रहीत हैं[3]। दूसरा संस्कृत का अनुवाद है। इसमें १०० प्रश्नों के उत्तर हैं।

भाषा की दृष्टि से प्रथम रचना पर गुजराती का तथा द्वितीय पर खड़ी बोली का प्रभाव दिखाई देता है। उदाहरणतः—

१—'चोबीस में बोलै समय २ अनंती हानि छै ए वचन सूत्र अनुसार छै। पिण कहण मात्र हीज नहीं छै समय २ एकेक वस्तु ना २ पर्याय घटै छै। पंचकल्पभाष्य में जंबूद्वीपपन्नत्तीसूत्र में वृत्ति में विस्तारै ये विचार कह्यो छै।"

प्रश्नोत्तरसार्द्धशतक पत्र २ (ख)

२—प्रश्न-पोया फूल से जिनराज जी की पूजा होय के नहीं, तब उत्तर कहे है-पोया फूल से जिनराज की पूजा होय। श्राद्धदिनकल्पसूत्र टीका में तैसे ही कह्यो है।

-विशेष शतक पत्र ६ (ख)

४-विधिविधान

यह जैनियों के कर्मकाण्ड के ग्रंथ हैं। इनमें पूजा-विधि, सामायिक, तपश्चर्या, प्रतिक्रमण, पौषध, उपधान, दीक्षा विधि आदि पर प्रकाश डाला गया है। "श्वेताम्बर दिगम्बर ८४ बोल[3]" में दिगम्बर और श्वेताम्बर के ८४ भेदों को समझाया गया है। "खरतर तपा समाचारी भेद[4]" में खरतर-गच्छ तथा तपागच्छ के समाचारी भेद को स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार

....

१—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर तथा मुनि विनयसागर संग्रह कोटा में विद्यमान

२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर तथा मुनि विनयसागर संग्रह कोटा में विद्यमान

३—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।

४—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।

के ग्रंथ भी कई मिलते हैं। सुमतिकल्याण कृत "श्रावक विधि प्रकाश[1]" और शिवनिधान कृत "श्राद्धमार्गविधि[2]" आदि इसी प्रकार के ग्रंथ हैं।

गद्य का उदाहरण—

१—केवली ने आहार न माने दिगम्बर, स्वेतांबर माने, केवली ने नीहार न माने दिगम्बर, स्वेताम्बर माने। केवली ने उपसर्ग न मानैं दिगम्बर, स्वेताम्बर माने। + + + + आभरण सहित प्रतिमा न माने दिगम्बर, स्वेताम्बर माने। चवदै उपगरण दिगम्बर न मानै, स्वेताम्बर चवदै उपगरण साधु राखे।

—दिगम्बर श्वेताम्बर ८४ बोल

२—खरतर विहार में अचित पाणी लै सचित पाणी लै तपा सचित न लैं। आंबिलै पिण सचित नो विशेष नहीं खरतर रै। खरतर उपवास तिंविहार कीधै पाछले पहरै तिविहार चोविहार करे। तपा परभात रो पचखाण सूरज उगतै ताई करै।

—खरतर तपा समाचारी भेद

५—तत्त्वज्ञान

इसके अन्तर्गत जैन दार्शनिक-विचार धारा के ग्रंथ आते हैं। इन जैन-दर्शन के ग्रंथों की संख्या बहुत बड़ी है। "आत्मनिंदा-भाषा[3]" और "आत्म-शिक्षा-भावना[4]" यह दोनों ग्रंथ उदाहरण के लिए उपयुक्त हो सकते हैं। दोनों का विषय आत्मा से सम्बन्ध रखता है। प्रथम में आत्मा की चिन्तन एवं मनन में बाधक मान कर कोसा गया है। दूसरी में आत्मा को सन्मार्ग पर चलने के लिये समझाया गया है। दोनों की शैली में बहुत अन्तर है। दोनों के लेखकों के नाम अज्ञात हैं। इन दोनों के गद्य को देखने के लिये क्रमशः २ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :—

१—हे आत्मा; हे चेतन, ऐ कुदृष्टां, ऐ कुश्रद्धायां, ऐ कार्यप्रवृत्ति, ऐ

....

१—ह० प्र० मुनि विनयसागर-संग्रह, कोटा में विद्यमान
२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान
३—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान
४—ह० प्र० अभय-जैन पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

रस गृथ्थीपणौ, ऐ घोटी घोटी दृष्टां सामाइक दोय घड़ी मात्रा में तु मत चिंतवन कर। क्यां रे तु सम्यक्त मोहिनी क्या, रे तु मिश्र मोहिनी, क्यां रे कामराग में, क्यां रे स्नेहराग में, क्यां रे दृष्टि राग में।......

—आत्मनिन्दा भाषा पत्र १ (क)

२—संसार माइं जीव नइं पांच प्रमाद महा वयरी जाणिवा। जिम कुण ही एकनइं एक वयरी हुइ। अनइ तेह वयरी बीहतउ सावधान थकउ रहइ। गाणे रवे वयरी मारइं। जां लगइ वइरी नइ वसिनावइं। तां लगइं वयरी पाखती प्रच्छन्न थिकउं छाड़इं नहीं।............ ...

—आत्म शिक्षा भावना

६—कथा-साहित्य

जैन-धार्मिक-कहानियों की परम्परा बहुत प्राचीन काल से चली आती है। मध्यकालीन अवस्था तक पहुंचने के लिये इन्हें कई स्तर पार करने पड़े। यह सभी कथायें प्राय. धार्मिक दृष्टि से ही उपयोगी हैं। यद्यपि इनके अतिरिक्त भी कुछ कहानिया ऐसी हैं जिनमें विनोदात्मक, ऐतिहासिक या बुद्धि-वर्द्धक तत्वों का समावेश है[1]। जैन-साहित्य में कथाओं के २ रूप मिलते हैं:— १-विकथा २-धर्म-कथा। पहली के अन्तर्गत भक्त कथा, स्त्री-कथा और राष्ट्र-कथा आती हैं तथा दूसरी के अन्तर्गत धर्म-चर्चात्मक एव उपदेशात्मक कहानियां समाहित हैं। यह कथायें गद्य और पद्य दोनों रूपों में मिलती हैं।

जैनागम-काल की कथायें—

जैनागम साहित्य में ४ अनुयोग बतलाये गये हैं[2]। जिनमें प्रथमानुयोग में सदाचार सम्बन्धी कथाओं का उल्लेख है। जिनका विषय १—धार्मिक विधान के अनुसार सदाचारों का आचरण, २—मार्ग में विघ्न बाधायें, ३—सदाचार की प्रतिज्ञाओं का निभाना, और ४—उसका परिणाम है। उपासकदशांग सूत्र में इसी प्रकार के धार्मिक आचारों का पालन करने

....

१—आराधना-कथा-कोष एवं नन्दी-सूत्र की कथायें, राजशेखरसूरि के कथा ग्रंथ की कथायें तथा प्रबन्ध-संग्रह की कथायें इनके उदाहरण हैं।

२—विशेष अध्ययन के लिये देखिये:—"जैन-भारती" वर्ष ११, सं० १ पृ० २२।

वाले १० श्रावकों की कथा है। "अन्तगडदसा[1]" में तपस्या एवं उपवासों के द्वारा स्वर्ग-प्राप्ति की कथायें हैं। अनुत्तरोपपातिक, अन्तःकृद्दशांग, मूलाचार आदि उल्लेखनीय कथा-ग्रंथ हैं। इस काल की कुछ कथाओं का संग्रह "दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ" के नाम से प्रकाशित भी हो चुका है।

जैनागम-टीका-काल की कथायें—

विक्रम की पांचवीं से नवीं शताब्दी तक जैनागमों पर नियुक्तियां, भाष्य, चूर्णि और टीकायें लिखी गई[2]। इस काल में स्वतन्त्र-कथा-ग्रंथ बहुत कम लिखे गये। "वसुदेवहिण्डी", "पउमचरित्रम्" "धम्मिलहिण्डी" "हरिवंश-पुराण" आदि स्वतन्त्र कथा ग्रंथ कहे जा सकते हैं[3]। प्रथम २ ग्रंथ महाभारत और रामायण के कथा-नायक कृष्ण और राम से सम्बन्धित हैं[4]। पौराणिक महापुरुषों की कथाओं के आधार पर "तरंगवती", "मलयवती", "मगधसेना", "बन्धुमती", "सुलोचना" आदि कथाओं की रचना जैन विद्वानों ने की; क्योंकि इस समय वासवदत्ता, सुमनोत्तरा, उर्वशी नरवाहनदत्ता, शकुन्तला, नलदमयन्ती आदि पौराणिक कथायें बहुत प्रचलित थीं इन्हीं के अनुकरण पर जैन-आचार्यों द्वारा उक्त कथायें लिखी गई। आठवीं शताब्दी में श्री हरिभद्रसूरि ने "धूर्ताख्यान[5]" की रचना कर उसमें जैनेतर पुराणों की लोक प्रसिद्ध कथाओं का विनोदपूर्ण प्रस्तुत किया। इनका दूसरा कथा-ग्रंथ "समराइच्च-कहा[6]" भी प्रसिद्ध है। श्री हरिसेन का "आराधना-कथा-कोष", श्री रविसेण का "पद्मपुराण", जयसिंह का "वरांगचरित्र", धनपाल का "भविष्यदत्त-कथा" आदि नवीन शैली के कथा ग्रंथों की रचना हुई। प्राचीन साहित्य से प्रमुख तत्व लेकर सर्व श्री जिनसेन,

....

१—देखिये:—"विश्व-भारती" वर्ष ३ अंक ४

२—विशेष अध्ययन के लिये देखिये—डा० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्याय एम० ए० डी० लिट० द्वारा संपादित "वृहद्कथाकोष" की भूमिका।

३—इन कथा ग्रंथों के मूल रूप अब अप्राप्य हैं।

४—विशेष अध्ययन के लिये देखिये:— नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका वर्ष ५२ अंक १ श्री नाहटा जी का "जैन-साहित्यिक-लेख"

५—सिन्धी-जैन-ग्रंथ-माला में प्रकाशित

६—रायल ऐशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, डा० हर्मन जैकोबी द्वारा संपादित।

गुणभद्र तथा हेमचन्द्र ने संस्कृत में, श्री शीलाचार्य, श्री भद्रेश्वर आदि ने प्राकृत में और पुष्पदन्त आदि ने अपभ्रंश में बड़ी बड़ी कहानियों की रचना की।

प्रकरण-ग्रंथ

दसवीं शताब्दी से तो जैन-मौलिक-कथा-ग्रन्थों की रचना का क्रम चल पड़ा। श्र। दि० हरिसेनसूरि का "बृहद्-कथा-कोष"[1] (रचनाकाल सं० ६८१) श्वे० श्री जिनेश्वरसूरि एवं श्री देवभद्रसूरि आदि के कथा-संग्रह इस काल में मिलते हैं। प्रकरण-ग्रन्थों में धर्मोपदेश के दृष्टान्त या महापुरुषों के गुण स्मरण रूप में अनेक व्यक्तियों के नाम आये हैं। जिनका विस्तृत निर्देश टीकाकारों ने अपनी कथाओं में किया है। इस प्रकार के पचासों प्रकरण-ग्रंथ ऐसे हैं जिनमें अवांतर कथाओं के रूप में कई कथायें संग्रहीत हैं। "भरहेसर-वृत्ति", 'बाहुबली-वृत्ति", "ऋषिमण्डल-वृत्ति" आदि अनेक वृत्तियों में सहस्रों कथायें हैं। मौलिक-प्रकरण-ग्रन्थों में सदाचार एवं धर्मोपदेश के उदाहरण-रूप में कथाओं का उल्लेख हुआ है।

तेरहवीं शताब्दी में रास, चौपाई, वेलि आदि में पद्य-कथा-ग्रंथ लिखे गये। प्रारम्भ में उक्त-वर्णित-वृत्तियां छोटी ही रहीं।[2] राजस्थानी भाषा का प्रयोग भी इन में मिलता है।

राजस्थानी में जैन कथायें—

इस प्रकार जैन-साहित्य में कहानियों की परम्परा देखने के लिये डाली गई इस विहंगम दृष्टि से स्पष्ट होता है कि जैन-कथा साहित्य बहुत प्राचीन एवं विस्तृत है। पंद्रहवीं शताब्दी से राजस्थानी-गद्य में लिखी गई जैन-कथायें मिलने लगती हैं। यह सब कथायें प्रायः धार्मिक ही रहीं जिनका मूल उद्देश्य धर्मोपदेश या धर्मशिक्षा रहा। यह कथायें दो रूपों में

....

१—जैन-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास दि० ७८१—८२, ८६८ से ६०१, ६७६।
श्री नाथूराम प्रेमी का "दिगम्बर-जैन-ग्रंथ-कर्त्ता और उनके ग्रंथ।"
कुछ दिगम्बर भंडारों की सूचियां "अनेकान्त" में प्रकाशित।
पण्डित कैलाशचन्द्र शास्त्री का "जैन-सिद्धान्त-भास्कर" में प्रकाशित लेख
२—सिंघी-जैन-ग्रंथमाला में प्रकाशित

मिलती है :— १-मौलिक एवं २-अनुवाद। टीकाकारों ने व्याख्या करने के लिये इस प्रकार की कहानियों का सहारा लिया। इन कथाओं के असंख्य रूप-रूपान्तर मिलते हैं। इन कथाओं का लेखन समय एवं लेखकों का पता नहीं चलता क्योंकि इस ओर जैन-आचार्यों का ध्यान ही नहीं गया। यथा समय, अवसरानुसार उपयुक्त कहानी का प्रयोग कर आचार्यों ने अपने उद्देश्य को पूरा किया। यह कथायें ४ प्रकार की हैं :—

१—बालावबोध की कथायें
२—चरित्र कथायें
३—व्रत उपवासों की कथायें
४—हास्य-विनोदात्मक-कथायें

इन कथाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

बालावबोध की कथायें—

"बालावबोध" के अन्तर्गत आई हुई कथायें उपदेशात्मक हैं। इनकी रचनायें पन्द्रहवीं शताब्दी से प्रारम्भ हो चुकी थीं। सोलहवीं, सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में इनकी बहुत रचना हुई इसके उपरान्त इनके लेखन कार्य में शिथिलता आने लगी।

कोरे उपदेश की शिक्षा पाखंड हो सकती थी। उसका स्थायी प्रभाव अधिक समय तक नहीं रह सकता था अतः उपदेशों के साथ दृष्टान्त रूप में कथाओं को गुम्फित कर देने से जैन-आचार्यों को अपने कार्य में अधिक सफलता मिली। इन कहानियों के तीन प्रकार हैं :—

क–पारस्परिक
ख–परिवर्तित
ग–नव-रचित

पहले प्रकार की वे कहानियां हैं जिनका उदाहरण के लिये परम्परा से प्रयोग चला आता था। यह कहानियां बहुत ही लोक प्रसिद्ध हो चुकी थीं। दूसरे प्रकार की कथायें जैनेतर धर्म-कथाओं, लोक प्रचलित कथाओं, ऐतिहासिक कथाओं आदि में आवश्यक परिवर्तित कर धार्मिक शिक्षा के उपयुक्त बनाई गई। तीसरे प्रकार की कथाओं के लिये जैन-आचार्यों को कहीं बाहर नहीं जाना पड़ा। जब उनको उपर्युक्त दोनों प्रकार की

कहानियों से उद्देश्य सफल होता दिखाई न दिया तब उन्होंने अपने अनुभव, कल्पना एवं बुद्धि बल से नवीन कथाओं की सर्जना की।

यह सभी कहानियाँ रूपक या दृष्टान्त रूप में लिखी गई हैं। पिण्ड-निर्युक्ति, आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, पयन्ना, प्रतिक्रमण आदि पर रचे गये बालावबोध-ग्रंथों में सहस्रों की संख्या में यह संग्रहीत हैं। इन कथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :—

क–पाप और पुण्य की कहानियां:—

ऐसी कहानियों में पाप का दुष्परिणाम एवं पुण्य का सुफल दिखलाया गया है।

ख–श्रावकों की कहानियां:—

जैन-तीर्थंकरों के अनुयायी बन कर जिन श्रावकों ने संसार त्यागा तथा मुक्ति प्राप्त की उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं को लेकर लिखी गई कहानियों का प्रयोग भी जैन-आचार्यों ने अपने बालावबोधों में किया है।

ग–सतियों की कहानियां :—

इसके अन्तर्गत उन साध्वी स्त्रियों की कहानियां आती हैं जिन्होंने शील की रक्षा के लिए यातनाये सही। इस कष्ट सहन के परिणाम स्वरूप ही उनकी वंदना की गई है तथा इनके आधार पर कई उपदेशों की सृष्टि की गई।

घ–मनोविकारों के दमन की कहानियां :—

क्रोध, अहंकार, लोभ, मोह आदि मनोविकारों के दमन के लिये जैन-धर्म में बहुत सी शिक्षाये दी गई है। इन मनोविकारों को जीत लेना ही जीवन का प्रधान उद्देश्य है। इसीलिये जैनाचार्यों ने कई दार्ष्टान्तिक कहानियों के आधार पर अपनी शिक्षाओं को आधारित किया है।

च–पारमार्थिक कहानियां :—

सदाचार का आचरण करने वाले व्यक्तियों को प्राप्त होने वाले फल

का दिग्दर्शन इन कहानियों में किया है। सदाचरण से जो पारमार्थिक लाभ होता है उसकी महिमा ही इन कहानियों का वर्ण्य विषय है।

छ—जन्मजन्मान्तर की कहानियां:—

कर्मकाण्ड एवं पुनर्जन्म पर जैन-मत आस्था रखता है। अत: कर्मों का फल कई जीवन तक कैसा मिलता है इसका दिग्दर्शन कराने वाली कहानियों के प्रयोग भी जैन विद्वानों ने किये हैं।

ज—कष्ट सहन की कहानियां :—

परोपकार, अहिंसा आदि का स्थान जैन-मत में बहुत ऊंचा है। इनके पालन करने में जो कठिनाइयां उठानी पड़ती हैं उनका परिणाम अंततः अच्छा होता है। समाज में इन सद्गुणों की प्रतिष्ठा करने के लिये ऐसी कई कहानियाँ मिलती हैं जिनमें उदाहरण देकर इस प्रकार कष्ट सहने का माहात्म्य बताया गया है।

झ—चमत्कारिक-कहानियां :—

जैन-आचार्यों, महापुरुषों, विद्याधरों आदि के द्वारा दिखलाये गए उन चमत्कारों से सम्बन्ध रखने वाली कहानियां भी मिलती हैं जिनसे प्रभावित होकर अनेक राजा महाराजाओं ने जैन-मत ग्रहण किया। इन कहानियों में अलौकिकत्व की प्रधानता पाई जाती है।

इनके अतिरिक्त और भी कई विषय हैं जिन पर दृष्टान्त या रूपक के माध्यम से सदाचार की शिक्षा देने के लिये जैन-टीकाकारों ने अपने बालावबोधों में कहानियों के प्रयोग किये।

चारित्रिक कथायें

चारित्रिक कथायें प्रायः अनुवाद रूप में मिलती हैं। इनमें जैन-महापुरुषों एवं तीर्थंकरों आदि तथा उन श्रमण-अनुयायियों के जीवन की झांकियों के रूप में कथायें आती हैं। संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश में कल्पसूत्र आदि रूपों में लिखी गई कहानियों की भांति राजस्थानी में भी इस प्रकार की कहानियां दृष्टिगोचर होती हैं। उदाहरण के लिये

"श्रीपाल-चरित्र[1]", "नेमिनाथ-चरित्र" (टब्बा[2]) "पार्श्वनाथ या अष्ट-गणधर-चरित्र[3]" "जम्बू-चरित्र[4]" "उत्तमकुमार-चरित्र[5]" "मुनिपति-चरित्र" आदि देखे जा सकते हैं।

व्रत उपवासों की कहानियां :—

व्रत और उपवास जैन-सम्प्रदाय के अत्यन्त आवश्यक अंग रहे हैं। आत्मशुद्धि, अहिंसा आदि की साधना के लिये इनका उपयोग किया जाता रहा है। धार्मिक-पर्वों का महत्व बताने के लिये किये गये व्याख्यानों में भी इस प्रकार के व्रत और उपवासों का प्रसंग आता है। इन कथाओं की परम्परा भी प्राचीन है। संस्कृत में भी ऐसी कई कहानियां मिलती हैं[6]।

ऐसी कथाओं में व्रत और उपवास का महत्व दिखाया जाता है। यह कथायें दृष्टान्त रूप में लिखी गई हैं। इनके प्रमुख विषय इस प्रकार हैं:—

१—व्रत विशेष का महात्म्य
२—व्रत विशेष का पालन करने से पूर्व श्रावक की दशा
३—उसके द्वारा व्रत विशेष एवं अनुष्ठान आदि
४—उस व्रत की फल प्राप्ति के रूप में मनोकामना पूर्ण होना।

लोकभाषा में "सौभाग्य-पंचमी की कथा", "मौन एकादशी की कथा", "ज्ञानपंचमी की कथा" आदि अनेक कथाओं के अनुवाद मिलते हैं।

हास्य विनोदात्मक कथायें :—

उपदेशात्मक कहानियों के अतिरिक्त जैन-कथा-साहित्य में हास्य और विनोद की कहानियां भी मिलती हैं, किन्तु यह हास्य और विनोद धर्म से बाहर नहीं झांकता अतः हास्य और विनोद में भी धार्मिक तत्व अन्तर्निहित होता है। उदाहरण के लिये "धूर्तोपाख्यान" देखिये :—

....

१—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। नं० ३०५६
२—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। नं० ३००६
३—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। नं० ३०८१
४—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान। नं० ३१३४
५—ह० प्र० अभय-जैन-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान नं० ३१०४
६—विशेष अध्ययन के लिये देखिये:—जैन-सिद्धान्त-भास्कर, वर्ष ११ अंक १

इस कथा में ५ धूर्तों द्वारा सुनाये गये व्याख्यानों का उल्लेख है । ये धूर्त अपनी कथाओं में ऐसे कथानक लाते हैं जिससे आश्चर्योन्मुख मनोरंजन होता है जैसे हाथी से भयभीत होकर तिल्ली के पेड़ पर चढ़ना, उस पेड़ को हिलाया जाना, उसके फूलों का नीचे गिरना, हाथी के पैरों से कुचले जाने पर उसमें से तेल निकलना, उसकी नदी बह जाना, हाथी का उस नदी में बहकर मर जाना, उपरान्त धूर्त का नीचे उतरना, उस तेल को पी जाना और उज्जैन पहुंचकर धूर्तों का मुखिया बनजाना आदि । इसी प्रकार की और भी अनेक कथायें इस कथा ग्रंथ में आई हैं । इन कथाओं के सत्य होने का समर्थन दूसरे श्रोता-धूर्त रामायण महाभारत आदि के पुष्ट प्रमाण देकर करते हैं । इस "धूर्ताख्यान" का दूसरा पक्ष भी है। यह ग्रंथ केवल निरर्थक हास्य के लिये ही नहीं लिखा गया । इसका मूल उद्देश्य अप्रत्यक्ष रूपों में जैनेतर धर्मों में प्रचलित उपहासास्पद प्रकरणों का दिग्दर्शन कराना भी है । इस प्रकार इन दोनों उद्देश्यों की पूर्ति इस ग्रंथ में हुई है ।

प्रसंग रूप में आई हुई इस प्रकार की और भी कई कहानियां हैं जो हास्य के साथ साथ शिक्षा, जैन-मत का समर्थन, जैनेतर धर्मों की रूढियों का खण्डन या उपहास करने में सहायता करती हैं ।

ख–पौराणिक-गद्य-साहित्य

पौराणिक-धार्मिक-गद्य अनुवाद, टीका तथा कथाओं के रूप में मिलता है । पुराण, धर्मशास्त्र, माहात्म्य-ग्रंथ, स्तोत्र ग्रंथ आदि के अनुवाद राजस्थानी भाषा में प्राप्त हैं । इसके उदाहरण उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व के नहीं मिलते । इन अनुवाद और टीकाओं में एक सी भाषा और शैली को अपनाया गया है । यहाँ तक कि एक ही मूल के कई अनुवाद भी मिलते हैं । वास्तव में न तो विषय की दृष्टि से और न भाषा की दृष्टि से यह साहित्य के विद्यार्थी के काम के हैं । केवल धार्मिक-साहित्य की एक विशेष गद्य-शैली के रूप में ही इनका महत्व है । उदाहरण के लिए उक्त विषयों के कुछ अनुवाद एवं टीकाओं का उल्लेख ही अलम् होगा ।

पौराणिक विषयों में गरुड़ पुराण तथा भागवत के दसम स्कन्ध के अनुवाद लिये जा सकते हैं । इनमें प्रथम के ८ अनुवाद मिले हैं[1] जिनमें

१—यह सभी हस्त प्रतियां अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान हैं ।

३ अनुवाद तो लक्ष्मीधर व्यास, श्रीकृष्ण व्यास तथा श्री हीरालाल रताणी ने क्रमशः सम्वत् १८७७, सं० १८८६, सं० १९१३ में किये। चौथे अनुवाद का लेखन समय सं० १९१४ मिलता है। शेष ४ अनुवादों के न तो लेखक का पता चलता है और न उसके लेखन समय का।

धर्मशास्त्र-विषयक "कर्मविपाक" तथा प्रतिष्ठानुक्रमणिका २ अनुवाद हैं। कर्मविपाक में कर्ममीमांसा तथा दूसरे में प्रमुख प्रतिष्ठानों का उल्लेख हुआ है। माहात्म्य-ग्रंथों में स्कन्धपुराणान्तर्गत एकादशी माहात्म्य तथा इसी विषय का बारह एकादशी के माहात्म्य से सम्बन्ध रखने वाले अनुवाद मिलते हैं। दूसरा अनुवाद अपनी प्रश्नोत्तरी भाषा के लिए उल्लेखनीय है। स्तोत्र ग्रंथों में १—किसन-ध्यान-टीका[1] २-रामदेव जी महाराज रो सिलोको[2] ३-विष्णु-सहस्रनाम-टीका[3] आदि हैं। इनमें टीकाओं के साथ साथ संस्कृत में मूल पाठ भी दिया है।

वेदान्त के विषयों में भगवद्गीता की टीकायें भी महत्वपूर्ण हैं। "अरजन गीता[4]" में अर्जुन द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर भगवान कृष्ण संक्षेप में उसे गीता का सार समझाते हैं। इसका कलेवर बहुत ही छोटा है। भगवद्गीता की दो टीकायें "भगवद्गीता-टीका[5]" तथा "भगवद्गीता-संक्षेपानुवाद[6]" भी इसी प्रकार की है। इनमें प्रथम अधिक प्राचीन प्रतीत होती है। इसके प्रारम्भिक एवं अन्त के कुछ पत्र नष्ट हो गये हैं। दूसरी प्रति अर्वाचीन है इसमें संस्कृत का मूल पाठ नहीं है किन्तु इसकी भाषा प्रथम की अपेक्षा कम प्रौढ़ है। दूसरी कृति से मिलती जुलती "भगवद्गीता-सार[7]" नाम की एक संक्षिप्त टीका और है जिसमें अर्जुन और कृष्ण के पारस्परिक संवाद है। इसमें अध्याय का क्रम नहीं रखा गया है।

....

१—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

२—वही

३—वही

४—वही

५—वही

६—वही

७—वही

कथायें—

ये कथायें २ प्रकार की हैं १—व्रत-कथायें २—पौराणिक-कथायें।

धार्मिक-उपदेश, नैतिक-परम्परा तथा कर्मकाण्ड की महत्ता दिखाना ही व्रत-कथाओं का उद्देश्य है। ये कथायें पर्व-विशेष, तिथि विशेष या वार (दिन) विशेष से सम्बन्ध रखती हैं। व्रत-कर्मकाण्ड इनका महत्वपूर्ण अंग है। जैन-कथाओं या बौद्धों की जातक कथाओं का प्रयोग जिस प्रकार धार्मिक उद्देश्य से किया गया है उसी प्रकार दृष्टान्त रूप में इन कथाओं का उपयोग हुआ है। व्रत-कथाओं में व्रत का माहात्म्य इस प्रकार दिखाया जाता है कि साधारण जनता इनकी ओर स्वाभाविक रूप से आकर्षित हो जाती है। ये कथायें परिणाम रूप में मनोवांछित फल प्रदान करने वाली होती हैं। इन कथाओं का प्रारम्भ प्रमुख देवताओं से माना गया है। जैसे अमुक व्रत-कथा सूर्य ने याज्ञवल्क से कही, कृष्ण ने युधिष्टर से कही या कृष्ण ने नारद से कही इत्यादि। उस व्रत के पालन करने का किस को कौनसा फल मिला, उस व्रत पालन की क्या विधियाँ हैं, क्या अनुष्ठान हैं ये सभी बातें इन कथाओं में मिलती हैं। एकादशी, नृसिंह-चतुर्दशी, जन्माष्टमी, रामनौमी, सोमवती-अमावस्या, ऋषि-पंचमी, बुद्धाष्टमी, गणेश चतुर्थी आदि अनेक कथाये इसी प्रकार की हैं [1]। ये सभी कथायें संस्कृत कथाओं पर आधारित हैं।

व्रत कथाओं के अतिरिक्त कुछ अनूदित कथायें ऐसी भी हैं जो पुराण, महाभारत, रामायण आदि की कथायें हैं। जैसे—नासिकेत री कथा, ध्रुव-चरित्र, रामचरित री कथा, तन्त-भागवत, शान्ति पर्व री कथा इत्यादि[1]।

इन कथाओं की भाषा और शैली प्रायः मिलती जुलती है। चलती भाषा ही काम में लाई गई है। देशज शब्दों के प्रयोग भी अधिक मिलते हैं। एक उदाहरण देखिये—

"गंगाजी रो तट छे। विसंपायन रिषेसुर बारै बरसां री तपस्या करने बैठा छै। बरत सूं ध्यान करनै बैठा छै। तठै राजा जयसेन आयौ। आय नें विसंपायन जी सूं निमस्कार कीयो। निमस्कार करि नै राजा पूछियौ श्री रिषेसुर जी थें मोटी बुध रा धनी को। रिषेसुरां में बड़ा छो। श्री व्यास जी रा सिष छो थें मोनूं पाप मुचनी कथा सुनाओ।"

—नासिकेत री कथा[1]

....

१—ह० प्र० अनूप-संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

३—कलात्मक - गद्य

क—बात-साहित्य

कहानी का बीज-विन्दु

मानव की रागात्मक-प्रवृत्ति में ही साहित्य-सर्जना की मूल शक्ति अन्तर्निहित है। संसार का सम्पूर्ण साहित्य मानव के मनोभाव एवं मनोविकारों का इतिहास है। कहानी साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है जिसमें मानव की औत्सुक्य वृत्ति को मनोरंजनात्मक शान्ति मिलती है। मनोवैज्ञानिक धरातल पर, चाहे वह वैयक्तिक हो अथवा सामूहिक, कहानी की रूपरेखा बनी है—उसका विकास और विस्तार हुआ है। संक्षेप में कहानी का बीज-विन्दु मानव के भावना-क्षेत्र की जिज्ञासा एवं कुतूहल का निकटतम सम्बन्धी है।

आदि मानव और आदि प्रवृत्ति

आदि मानव की आदि प्रवृत्ति तथा उसके व्यापार इतने विस्तृत नहीं थे। इस अवस्था तक पहुंचने के लिये उसे कई ऊंची नीची भूमियां पार करनी पड़ीं। प्रारम्भ-काल में प्रकृति ही उसके लिये सब कुछ थी। उसने प्रकृति को समझना प्रारम्भ किया। इस प्रकार उसे कई अवस्थाओं में से निकलना पड़ा होगा। इन अवस्थाओं का आनुमानिक अनुक्रम इस प्रकार हो सकता है —

१—प्रकृति और आदिमानव का सम्पर्क।
२—उसके द्वारा प्रकृति में देवत्व एवं आत्मतत्व का आरोप।
३—प्रकृति में परा-प्रकृति की अवधारणा।
४—मानव, प्रकृति और परा-प्रकृति में पारस्परिक सम्पर्क तथा कार्य-कारण साम्य, अंश-अंशी की कल्पना।

प्रथम अवस्था में आदि मानव को प्रकृति से भय हुआ। आतंक से पराभूत होकर दूसरी अवस्था तक पहुंचने तक उसने प्रकृति की उपासना आरम्भ करदी। सूर्य, इन्द्र, अग्नि आदि में उसे देवत्व दिखाई पड़ा। यह अवस्था अधिक स्थायी नहीं रह सकी। उसकी समझ में धीरे धीरे आने

लगा और उसको प्रकृति का रहस्य ज्ञात हुआ। परिणामतः उसका आतंक कम होने लगा। वह प्रकृति के विविध उपादानों को अपनी ही भांति प्राणवान समझने लगा। तीसरी अवस्था में उसने प्रत्यक्ष-प्रकृति की सीमा से बाहर झांका। उसे किसी अन्य कर्त्तव्य-शक्ति का आभास हुआ। इसके कारण वह चौथी अवस्था में आ पहुंचा तथा अपने में भी वह एक असीम शक्ति का आविर्भाव समझने लगा। उसे कार्य कारण का ज्ञान हुआ तथा उस असीम शक्ति के साथ उसने अंश-अंशी का सम्बन्ध स्थापित किया।

मानव की ज्ञान-भूमियां—

आदि काल से अर्जित मानव का ज्ञान-स्रोत प्रधान रूप से २ धाराओं में प्रभावित हुआ। १—विशिष्ट और २—साधारण, पहले प्रकार का ज्ञान समाज नियंता ऋषि-महर्षियों की थाती बना जिसके आधार पर उन्होंने समाज की व्यवस्था की। इसके लिये उनके पास दो अमोघ शस्त्र थे : श्रद्धा और भय। धार्मिक शिक्षा के लिये श्रद्धा बहुत आवश्यक वस्तु थी जिसके बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता था। दूसरा था दंड का आतंक। यह भी एक ऐसा अंकुश था जिसके कारण पीछे नहीं हटा जा सकता था। पाप और पुण्य के धरातल निश्चित हुए। सामाजिक ज्ञान से समाज में परस्पर नैतिक सम्बन्ध एवं मनोरंजन की सामग्री एकत्रित की गई।

यह सब कार्य कहानी के द्वारा ही सम्पन्न हुआ। वैदिक काल, उपनिषद्-काल, पौराणिक-काल, रामायण तथा महाभारत-काल सभी में कहानियों का प्रभुत्व रहा है। बौद्ध-धर्म की जातक कथायें तथा जैनों के धर्म-ग्रंथों की कथायें भी धार्मिक शिक्षा के महत्वपूर्ण अंग रही है।

भारत के प्राय: सभी प्रान्तों में इस प्रकार की धार्मिक, नैतिक या उपदेशात्मक-कथायें किसी न किसी रूप में लोक-भाषा में मिलती हैं। इनके अतिरिक्त प्रान्त की स्थानीय सभ्यता एव संस्कृति के आधार पर भी कहानियां बनती रहीं। यह क्रम अब भी चल रहा है।

राजस्थान भी इसका अपवाद नहीं रह सका। यहां की राजनैतिक परिस्थिति, सभ्यता एवं संस्कृति के मान, प्रचलित आचार-व्यवहार, आदर्श आदि का प्रभाव यहां की कथा-साहित्य पर पड़ा, इन्हीं के आधार पर पारम्परिक कथायें चलती रहीं तथा नवीन कहानियों की रचना भी बन्द नहीं हुई। इन कहानियों के असंख्य रूप-रूपान्तर प्राप्त होते हैं।

राजस्थानी-वार्तों पर सांस्कृतिक प्रभाव

राजस्थान की कहानियों पर प्रमुखतः चार संस्कृतियों का प्रभाव पड़ा। १–ब्राह्मण-संस्कृति २–जैन-संस्कृति ३–राजपूत संस्कृति तथा ४–मुस्लिम संस्कृति। इनमें प्रथम दो संस्कृतियों के प्रभाव प्राचीन हैं। ब्राह्मण कथा साहित्य में पौराणिक, आनुष्ठानिक एवं नैतिक या उपदेशात्मक रहीं[1]। जैन कथा-साहित्य में दृष्टान्त रूप में उनका उपयोग हुआ है[1]। राजपूत संस्कृति से प्रभावित होने वाली कहानियां ऐतिहासिक वीर पुरुषों से सम्बन्ध रखने वाली हैं। इनमें राजपूतों के आदर्श का चित्रण हुआ है। मुसलमानों के आने पर उनकी संस्कृति का प्रभाव यहां के (राजस्थान के) कथा साहित्य पर भी पड़ा। फलस्वरूप कुछ ऐसी कहानियां भी मिलती हैं जिनमें वासनात्मक प्रेम आदि की छाप दिखाई देती है।

राजस्थानी-वार्तों का वर्गीकरण

सम्पूर्ण राजस्थानी वातों को स्थूल रूप से दो भागों में विभक्त कर सकते हैं :— १–मौखिक और संग्रहीत २–पारम्परिक, नव-रचित एवं अनूदित

मौखिक और संग्रहीत—

कहानी सुनने और सुनाने का एक नैसर्गिक व्यापार है। राजस्थान में भी असंख्य कहानिया सुनी और सुनाई जाती हैं। यह कहानियां "वात" नाम से पुकारी गई हैं। कहानियां कहने और सुनने वालों की तीन कोटियां मिलती हैं : १–घर के भीतर २–मुहल्ले या गांव की चौपाल में ३–धनिकों के रग महल में।

घर में भोजन कर लेने के उपरान्त बच्चे और बूढ़े जब सोने की तैयारी करने लगते हैं तब बच्चे अपनी बूढ़ी दादी, नानी या मां से कहानी सुनाने का आग्रह करते हैं। बच्चों का मन रखने के लिये कहानियां सुनाई जाती हैं। एक दो कहानियां से बच्चों का मन नहीं भरता। उनका "एक और" कथन तब तक समाप्त नहीं होता जब तक उनको नींद नहीं आ जाय कहानी कहने वाले के पास भी उनका अक्षय भंडार होता है।

....

१–पिछले पृष्ठों में इनका विवरण दिया जा चुका है।

गांवों में रात्रि के समय, प्रमुख रूप से शीतकाल की दीर्घ-रात्रियों में भोजन करने के उपरान्त बीच में आग जलाकर जब ग्राम वासी अग्नि के आस-पास गोलाकार रूप में बैठकर ठंड से छुटकारा पाने का प्रयास करते हैं तब इधर-उधर की चर्चा के उपरान्त कहानियों का रंग जमता है। कहानी कहना भी एक कला है और सुनना भी। एक व्यक्ति कहानी कहने लगता है और श्रोताओं में से कोई एक "हूंकारा" देता है। इस "हूंकारे" के बिना कहानी में रस नहीं आता + तथा कहने वाले का उत्साह भी• ठंडा पड़ जाता है। इसीलिये राजस्थान में यह कहावत प्रसिद्ध हो गई है "वात में हूंकारा, फौज में नगारा"

धनिकों का मन बहलाने के लिये कहानी भी एक साधन है। यहां उचित वेतन पर व्यवसायी कहानी कहने वाला नियुक्त किया जाता है। भोजन आदि से निवृत्त होकर मसनदों के सहारे बैठे हुए रईस कहानी सुनते हैं, उनके आसपास कुछ आदमी और बैठ जाते हैं। पेशेवर कहानी कहने वाले की कहानियों में कला एवं रसात्मकता अधिक होती हैं। लम्बी चौड़ी भूमिका के उपरान्त कहानी का आरम्भ होता है। प्रसंगवश आये हुए वर्णनात्मक स्थानों का बड़ी सजावट के साथ चित्रण किया जाता है। यह कहानियां छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी होती हैं, यहां तक कि एक-एक कहानी कहने में रातें बीत जाती हैं पर सुनने वालों की उत्सुकता में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आता।

यह मौखिक वातें कर्ण-परम्परा के आधार पर फलती फूलती रहती हैं। लोक-रुचि एवं लोकरंजन के अनुसार समय-समय पर परिवर्तित एवं परिवर्द्धित होती रहती हैं।

इन मौखिक वातों में से कुछ को लिपिबद्ध करने का प्रयास अत्यन्त आधुनिक है। लिखित रूप में आ जाने पर इन वातों का कलेवर निश्चित हो गया है, अब उसके परिवर्तन का कोई कारण नहीं रहा। अब वे पठन-पाठन की वस्तु हो गई हैं। इन संग्रहों के लेखक एवं लेखन-समय का उल्लेख नहीं मिलता, इसीलिये इनका लिपि काल निश्चित नहीं किया जा सकता फिर भी यह कहा जा सकता है कि अठारहवीं शताब्दी से पूर्व के ऐसे प्रयास अब उपलब्ध नहीं हैं।

पारम्परिक-नव-रचित एवं अनूदित

संग्रहीत वातों में तीन प्रकार की कथायें मिलती हैं :— १—पारम्परिक

२—नव-रचित एवं ३—अनूदित। पारम्परिक वातें तो श्रुत-परम्परा से मौखिक रूप में चली आती हुई वातों का यथावत संग्रह है। कुछ कहानियों की नवीन सृष्टि भी हुई क्योंकि कथा-सर्जन लोक-मानस की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। इनके अतिरिक्त पौराणिक काल की कथाओं के भाषानुवाद भी राजस्थानी में किये गये। रामायण और महाभारत की कथायें उल्लेखनीय हैं।

राजस्थानी के संग्रहीत वात साहित्य को २ प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है—क—अर्द्धैतिहासिक वातें, ख—अनैतिहासिक या काल्पनिक वातें।

क—अर्द्धैतिहासिक-वातें

अर्द्धैतिहासिक वे वातें हैं जिनमें पात्र एवं घटनाओं में से एक ऐतिहासिक हो, ये कहानियां इतिहास से भिन्न होती हैं। इनमें या तो पात्र ऐतिहासिक होते हैं और घटनायें अनैतिहासिक या ऐतिहासिक घटनाओं में कुछ काल्पनिक परिवर्तन अनैतिहासिक पात्रों के प्रयोग से कर दिये जाते हैं।

राजस्थान सदैव से ही अपनी वीरता तथा बलिदान और वैभव के लिये प्रसिद्ध रहा है। राजपूतों के युद्ध और प्रेम, आत्मसम्मान की भावना, शरणदायिनी शक्ति, प्रजा-पालन आदि साहित्य के लिये शाश्वत प्रेरणा के मनोहर उत्स हैं। राजपूत रमणियों के जौहर उनकी सतीत्व निष्ठा एवं वीरता आदि आज भी अलौकिक वस्तु जान पड़ती है। इस प्रकार जीवन के स्पन्दन का अनुभव इन कथाओं में मिलता है। ये अर्द्धैतिहासिक कथायें दो प्रकार की है :— अ—वीर गाथात्मक, आ—प्रेम गाथात्मक।

अ—वीर गाथात्मक अर्द्धैतिहासिक कथायें

वीरता राजस्थान का आदर्श रहा है अतः कहानियों में किसी न किसी प्रकार से यह तत्व पाया जाता है। व्यक्ति या व्यक्तियों के जीवन-चरित्र इसी को केन्द्र मान कर चले हैं। स्वदेश-प्रेम, जाति-प्रेम, गौरक्षा, आत्म-सम्मान आदि के लिये अपने प्राण विसर्जन तक कर देना यहां का प्रधान आदर्श रहा। इस प्रकार की कुछ कथायें निम्नांकित हैं।

"राव अमरसिंह जी री वात"[1] (लिपिकाल सं० १७०६) इस कथा

१—भारतीय-विद्या, वर्ष २ अंक १ पृ० ३४

में राव अमरसिंह से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। जैसे, जोधपुर-नरेश महाराजा गजसिंह द्वारा अमरसिंह को जोधपुर से निष्कासित किया जाना, अमरसिंह का बादशाह शाहजहां के समीप पहुंचना, बादशाह द्वारा उनको नागौर जागीर में मिलना, बीकानेर से युद्ध, सलावत-खां से उनकी खटपट तथा भरे दरबार में उसको कटार से मार डालना, असावधान अवस्था में उन पर खलील खां का आक्रमण, उसकी असफलता, अर्जुनसिंह गौड़ द्वारा धोखे से अमरसिंह का मारा जाना। बादशाह द्वारा उनका शव उनके साथियों को देना, उनके साथियों द्वारा युद्ध, अर्जुनसिंह द्वारा बादशाह को भड़काना, बादशाह का क्रोधित होकर राजपूतों को लुटवाना, कुछ राजपूतों का मारा जाना, अमरसिंह की रानियां का सती होना आदि स्थानों पर अमरसिंह का व्यक्तित्व व्यक्त हुआ है। "फमै धीरंधार री बात" में फमै नामक एक वीर राजपूत सुवावड़ी का राजा था। जींदरै खीची ने पाबूजी की गायें चुराईं। पाबू जी ने युद्ध करके गायें छीनलीं। इस युद्ध में बूड़ो जी अपने १२ साथियों के साथ मारे गये। जींदरा अपने को असमर्थ पाकर फमै की शरण में आया। पाबू जी और फमै में युद्ध हुआ जिसमें पाबू जी मारे गये। और फमा धीरधार कहलाया। "महाराजा करणसिंह जी रा कुंवरा री बात" में बीकानेर नरेश महाराजा करणसिंह जी के चारों पुत्रों - अनूपसिंह जी, केशरीसिंह जी, पद्मसिंह जी और मोहनसिंह जी की वीरता पर प्रकाश डालने वाली घटनायें हैं। इस समय औरंगजेब देहली का सम्राट था। इन चारों कुंवरों ने उसकी सहायता की थी। केशरीसिंह जी की वीरता पर तो उसे विश्वास एवं गर्व था। इस विषय में २ दोहे प्रसिद्ध हैं—

केहरिया करणेश का तै सूजौ भगै सार
दिली सुपने देख सी गयो समुंदा पार।
पिंड सूजौ पाधारियौ औरंग लियौ उबारि
पतिसाहो राखी पगै केहर राजकुमार।

इसीलिये औरंगजेब के राज्य में गोवध करने वाले ३२ कसाइयों को इन्होंने मौत के घाट उतार दिया और औरंगजेब ने उसका कोई प्रतिकार नहीं किया। मोहनसिंह जी ने भरे दरबार में शहर कोतवाल का वध कर दिया था। बात बहुत छोटी सी थी, उस मुसलमान कोतवाल ने मोहनसिंह जी के हिरन को अपने बंगले पर बांध लिया था तथा उसको लौटाने से इन्कार किया था। पद्मसिंह जी की वीरता से सम्बन्ध रखने वाली कथा

काल्पनिक सी जान पड़ती है। इस कथा में दिखाया गया है कि उन्होंने अपनी वीरता से किसी भूत को परास्त किया था।

इसी प्रकार "राठौड़ सीहै जी ने आसथान री वात" में कन्नौज से सीहै जी के गमन से आसथान द्वारा खेड़ विजय तक का वर्णन है। "गोहिल अरजन हमीर री वात" में अनहिलवाड़ा पाटण के सोलंकी राजा के दोनों पुत्र अरजन और हमीर की कथा है। "जैसलमेर री वात" में जैसलमेर के राज रावल रतनसिह के शासन काल में जैसलमेर पर अलाउद्दीन द्वारा किये गये आक्रमण से रावल केहर के राज्यारोहण तक का विवरण है। "नाराइन मीढ़ा खां री वात" में मांडव के पठान राजा मीढ़ा खां का बूंदी के नारायणदास के द्वारा मारा जाना दिखाया है। "राजा भीम री वात" अनहलवाड़ा पाटण के शासक भीम तथा उसके उत्तराधिकारी करण की कथा है। "खीचियां री वात" में औरंगजेब के समय में हाड़ा भगवतसिह चतरसालोत की विजय का चित्रण है। "नानिग छावड़ री वात" में नानिग, देवग, अजेसी और विजैसी इन चारों छावड़ भाइयों का सिहौरगढ़ से पोकरण आना तथा नानिग का वहां का अधिपति बनना है। "माहलां री वात" में राणा मोहिल सुरजणोत के समय से वैरसल तथा नरबद की राव गोत्रे द्वारा पराजय, बीदो का अधिपति होना वर्णित है। "रायसिंघ खींवावत री वात" में रायसिह खींवावत जोधपुर नरेश जसवंतसिंह जी का एक सरदार था। महाराजा गजसिंह जी की मृत्यु के उपरान्त वास्तविक उत्तराधिकारी अमरसिह जी के स्थान पर जसवंतसिंह जी को राजा बनाने में इन्होंने सहायता की थी। इसके अतिरिक्त मुहणौत नैणसी द्वारा की गई आर्थिक-अव्यवस्था को इनकी सहायता से जसवंतसिंह जी ने ठीक किया।

"तुंवरा री वात" हरदास मौकलोत वीरमदे दूदावत री वात" "गोपालदास गौड़ री वात", "राठौड़ ठाकुरसी जैतसीहोत री वात" आदि इसी प्रकार की व्यक्ति प्रधान वातें हैं।

इन वातों में ऐतिहासिक घटनाओं के अतिरिक्त कल्पना तथा अभौतिक तत्वों की सहायता भी ली गई है जैसे "तुंवरां री वात" में रामदे जी को अलौकिक एवं दिव्य पुरुष बतलाया गया है। पोकरण में भैरव राक्षस के रहने के कारण अजैसी उसे त्याग कर चले। राह में उनके पुत्र हो गया जिसका नाम रामदे रखा गया। इन्होंने (रामदे) बाल्यकाल

से ही अपने चमत्कार दिखाने प्रारम्भ किये। सात वर्ष की अवस्था में एक छड़ी की सहायता से ही इन्होंने उस भैरव को परास्त कर दिया।

कुछ वार्ते युद्ध की जीवित झांकियां बन पाई हैं। "चौहान सातल सोम री वात" में समीयाण गढ़ के शासक सातल एवं सोम का अलाउद्दीन से, "राव मण्डलीक री वात" में गिरनार के राव मण्डलीक का गुजरात के बादशाह महमूद से, "मारवाड़ री वात महाराजा रामसिंघ जी री" में जोधपुर के महाराजा रामसिंह जी के जीवन काल में हुये युद्धों के चित्र हैं। "जैसे-सरवहिये री वात" में चारण के उकमाने पर अहमदाबाद के बादशाह का गिरनार के शासक जैसे-सरवहिये पर आक्रमण, सरवहिये की पराजय, "पाबूजी री वात" में पाबू जी द्वारा किये गये युद्धों का विवरण है।

युद्ध के चित्र इन कहानियों में सजीव हुये हैं। उदाहरण के लिये "पाबूजी री वात" का एक उदाहरण देखिये-

.......अर पहलड़ी लड़ाई माहे चाँदे खीची नूं तरवार वाही हंती। तद पाबू जी तरवार आपड़ लीवी। कही मारो मती। बाई रांड हुसी, तद चाँदे कही राज आय तरवार आपड़ी सु बुरी कीवी। अं छोडै छै। मरिया भला। पण पाबूजी मारण दिया नहीं। तठै फौज आई। चाँदे कही राज, जो मरिया हुवौ होत तो पाप कटियो हुतो। हरामखोर आयो। तठै पाबूजी वुहा (चढ़) ने लड़ाई कीवी। वड़ो रिठ वाजियो तमूं पाबू जी काम आया।"

आ-प्रेम गाथात्मक अर्द्धैतिहासिक वातें

राजपूतों के युद्ध के साथ प्रेम और विवाह भी संलग्न हैं। दोनों में कार्य कारण का सम्बन्ध है "वीर भोग्या वसुंधरा" के सिद्धान्त को मानकर राजपूत चलते थे। वे विवाह के लिये सगुन नहीं मनाया करते थे[1]। वीर और शृंगार के इस अद्भुत संयोग से जीवन में एक प्रकार का उत्साह भरा रहता था। पद्य में ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं। गद्य में भी ये

....

१—सगुन विचारैं ब्राह्मण बनिया, सिरधरि मौर वियाहन जाहिं
सगुन विचारैं हम का खत्री, जो रण चढ़ करि लौह चबाहिं।
(आल्हाखण्ड जगनिक)

कथानक उपयोगी सिद्ध हुए। इस प्रकार के प्रेमाख्यानों में "अचलदास खींची री वात", "जगमाल मालावत री वात", "कान्हड़दे री वात", "कांधल जी री वात", "जाड़ेचा फूल री वात", "हरदास ऊहड़ री वात", "कोड़मदे री वात", "बूड़ावत री वात" आदि प्रमुख हैं। उदाहरण के लिये अचलदास खीची री वात[1] देखिये।

अचलदास खीची री वात

"अचलदास खीची री वात" राजस्थानी की अच्छी कहानियों में से है। इसमें ४ प्रमुख पात्र हैं— १–गागरोण गढ़ के अधिपति अचलदास खीची, २–झीमी चारणी, ३–अचलदास खीची की प्रथम रानी मेवाड़ के मोकल की पुत्री लालां तथा ४–उनकी दूसरी रानी, जांगलू के खीवसी की पुत्री उमा सांकड़ी। वस्तुतः यह जांगलू और गागरोण के बीच लालां और उमा की कहानी है।

इसके कथानक में ऐतिहासिक, साहित्यिक एवं अलौकिक तत्व मिलते हैं। ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि पर साहित्यिक चित्रण के लिये इसमें कल्पना का सहारा लिया गया है।

ऐतिहासिक-भूमिः–

अचलदास खीची (कोटा राज्य के अन्तर्गत गागरोण के नरेश) ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। ये मेवाड़ के राजा मोकल के जामाता थे। इनका विवाह जांगलू के खीवसी की पुत्री से भी हुआ था। कहानी के अन्त में अचलदास पर मुसलमान बादशाह का आक्रमण, राजपूतों के द्वारा किये गये जौहर का आधार भी ऐतिहासिक ही है। इसी विषय पर "अचलदास खीची की वचनिका[2]" लिखी गई है।

साहित्यिक-भूमि :–

झीमी चारणी का इस कथा में वही स्थान है जो जायसी के "पद्मावत" में हीरामन तोते का (उसके पारलौकिक संकेत को छोड़कर)।

....

१—"अचलदास खीची की वचनिका" से इसका कथानक भिन्न है।

२—अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर

राजा अचलदास खीची से वह जांगलू के सांखली की पुत्री उमा सांखली के रूप का वर्णन करती है। इस रूप वर्णन को सुनकर राजा को उमा के प्रति पूर्वराग होता है। यह पूर्वानुराग उसको राजा रत्नसेन की भांति उच्छृंखल नहीं बना देता। राजा झीमी चारणी की सहायता से उमा सांखली से विवाह करने के लिये प्रस्तुत हो जाता है। झीमी चारणी ने उमा का रूप वर्णन बड़े ही स्वाभाविक ढंग से किया है :—

"उमां साखुली मारवणी रो अवतार। आसमान सूं उतरी आयी इन्द्र री अपछरा। सरोवर रो हंस। सारद को कमल। बसंत की मंजरी। भादवा की बादली। बादलां की बीज मेह को समौलों। बावनो चंदन। सोलमो सोनो। रायकेल को प्रभ। हंस को बचो। लक्ष्मी को अवतारु। प्रभता कौ सूर। पूनम कौ चांद। सरद की चांदणी की क्रिया। सनेह की लहर। गुण को प्रवाह। रूप को निधान। गुणवंत की मूल। जोबन को खेखणो। चौसठ कला री जाण................।"

उमा के इस सौन्दर्य के प्रति राजा आकर्षित होता है। अतुल धन-राशि देकर वह झीमी चारणी को विदा करता है। झीमी चारणी जांगलू पहुंचकर विवाह-संबन्ध निश्चित करती है। इस विवाह की स्वीकृति के लिये अचलदास अपनी पहली रानी लालां मेवाड़ी के महलों में जाता है। रानी वचन लेती है। उसकी केवल एक शर्त है कि विवाह के उपरान्त उसकी अनुमति के बिना राजा उमा के महलों में न जाय। अचलदास इसे स्वीकार कर लेते हैं।

विवाह होता है, किन्तु विवाह के उपरान्त राजा गागरौण नहीं लौटता। लालां को चिन्ता होती है। वह पत्र-वाहक के साथ संदेश भेजती है कि यदि राजा नहीं लौटेंगे तो वह जल जायगी। वह रूप-गर्विता है, प्रणय-गर्विता है और वचन-गर्विता है। पत्र राजा तक नहीं पहुंच पाता। उमा उसे बीच में ही चीर कर फेंक देती है। लालां जलने को प्रस्तुत होती हैं। मन्त्री उसे रोकते हैं तथा स्वयं राजा को लिवाने के लिये जांगलू प्रस्थान करते हैं। वहां पहुंचकर वे राजा को बतलाते हैं कि उनकी अनुपस्थिति में किस प्रकार राज्य-व्यवस्था शिथिल हुई जा रही है। मन्त्री के आग्रह से राजा लौटता है।

गागरोण पहुंचकर राजा अपने वचन का पालन करता है। सात वर्ष तक वह उमा के महलों में नहीं जाता। उमा को चिन्ता होती है। वस्तु जगत के घात-प्रतिघात से हटकर वह धार्मिक क्षेत्र की ओर झुकती है। एक

दिन उसे स्वप्न होता है, जिसमें एक देवी आकर उसे गायत्री का व्रत करने का आदेश देती है। उमा उस आदेश का यथावत् पालन करती है।

अन्त में सातवें वर्ष में उस व्रत की सफलता निकट आती है। गायत्री देवी स्वयं प्रकट होकर उमा को हार का उपहार देती है। यह हार ही राजा को उसके महलों में इस प्रकार लाता है—

उमा उस दिव्य हार को पहन कर बैठी है। लालां की एक दासी उमा के इस हार को देख लेती है। वह लालां से उसकी चर्चा करती है। लालां केवल देखने के लिए उस हार को मंगवाती है। उमा इस शर्त पर हार देने को तैयार हो जाती है कि लालां एक दिन के लिये राजा को उसके महलों में भेजे। लाला स्वीकार कर लेती है। उसे हार मिल जाता है। हार पहनकर लालां अचलदास के सम्मुख आती है। राजा उस हार के विषय में पूछते हैं। रानी झूंठा उत्तर देती है कि यह हार उसे मन्त्री से प्राप्त हुआ है। लालां अचलदास को एक प्रतिज्ञा पर उमा के महलों में जाने की अनुमति देती है कि राजा वहां जाकर वस्त्र नहीं उतारें, कटारी नहीं खोलें और उमा की ओर पीठ करके पौढ़ें। उमा के यहां पहुंचकर राजा को हार की कथा ज्ञात होती है। वे लालां के प्रति उदासीन हो जाते हैं और लालां भी आजीवन उनसे नहीं बोलती।

अन्त में राजा युद्ध में मारा जाता है। उमा और लालां दोनों सती हो जाती हैं।

इस प्रकार इस कथानक में अचलदास, लालां और उमा के चरित्र-चित्रण के अच्छे अवसर आये हैं। अचलदास इस कथा का आदर्श नायक है। राजाओं में बहु-विवाह की परम्परा तो प्राचीन है ही फिर भी वह अपने दूसरे विवाह की अनुमति लालां से लेता है। जांगलू से लौटने पर वह अपनी प्रतिज्ञा का पालन करता है। वह सौन्दर्य का उपासक है किन्तु साथ ही रणक्षेत्र में तलवार चलाना भी जानता है। वह जौहर कर सकता है और करता भी है। संक्षेप में अचलदास सौन्दर्योपासक, प्रतिज्ञा-पालक एवं आदर्श राजपूत है।

लालां और उमा का सम्बन्ध सौत का है। नारी सुलभ सौतिया डाह दोनों में है। सतीत्व की रक्षा दोनों ने की है। अचलदास के शव के साथ दोनों सती होती हैं। आभूषण प्रेम लालां में अधिक है। उपासना की निष्ठा उमा में।

झीमी चारणी भी इस कथा का महत्वपूर्ण पात्र है किन्तु उसका चरित्र चित्रण ठीक नहीं हो पाया। इस कथा में अनावश्यक विस्तार नहीं मिलता।

इस कहानी की भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित राजस्थानी-भाषा है। वर्णन के शब्द चित्र इसमें बहुत ही सुन्दर बन पाये हैं। गोधूली की लग्न में अचलदास एवं उमा का विवाह होता है। राजा मण्डप के नीचे बैठे हैं इसका एक चित्र देखिये—

"गोधूलि रो लग्न छै। अचलदास जी आई नै चुंरी माहे बैठा छै। उमा सांखुली सिणगारि नै सखियां ल्यायां छै। गीत गाइजै छै। हथलेवो जौडियो। ब्राह्मण वेद भणे छै। पला बांधा छै। अचलदास परणीया छै। ब्राह्मण नुं घणो दीयो छै। परणीज ने महल माहैं पधारिया छै।........"

छोटे छोटे वाक्यों में यह चित्र उत्तम बन पाया है। इसी प्रकार की भाषा सम्पूर्ण कहानी में व्यवहृत हुई है।

ख—अनैतिहासिक या काल्पनिक बातें

इस प्रकार की कथायें राजस्थानी में बहुत मिलती हैं। इनकी कुछ विशेषतायें इस प्रकार हैं:—

१—इनके पात्र या घटनायें सभी काल्पनिक होते हैं। कभी कभी ऐतिहासिक व्यक्तियों के नामों का प्रयोग भी कर लिया जाता है। जैसे राजा भोज, विक्रमादित्य, भर्तृहरि, शालिवाहन आदि कई कहानियों के नायक हैं। ये नाम प्रायः भारत की सभी लोक-कथाओं में आते हैं।

२—अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये कहानीकार लौकिक एवं लोकोत्तर सभी प्रकार की सामग्री का उपयोग करता है। इन कहानियों में आये हुए कुछ तत्व इस प्रकार हैं:—भूत, बैताल, पिशाच, भैरव, कंकाली, जोगणी (योगिनी), साधु, तन्त्र-मन्त्र, सिद्ध, पीर, उड़न खटोला, काशी-करवत लेना, पाषाण से प्राणी हो जाना, प्राणी का पाषाण प्रतिमा हो जाना, शीश दान देकर जीवित होना, उड़ने वाली खड़ाऊं, उड़ने वाली छड़ी, किसी का जीव किसी में रहना आदि।

३—यह बातें मानव-लोक तक ही सीमित नहीं होतीं, यहां पशु पक्षी भी मनुष्य की भाषा बोलते हैं। मनुष्य के साथी होते हैं। सुख दुःख सभी अवसरों पर उसकी सहायता करते हैं। इस प्रकार चेतन ही नहीं अचेतन-

कण-कण भी उसी प्राण-वायु से स्पन्दित होता दिखाई देता है।

वर्गीकरण—

इन कथाओं का वर्गीकरण कई प्रकारों में किया जा सकता है। सुविधा के लिये कुछ विभाग इस प्रकार हैं :—

क—प्रेम की कथायें—

इन कथाओं में प्रेमी और प्रेमिकाओं के संयोग और वियोग के चित्र होते हैं। प्रेम बालकपन का प्राण, यौवन का सहचर और वृद्धावस्था का सहारा होता है। इसीलिये मनुष्य के लिये वह अत्यन्त आवश्यक है। यौवन में उसका रूप अधिक आकर्षक एवं उन्मादक हो जाता है, उसके अनेक व्यापार तथा अवस्थायें हैं। शिशु-स्नेह तथा वृद्धानुराग की कथायें भी राजस्थानी में मिलती हैं किन्तु यौवन-प्रणय के तो असंख्य चित्र हैं। इस भौतिक लोक की सीमाओं को छोड़ कर उस लोक तक भी इसकी जड़ें पहुँची हैं। यह प्रेम जन्म-जन्मान्तरों का बन्धन है। इस प्रकार की कुछ प्रणय कथाओं का उल्लेख यहां किया जाता है।

"रतना-हमीर री वात"

यह एक शृंगारिक रचना है। लेखक ने प्रारम्भ में ही इसका स्पष्टीकरण कर दिया है—

कुसुम तणा सर पांच कर, जग जिण लीनौं जीत।
तिण रो सुमिरण करतवां, रस ग्रन्था री रीत॥

यह कथा चम्पू शैली में लिखी हुई है। इसके महत्वपूर्ण स्थल इस प्रकार हैं :—

१—रत्ना, चन्द्रगढ़ की राजकुमारी, उसका विवाह चित्रगढ के नरेश इन्द्रभाण कूंभाणी के पुत्र लक्ष्मीचन्द के साथ होना। विवाह के समय रत्ना और उसकी भाभी का संवाद।

२—रत्ना विवाह से असन्तुष्ट।

३—ससुराल में रत्ना के द्वारा सूरजगढ़ के राव दलपति के पुत्र हमीर का चित्र देखा जाना, तथा उसका उसके रूप पर मोहित हो जाना।

४—चित्रगढ़ की राजकुमारी चित्रलेखा का सम्बन्ध हमीर से होना।

५—हमीर का बरात लेकर चित्रलेखा की ओर प्रस्थान। इधर रत्ना का अपने पितृ-गृह को लौटना। मार्ग में दोनों का चंपा बाग में ठहरना। शिव मन्दिर में दोनों का साक्षात्कार होना। दोनों का एक दूसरे पर आसक्त होना। रत्ना द्वारा विविध शृंगारिक चेष्टाओं द्वारा उसे आकर्षित करना।

६—हमीर द्वारा रत्ना को पत्र लिखा जाना तथा रत्ना द्वारा उसका उत्तर दिया जाना।

७—हरियाली तीज पर दोनों का मिलने का निश्चय करना। रत्ना द्वारा मिलने के उपाय बतलाया जाना।

८—मिलने की निश्चित वेला में हमीर द्वारा आखेट के मिस सूरजगढ से चलकर चन्द्रगढ पहुंचना।

९—रत्ना की प्रतीक्षा। घोर वर्षा। हमीर का चन्द्रगढ पहुंचकर फूल बाग में ठहरना।

१०—चतरू द्वारा रत्ना को हमीर के आगमन की सूचना मिलना।

११—निश्चित समय में दोनों का फूल बाग में साक्षात्कार आदि।

इस प्रकार यह कथा संयोग शृंगार का उदाहरण है। इसका गद्य भी कलात्मक है जैसे रत्ना का स्वरूप वर्णन देखिये—

"सरूप रै भार भरियो नाजक अंग। जिण आगें कांमद्द के सर में कंचन रो रंग। नालेर जिसा सीस उपर केसां रो भार तिकै जाणे तम रा ही ज वार। तिणरा मुख री ओपमा तो पूरण चंद्रमा ही न पावै। कहां कठा ताई दीठा ही ज बण आवै। नैण जी के अमृतरा ही ज नैण। वेण जिको कोयल रो ही ज वैण। धनष ज्यूं ही भुहां री खंच। नासिका जिका सुवा री चुंच। अधर प्रवाली जिसा बणियां। दांत जाणे हीरा री कणियां। बांह तो चंपा री डाल। हाथ पग जिकै कमल सूं ही सुकुमाल। जिका हालीती लजावै हंस री गति ने। जिण रो रूप सुखां री ओपमां रंभा अर रत ने और ही इण नूं दूयां औपमा किसकी............"

हैं । बीजा समझ लेता है कि भीतर जागरण हो चुका है । अतः वह भी जागरूक हो जाता है । छेद पूरा होने पर वह एक काली हंडिया को लकड़ी में लटका कर छेद में डालता है । खीवा उस पर तलवार से प्रहार करता है । हंडिया टूट जाती है । खीवा भीतर से हंसता है बीजा बाहर से । दोनों का परिचय होता है । इसके उपरान्त दोनों सम्मिलित डाके डालते हैं जिनमें १-चित्तौड़ से जय विजय नाम घोड़िया चुराना एवं २-पाटण के सतयुगी मन्दिर से स्वर्ण कलश उतारना मुख्य हैं । इन दोनों में उन्हें सफलता मिलती है ।

इस कथा में चोरी की क्रिया के स्वाभाविक चित्र मिलते हैं । बीजा चित्तौड़ से जय-विजय घोड़ियां लेने जाता है, सात तालों में यह घोड़ियां रखी जाती हैं । पहरेदार अपने सिर के नीचे तालियां रख कर सोता है । किन्तु बीजा अपने कार्य में असफल नहीं होता ।

"अमावस री राति रौ आइ नै बीजौ लागौ घड़ीयालै री घड़ी बाजै तरी खूंटी ५-६ मारै । घलै घड़ी बाजै तरै खूंटी मारै । इयुं करतां छप पडकोटा लोपि ने पडवा दोलो आइ फिरियौ । आइ फिरि नै पड़वै ऊंचो चढ़ीयो । पड़वै चढ़ि नें एकै बाती बिचला कोल्हू उतारिया ।

पसवाडे धरती मूकीया मूकि नै बेहूँ वाति पकड़ि नै मांहि लै पासी धस सु उतरियौ । उतरि नै दीयौ बुझाय दीयों । दिवौ बुझाइ नै माचा रा पागा हाथ उपरा उठाइ पारवतो कीया । पारवती करि नै सिरहांणै हूं हवलै हवलै कूंची लीधी, कूंची लै नै साते दरवाजा खोलीया । खौलि नै जय रै लगाम देर काढ़ी ।'

इसी प्रकार खीवें के घर चोरी करने जाते हुए बीजे का एक स्वाभाविक चित्र इस प्रकार है—

"आधा भादवा री आधी रात गई छै । ताहरां काला कांवल री गाती मारि; टोपी माथे मेल्हि जांघीयो पहिरि छुरी काढ़ि कटि बांध अर सहर माहे चोरी नूं चालीयौ ।"

"राजा भोज अर खाफरा चोर री वात" में धारा नगरी को राजा भोज चौदह विद्याओं का जानने वाला है । खाफरा नामक चोर उसके यहां नौकर है । वह नगर में चोरी करता है और उसकी चोरी पकड़ी नहीं जाती । राजा नगर में ढिंढोरा पिटवाता है कि यदि चोर उसके पास चला आवे तो राजा

उसके सब अपराधों को क्षमा कर देगा। खाफरा उसके पास जाता है। राजा उसे अपनी प्रतिज्ञानुसार क्षमा कर कुछ जागीर दे देता है। एक दिन राजा उस चोर से चोरी की कला सीखने की इच्छा प्रकट करता है। दोनों शरीर में तेल लगा तथा आवश्यक उपकरण लेकर नगर में प्रविष्ट होते हैं। एक साहूकार के घर में उन्होंने चोरी की। प्रातःकाल जब सेठ को उस चोरी का पता चलता है तब राजा भोज के पास वह इसकी सूचना पहुंचाता है। राजा उसकी सम्पूर्ण खोई हुई पूंजी के उपलक्ष में धन देता है। इसके उपरान्त खाफरे की कुछ चालें:—उसका मर जाने का बहाना करना, पुनर्जीवित हो जाना, तथा अन्य कई घटनायें साहसिकता के अच्छे उदाहरण हैं।

इनके अतिरिक्त "दीपालदे री वात[1]" "दूदै जोधावत री वात[2]" "सातल सोम री वात[3]" भी इसी प्रकार की कहानियां हैं।

दीपालदे री वात पुरुषार्थ, दान, और परोपकार की कहानी है:—

१—अमरकोट के राजा दीपालदे का जैसलमेर की भूमि में अपनी पत्नी को ले आना।

२—मार्ग में एक चारण को हल जोतते हुए देखना।

३—चारण द्वारा हल में एक ओर बैल तथा दूसरी ओर अपनी पत्नी को जोतना।

४—यह देखकर चारणी के स्थान पर दीपालदे का जुत जाना तथा चारणी को भेजकर अपने रथ के बैल मंगवाना।

५—बैलों के आने पर खेती करना। उपरान्त अच्छी उपज होना।

६—जिस स्थान पर राजा जुता था उस स्थान पर मोती पैदा होना।

दूदै जोधावत री वात में वैर प्रतिशोध की भावना है। जोधा का पुत्र दूदा नरसिंहदास के पुत्र मेघा को मारकर अपने पुराने वैर का बदला

....

१—राजस्थानी : भाग ३, अंक २, पृ० ७३

२—वही पृ० ७५

३—राजस्थान भारती : भाग २, अंक २, पृ० ६०

लेता है। दोनों जब युद्ध भूमि में अपनी सेनायें लेकर पहुंचते हैं तो दूदा मेघा को द्वन्द युद्ध के लिये ललकारता है। मेघा उसे स्वीकार कर लेता है तथा द्वन्द युद्ध में दूदा के हाथ से मारा जाता है।

"सातल सोम री वात" वीरता की कहानी है। कुंभटगढ़ नरेश चौहान सातलसोम देहली के सुलतान अलाउद्दीन की सेवा में रहते हैं। नित्य दरबार में अलाउद्दीन गर्वोक्ति करता है कि ऐसा कौन वीर है जो उससे लोहा ले सके। एक दिन सातलसोम से यह नहीं सहा गया और उन्होंने अलाउद्दीन से लोहा लेने का निश्चय किया। दोनों में युद्ध होता है। १२ वर्ष तक भी अलाउद्दीन गढ को नही जीत पाता है। अन्त में गढ़ का द्वार खुलता है तथा सातलसोम युद्ध में काम आते हैं।

इस प्रकार की और भी कई कहानियां हैं जिनमें पराक्रम सम्बन्धी विवरण मिलता है।

घ—भोज और विक्रमादित्य सम्बन्धी कथायें—

राजा भोज विक्रमादित्य, शालिवाहन, गन्धर्वसेन, भर्तृहरि आदि इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तियों के नामों का प्रयोग कथाओं में हुआ है। लोक-कथा साहित्य में विक्रमादित्य का नाम बहुत प्रसिद्ध है[1]। इनमें से कुछ कथायें लिपिबद्ध भी की गई हैं। "राजा वीर विक्रमादित्य अर नक्षत्र जातीक री" वात आदि में विक्रमादित्य के नाम से कई घटनाओं का सम्बन्ध जोड़ा गया है। राजा भोज भी कई कहानियों के नायक हैं। वे कहीं खापरा चोर, आगिया बैताल, कवड़िया जुआरी, माडिकदे मदवाण के मित्र बनते हैं और कहीं राक्षसी के पास स्वर्ण-मक्षिका।

"राजा भोज माव पिडत अर डोकरी री वात", "चौबोली", "राजा भोज खापड़ा चोर", "राजा भोज री पनरवीं विद्या", "त्रिया चरित्र" "राजा भोज री चार वार्ता", "भोज री वात", "जसमा ओड़णीरी वात" आदि में भोज के नाम आये हैं। "पिंगला री वात" तथा "गन्धर्वसेन री वात[2]" में पिंगला और गन्धर्वसेन के नामों के साथ अनैतिहासिक कथायें जोड़ी गई हैं।

....

१—शान्तिचन्द द्विवेदी : विक्रम स्मृति-ग्रंथ, पृ० १११

२—यह सब वातें अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान हैं।

च—अद्भुत-कथायें—

राजस्थानी कहानियों की यह विशेषता है कि उनमें आप्सरिक एवं वैतालिक तत्व तो कहीं न कहीं घुस ही आते हैं। कहानी की विलक्षणता, मोहकता एवं आकर्षण शक्ति को बढ़ाने के लिये इनका प्रयोग होता है।

"राजा मानधाता री वात" में अप्सरा लोक का चित्रण हुआ है। अजयपाल की जादू की लकड़ी मानधाता को सात समुद्र पार ले जाती है। वहां मानधाता को ६ धूनियों के सम्मुख चार योगी दिखाई देते हैं। योगी उसे खड़ाऊं देते हैं। उनको पहिनते ही मानधाता अप्सरालोक में जा पहुंचता है। ये अप्सरायें इन्द्रलोक की हैं। उनमें से एक उसको वरमाला पहिनाती है—

"देखे तो आगें राजा मानधाता सूता छै। अपछरायां कह्यौ भाणेज मामा मेल्ह्यो, कह्यौ जी मामा मेल्ह्यो। ताहरां एकै अपछरा भाणेज रै वरमाला घाली छै। सु अपछरां सुं सुख भौगवै छै। युं करतां मास ६ हूवा। छठै महीने कोठार री कूंच्यां लाया छै। अपछरायां कह्यो ये चार कोठार मतां खोल ज्यो। युं कहि अपछरायां इन्द्र रै मुजरै गयां छै।"

मानधाता प्रति छै मास में एक एक कमरा खोलता है। क्रमशः प्रत्येक कमरे में उसे गरुड़पंख, मोर, अश्व एवं गधा मिलता है। गरुड़पंख उसे इन्द्र के अखाड़े में ले जाता है। मोर उसे सारे नागलोक में घुमाता है। अश्व उसे मृत्युलोक एवं यमपुरी की प्रदक्षिणा करवाता है। गधा उसे पीछा ही उसके मामा अजयपाल के पास अजमेर पहुंचा देता है।

"वीरम दे सोनगरा" की कथा में पाषाण की प्रतिमा का एकाएक अप्सरा हो जाना ध्यान आकर्षित करता है :—

"देहरै में पाखाण री पूतली। सो घणी रूड़ी फूटरी। कान्हड़दे जी उणरै रूप दिसी घणो गौर करि जोवण लागा। तिण समै कोई दैव रै जोग उवा पूतली थी तिका अपछरा हुई। तरै रावजी कह्यो, थें कुण छो। तरै उवा बोली अपछरा छूं। मैं थाने वरिया छै। पिण म्हारी आ बात किणी आगै कही तो परी जासूं।"

इस प्रकार कन्हड़दे की रानी के रूप में वह रहती है। वीरम दे उसका पुत्र है। एक दिन की बात है कि वीरमदे को कोई मस्त हाथी उठाने

ही वाला होता है। गवाक्ष में बैठी हुई रानी उसे देखती है। वहीं से वह अपने हाथ फैलाकर अपने पुत्र को उठा लेती है। इस प्रकार अलौकिक व्यापार देखकर उसके अप्सरा होने की बात प्रकट होती है, फलस्वरूप अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार वह वहीं अन्तर्ध्यान हो जाती है।

"पाबू जी री वात" में भी, इसी प्रकार, धांधल जी किसी अप्सरा से विवाह करते हैं। इस अप्सरा से सोना नाम की लड़की और पाबू नाम का लड़का उत्पन्न होता है।

"जयमाल मालावत" की कहानी में वैतालों की सहायता से जगमाल अहमदाबाद के बादशाह मुहम्मद बेग को परास्त करता है। पाटण से १२ योजन दूर सोभटा नामक नगर का अधिपति तेजसी तुंवर मुसलमानों के हाथ से अपने तीन सौ साथियों के साथ मारा जाता है। म्लेच्छों के हाथ से मारे जाने के कारण ये सभी राजपूत प्रेत योनि में पड़ते हैं। जगमाल मालावत तेजसी तुंवर को प्रेत योनि से मुक्त कराता है। तेजसी तुंवर प्रसन्न होकर अपने साथी तीन सौ प्रेतों को जगमाल की सहायता करने का आदेश देता है। ये वैताल जगमाल मालावत की सहायता करते हैं।

कंकाली, भैरव एवं जोगनियों आदि का वृत्तांत "जगदेव पंवार री वात" में आता है। जगदेव पंवार अपने आश्रयदाता सिद्धराज (नरेश) की रक्षा भैरव और जोगनियों से करता है। जब अर्द्ध रात्रि के समय राजा सिद्धराज जोगनियों का हंसना और रोना सुनता है और उसका कारण जानना चाहता है तब जगदेव पंवार ही उसका पता लगाकर सूचना देता है कि यह पाटन और दिल्ली की जोगनियां हैं :—

तरै उवै बोली, पाटण री जोगणियां छां। तिको प्रभात सवा पोर दिन चढ़तै सिधराज जै सिंह री मृत्यु छै। तिण सूं रुदन करां छां। .... तरै कह्यो म्हें दिल्ली री जोगणियां छां जिके राजा जै सिंह नै लेण नै आई छां। तिण सूं बधावा गीत गावा छां।

जगदेव ने जिस भैरव से राजा की रक्षा की थी उसका स्वरूप इस प्रकार चित्रित हुआ है :—

"राजा पौढ़िया था। नै कालो भैरूं लूंगी रो लंगोट पहरियां केस

तेल माहे काजल कीवां, सिंदूर आली सुरंग[1] जुणन काई कीवां, चोला मिलक[2] माहे चौसंत कुलीयाला सिन्नलन हैं जिठे आन में हाथ पकड़ नीचे आवि धर्मा नीचे दे केकणा जी कर्ने मेल दीह बाली।"

इसी कथा में वर्णित कंकाली का स्वरूप भी देखिये :—

"सिर काली मोली[3] मोला मांव, कूबली, लाली करावली, बाबारा लटा बिखरिया, अड़ो तेल माहे भरली, काजल नैन माथे, निलाड़ सिंदूर वैचविदो भको, खोपड़ी[4] काली, काली पांखेरा[5], कांचली तेल माहे गरकाव करी, अगाडे माथे जीप्यां, हाथ माहे त्रिशूल झालियां दरबार आई।"

यह कंकाली जगदेव पंवार की दान-प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिये दरबार में आती है। सिद्धराज से वह दान की याचना करती है। सिद्धराज उत्तर देते हैं कि जितना जगदेव देगा उससे चौगना वह दान करेगा किन्तु जब जगदेव अपना सिर उतार कर कंकाली को अर्पण करता है तब सिद्धराज अपनी असमर्थता पर लज्जित होता है। कंकाली प्रसन्न होकर जगदेव को पुनर्जीवित कर देती है।

राक्षस का स्वरूप "चौबोली" एवं "सूरां अर सतवादियां" की कथा में दिखाई देता है। "चौबोली" में राजा भोज किसी राक्षसी की जटा में स्वर्ण-मक्षिका बन कर रहता है। "सूरां अर सतवादिया" में फूलमती राक्षस की नगरी में निवास करती है जिसने सारे नगर को जन-रहित कर दिया था। राजा वीरमाण उस राक्षस को मार डालता है।

आप्सरिक एवं वैतालिक तत्व राजस्थानी कहानियों में कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में मिल ही जाते हैं। इन कहानियों के लिये कुछ भी असम्भव नहीं।

राजस्थानी का सम्पूर्ण कथा साहित्य औत्सुक्य-वृत्ति का ही पोषक रहा है। इतिवृत्तात्मक-कथा-तत्व घटनाओं के वर्णनात्मक विस्तार पर

....

१—अस्त्र विशेष
२—मदिरा
३—लम्बी
४—ओढ़ने का वस्त्र
५—लहंगा

आधारित रहा। इसके कथानक में आश्चर्य, कुतूहल, जिज्ञासा आदि मानसिक मनोवृत्तियों को तुष्ट करने वाले तत्व ही प्रधान रूप से आये। लौकिक-अलौकिक, ऐतिहासिक अनैतिहासिक, झूठे-सच्चे, काल्पनिक-वास्तविक आदि व्यापारों के विचित्र संश्लिष्ट रूप-विधान इनमें पाये जाते हैं। इन कहानियों में पात्रों के चरित्र-चित्रण की ओर ध्यान बिल्कुल नहीं गया है। स्वाभाविक या मनोवैज्ञानिक आधार पर बहुत कम पात्र खड़े हुए दिखाये पड़ते हैं। कथानक के तार-तम्य एवं प्रवाह की रक्षा करने के लिये पात्रों को कठपुतली बनना पड़ा है। आसुरी, दैवी या मानवी वृत्तियों में लिपटे हुये पात्र भाग्य या अप्रत्याशित परिणामों की शरण में छोड़ दिये गये हैं। उनमें जीवन का स्पन्दन नहीं दिखलाई पड़ता। देश और काल का ध्यान भी इन कथाओं में बहुत कम रखा गया है। अर्द्धैतिहासिक बातें यद्यपि इतिहास के स्थूल धरातल पर खड़ी की गई हैं तथापि उनमें कल्पना एवं ऊहात्मक तत्वों के उपयोग करने का अधिकार उपेक्षित नहीं किया गया है। देश और काल की स्थूल सीमाओं में दैवी या आकस्मिक घटनाओं का स्फुरण प्राण वायु से वंचित रह जाता है अतः नवीन कल्पनालोक के उन्मुक्त गगन में इन कथाओं को श्वास लेने की आवश्यकता हुई। मनोरंजन ही इन कथाओं का एक मात्र उद्देश्य रहा। इसीलिये सामाजिक, नैतिक आदर्श, यथार्थ आदि की ओर ध्यान जाना अस्वाभाविक था। प्रासंगिक या आकस्मिक रूप से जहां कहीं इनका निर्वाह हो पाया है वहाँ कहानी के सौष्ठव में कुछ कला के दर्शन भी होते हैं।



ख—वचनिका

इस काल में शिवदास चारण की "अचलदास खीची री वचनिका" के समान एक वचनिका मिलती है। इसका नाम "राठौड़ रतनसिंह जी महेशदासौत री वचनिका" है।

राठौड़ रतनसिंह जी महेसदासौत री वचनिका

इस वचनिका का लेखक जगमाल (कवि जग्गो) खिड़िया जाति का चारण था। इसके पिता रतलाम नरेश श्री रतनसिंह के राज-कवि थे। उज्जैन की लड़ाई के पूर्व जगमाल जौधपुर महाराजा जसवंतसिंह के दरबार में था। वहीं इसके पूर्वजों की सांकड़ा जागीर थी, किन्तु जग्गा का जसवंत-सिंह के दरबार में रहना संदिग्ध है।[1]

जगमाल का जीवन वृत्तान्त अज्ञात सा है। कहा जाता है कि उज्जैन की लड़ाई में राजा रतनसिंह ने अपने पुत्र रामसिंह को जगमाल के सुपुर्द किया था। इसी लड़ाई का वृत्तान्त इस वचनिका में मिलता है। जगमाल युद्ध-भूमि में प्रस्तुत था किन्तु उसको राजा रतनसिंह ने शस्त्र ग्रहण करने की आज्ञा नहीं दी थी। शिवदास चारण की भांति ही जगमाल ने अपने आश्रयदाता की वीरता का चित्रण किया है। इन दोनों वचनिकाओं में निम्नांकित बातों का साम्य मिलता है :—

१—नायक का युद्ध में जाना तथा अपनी वीरता दिखाते हुए वीर गति प्राप्त करना।

२—नायक अपने चारण को युद्ध के मैदान तक ले जाता है किन्तु उसे युद्ध में भाग नहीं लेने देता। वह चाहता है कि उसका चारण अपनी रचना द्वारा उसे अमर करे।

....

१—टैसीटोरी : वचनिका राठौड़ रतनसिंह महेस दासोत री, भूमिका पृ० ५

३—चारण अपने आश्रयदाता नायक की वीरता का चित्रण कर उसे अमर करने का प्रयास करता है।

४—चारण को नायक अपने पुत्र के संरक्षण में छोड़ जाता है।

५—दोनों का आधार ऐतिहासिक घटना है।

ऐतिहासिक भूमि—

सन् १६५८ में शाहजहां के दो पुत्र औरंगजेब और मुराद विद्रोही होकर आगरा की ओर चले। शाहजहां ने जोधपुर नरेश महाराजा जसवंतसिंह को सेना देकर उन्हें रोकने के लिये भेजा। सन् १६६० ई० के लगभग उज्जैन के समीप दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई जिसमें महाराजा जसवंतसिंह परास्त हुये। महाराजा जसवंतसिंह के सरदारों में श्री रतनसिंह भी थे जो इस युद्ध में काम आये। ये ही इस वचनिका के नायक हैं।

इस वचनिका में गद्य-अंश बहुत ही कम है। प्रारम्भ में शिव और शक्ति का स्मरण है। इसके उपरान्त— क–रतनसिंह जी का वर्णन ख–औरंगजेब और मुराद का सेना लेकर आना ग–शाहजहां द्वारा महाराजा जसवंतसिंह को भेजा जाना, घ–दोनों सेनाओं में युद्ध, च–रतनसिंह की मृत्यु, छ–ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, महेश आदि का आना, ज–रतनसिंह का वैकुण्ठ पहुंचना, झ–रतनसिंह की रानियों एवं चार खवासों का सती होना आदि का विस्तार पूर्वक विवरण इस वचनिका में मिलता है।

भाषा और शैली की दृष्टि से यह वचनिका शिवदास चारण की वचनिका से समानता रखती है। भाषा परम्परा से मुक्त नहीं है। अनुप्रासान्त गद्य का एक उदाहरण यहां दिया जाता है।

"तिण वेला दातार झूंझार राजा रतन मूंछां धर हात बोले।
तरुआर तोलै।
आगे लंका कुरखेत महाभारत हूआ,
देव दाणव आदि मूआ।
चारिजुग कथा रही।
वेद व्यास बालमीक कही।
सु तीसरो महाभारत आगम कहता उजेणि खेत,
अगनि खोर माजसी।
पवन [illegible]॥

गजबंध छत्रबंध गजराज गुड़सी ।
हिन्दु असुराइण लड़सी ॥
तिका तौ बात साकाबंध आइ तिरे चढ़ी
दुइ राह पातिसाहां री फौजां अढ़ी
दिली रा भर भारथ भुजे दिआ
कमधज मुद्दै किआ
वेद सासत्र वताया सु आसाण आया ।
उजेणि खेत धारा तीरथ धणी रै काम खित्री रै धरम [illegible]
लोहां रा बोह सेलां रा धमंका लीजै
खांजां री खाद खडि झारझाड़ि डरणाइड़ि खेलीजै
पातसाहां री गजघटा मढां चौभड़ां मारि ठेलीजै ।



ग-दवावैत

इस प्रकार की रचनाये राजस्थानी मे कम मिलती है। जो प्राप्त हुई हैं उनमें किसी पर फारसी का प्रभाव है तो किसी पर हिन्दी का। सभी प्राप्त दवावैत अठारहवीं शताब्दी के उपरांत की रचनाये है। इससे पूर्व की दवावैत नहीं मिलतीं। इस काल की कुछ उल्लेखनीय दवावैत इस प्रकार हैं :—

१—नरसिंहदास की दवावैत[1]

इसका लेखनकाल अठारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। इसके लेखक का नाम भाट मालीदास मिलता है। इस पर हिन्दी का प्रभाव स्पष्ट झलकता है :—

गद्य का उदाहरण—

"जरबफत पाटता है। अ बर फटते है। सभा विराजती है। कीरत राजते हैं। घोडे फिरते है। पायक अडते है। गुणीजण राग घटता है। यह वषत बणता है। सोभा बणती है। श्री दिवाण पधारते है। दुसमण को जारते है। देसो दूर डरते है। साहो काम सरते है। फ़जीसुर बोलते है। भरना बोलते है।

२—जिनसुखसागर जी की दवावैत[2]

यह जैन रचना है। श्री उपाध्याय रामविजय ने स० १७७७ मे इसकी रचना की। इसका दूसरा नाम 'मजलस है।

१—श्री अगरचन्द नाहटा : कल्पना, मार्च १९५३, पृ० २८०।
२—वही

गद्य का उदाहरण—

"दुस्मन दूर है सब दुनी में हुक्म मंजूर है। मगरूरां की मगरूरी दफै करते हैं, छत्रधारी की सी रौस धरते हैं। बड़े बड़े छत्रपती, पद्मपती देसोत डंडोत करते हैं, चिकारे मुकारे भुंज मरते हैं। (और) भी कैसे हैं – गुनु के गाहक हैं, गुनु के जान हैं, गुनु के कोट हैं, गुनु के जिहाज हैं। विजैजिन के राज हैं षट्दर्शन के महाराज हैं, सब दुनियां बीच जस नगारे की आवाज है।

३—जिनलाभ सूरि की दवावैत

यह उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ की रचना है। पाचक विनय भक्ति (वस्तपाल) ने इसे बनाया। यह जिन सुखसूरी की दवावैत से चौगुनी बड़ी है। गद्य के अतिरिक्त इसमें गीतों के प्रयोग भी किये गये हैं।

गद्य का उदाहरण—

"फिरि जिनु का जस का प्रकास, मनु हंस का सा विलास।
किधुं हरजू का हास, किधुं सरद पुन्युं का सा उजास।
फिरि जिनु का रूप अति ही अनूप, मनु सबका रूपवंतुकारूप
जाकु देषन चाहे सुरन के भूप। कामदेव का सा अवतार,
किधुं देव का सा कुमार। तेज पुंज की झलक, मनु कोटिन
सूरज की झलक।"

अंतिम दोनों दवावैतों पर फारसी का प्रभाव है। इनकी रचना सिन्ध में हुई[1] अतः फारसी के शब्दों का आजाना अस्वाभाविक नहीं है।

४—दुरगादत्त की दवावैत[2]

ईसरदा ठिकाने के किसी जागीरदार से उचित इनाम न पाने पर दुर्गादास ने इस दवावैत की रचना की। उक्त सरदार की दुर्गादत्त ने अपनी

१—कल्पना मार्च १९५३, पृ० २१६
२—यह दवावैत मुझे आदरणीय डा० श्री मथुरालाल जी शर्मा, एम० ए० डी० लिट०, की अनुकम्पा से प्राप्त हुई है। इस लेख के द्वारा यह सब से पहले प्रकाश में आ रही है।

इस दवावैत में भरसक निन्दा की है। इसके गद्य में अलबेला प्रवाह है। पद्य-गत "वयण सगाई" अलंकार की भांति इस दवावैत में वर्ण-मैत्री मिलती है। इस पर हिन्दी का बहुत अधिक प्रभाव दिखाई पड़ता है।

गद्य का उदाहरण—(१)

"जाय........से दुवा पढी। उस कोली आँखसे सामा जोया। एक तो जमी एक आसमान को चढी। हात से मान सनमान दिया। सिर तो जमीन से लगाय लिया। पुस्त से पूण हात मलद्वार ऊंचा किया। जिस राम से धीर आसन बैठा न गया। पछाड़ी कूं दस्त टेक अगाड़ी कूं पांव पसार दिया। उस वगत........ऐसा नजर आया। मुंदी चिराक सा दीदार दिखाया। ढोले से सिर पर पगड़ी के बंद। लकड़ी के खूंटे पर मकड़ी के फंद। सूना सा अबूना दूना सा कान। चकमक के कड़े के अरड़े के पान। मोली सी मूंभी पर कोली सी आंख। पोली सी भीतूं में खोली सी पांख। गाढा सा देखण में बाडासा सहंत। हंगाया पाडा के साडा सा महंत। चूले में भरियोड़ी पूले सी मूंछ जंबुक की जघा के गधे की पूंछ।

२—पूरब की तरफ ....बतूं का देस। रोफूं का रैवास। भांडू का भेस। जिस देस में ......दो नाम गांव। बेवकूफों का वास। धूरतूं का धाम। मंगतूं का मोहल्ला। कंगालूं का कोट। हीजडूं का सहर। जारूं का जेठ। चुगलूं का चबूतरा। रुलतूं का रैवास। कुकरमूं का कोठार। अधमूं का ऐवास। भूख का भांडा। मालजादूं का मुकाम। अनीत का अखाड़ा। अदतूं का आराम। हराम का हटवाड़ा। हरामजादूं की हाट। खोटूं का खजाना। परेतूं का पाट। बिपत का बगीचा बुराई का वास। काल का कुंजाला मरी का मेवास। आदि ....



घ—वर्णक-ग्रंथ

इस काल में कुछ ऐसे ग्रंथों की भी रचना हुई जिनमें वर्णन के प्रमुख स्थलों की रूप रेखायें दी हुई हैं। वर्णक ग्रंथ इस प्रकार है :—

१—राजान राउत रो वात वणाव

यह एक वर्णन-विषयात्मक निबन्ध है इस लेख में बतलाया गया है कि राजाओं का वर्णन करते समय कौन कौन से प्रमुख स्थलों पर किस प्रकार प्रकाश डालना चाहिये। चार अध्यायों में यह पूर्ण हुआ है। प्रारम्भ में स्तुति है। ओंकार महादेव, उनका हिमाचल पर्वत और आबू के वर्णनोपरान्त राजराजेश्वर, पटरानी तथा राजकुंवर का विरद गाया है।

सूर्य वंशी राजा, उनका वैभव, उनके सिंहासन, छत्र, चंवर, निशान आदि के विषय में कह चुकने के उपरान्त प्रथम अध्याय का वर्णन-क्रम इस प्रकार चलता है :—

१—राजपथ—पांच कोट, बाग, बावड़ी, कुआं, सरवर, बड़ पीपल आदि।

२—गढ़कोट—परकोटे के कंगूरे - आकाश को निगल जाने के लिये मानों दांत - उनकी ऊंचाई - समीपवर्ती खाई की गहराई। गढ़ के भीतर के कुआ, सरवर, धान, घृत, तेल, नमक, ईंधण, अमल आदि

३—नगर—देवालय - कथा कीर्तन, नाटक, धूप, दीप, आरती, केसरचंदन, अगर, झालर झनकार।
धर्मशाला, दानशाला, योगेश्वर - त्रिकुटी साधक एवं धूम्रपान करने वाले, दिगम्बर, श्वेताम्बर, निरंजनी, कनफटे, जोगी, सन्यासी अवधूत फकीर। निवासी लखपति, करोड़पति, सौदागर छत्तीस इतर जाति।

बाजार—सोना, रूपा, जवाहर, कपड़ा - रेशम, पटकूल, पसम शराफ बजाव जौहरी, दलाल, छैल नायिका (वेश्या) आदि।

४—राजकुमार के सम्बन्ध के लिये विभिन्न स्थानों से आये हुए नारियल

५—विवाह की तैयारियां (बरात गमन) हाथी, घोड़े बैल, रथ पैदल आदि कलस बंधाना, आला नीला बांस, केलि-खंभ, चौंरो, पाणिग्रहण संस्कार, मंगलाचार, छत्तीसविधि—१-तंत्री २-वीणा ३-किन्नरी ४-तंबूरा ५—नीसाण ६-ढोल ७-दमामा, ८-भेरि ९-मूंगलि १०-नफेरी ११-सदन भेरि १२-झांझ १३-मंजीरा १४-मादल, १५-श्री मंडल १६-डफ १७-डंडक १८-रंगतंग १९-मुंहचंग २०-ताल २१-कंसाल २२-संबूर २३-मुरली २४-रिणतूर २५-शंखे, २६-ढोलक, २७-रायगिड़गिड़ी, २८ रवाज २९-रावण हतो ३०-पूंगी, ३१-अगलचौ, ३२ झालर, ३३-पिनाक, ३४-करप, ३५-सारंगी, ३६-करनाल ।

६—भोज—दो प्रकार के अन्न, अ-वायौ आ-अड़क। तीन प्रकार के मांस—अ-जलजीव, आ-थलजीव, इ-आकाश जीव। पांच प्रकार के साग—अ-तरकारी, आ-कन्दमूल, इ-डाल कोंपल, ई-पान-पत्र, उ-फलफूल गोरस—अ-दूध आ-दही, इ-अन्य प्रकार। मिठाई, नमक, तेल, हींग, वेसवार, चरकाई।

७—दहेज—हाथी, घोड़ा सुखासन, रथ, पायक, जवाहर, हीरा, मोती माणिक्य सोना रूपा, दास, दासी।

८—बरात लौटना - भांति भांति के उत्सव

९—रानियों के सोलह शृंगार - बारह आभूषण, राजकुमार के सोलह शृंगार (पद्य में) द्वितीय अध्याय में ऋतु वर्णन एवं प्रकृति चित्रण

१०—विवाह के उपरान्त रंगरेलियां - ऋतु विहार, ऋतु चर्या, ऋतु के अनुसार आचार व्यवहार, षट्-ऋतु वर्णन

११—ऋतुओं के अन्तर्गत आये हुये पर्व - नवदुर्गा, दशहरा, देवोत्थान, एकादशी, होली, दिवाली।

तृतीय अध्याय में युद्ध और आखेट वर्णन

१२—राजकुमार के बत्तीस लक्षण—१-सत, २-शील, ३-गुण, ४-रूप, ५-विद्या ६-तप, ७-अल्पाहारी, ८-उदारचित्त, ९-तेज, १०-धनकर, ११-दौलतवंत १२—सकलनायक, १३-दयालु, १४-विचारशील १५-दाता १६-बुद्धिमानी १७-प्रमाणिक, १८-यश, १९-उद्यम, २०-लाज, २१-धीरज २२-[illegible]

२३-शूर, २४-साहसी, २५-बलवान, २६-भोगी २७-योगी, २८-भुजायश, २९-भाग्यवान, ३०-चतुर, ३१-ज्ञानी, ३२-देवभक्त,

१३—मुगल सम्राट से उनका युद्ध—मुगल सेना का सजना, राजपूत सेना का सजना, छत्तीस आयुध, १-सर सीगणि, २-छुरी, ३-कुन्त, ४-सांग ५-गोफिहल, ६-मोगर, ७-गोली, ८-गोफणा, ९-शंख, १०-गुरज ११-मूसल १२-घण, १३-आसी, १४-चक्र, १५-खड्ग, १६-गदा, १७-चाबक, १८-फरसा, १९-कुहू, २०-कबाण, २१-बन्दूक, २२-ढाल, २३-कटार, २४-खपटसो, २५-सेल्ह, २६-त्रिशूल, २७-सांठो, २८-चक्को, २९-बन्सहड्डी ३०-भूकन्त, ३१-चहुलिसुलो, ३२-चटक, ३३-दंडायुध, ३४-वली, ३५-कदील गण, ३६-तोमर। युद्ध की तैयारी, युद्ध का आरम्भ, युद्ध-बाद्यों का बजना, दोनों ओर से आयुधों के प्रयोग, घमासान युद्ध : रौद्र रस का प्रकोप मतवाले सामन्तों के वार : गज एवं अश्वों का चिंघाड़ना : घायलों का रण-क्षेत्र में कराहना आदि : राजपूतों की विजय : विजय के उत्सव

१४—राजकुमार का आखेट-वर्णन—आखेट की तैयारी : साथ में सेना विविध आयुध : गज, उनकी सजावट आदि : चातुर्मास के विश्राम स्थल : वर्षा वर्णन : साथ के पिंजर-बद्ध अनेक पक्षी : अनेक शिकारी पक्षी तथा अन्य आखेट में सहयोगी पशु पक्षी।

१५—चतुर्थ अध्याय में आखेट के उपरान्त विश्राम विविध आयुधों का खोला जाना : भोजन बनाना : दोपहर का अमल आदि : अमलोपरान्त अवस्था का चित्रण : दोपहर-समाप्ति : लौटने की तैयारी : लौटना : प्रतीक्षा में प्रासाद के गवाक्षों से देखती हुई रमणियों के चित्र : महल में प्रवेश : रंगमहल के प्रेमालाप आदि।

वस्तु चित्रण प्रथम अध्याय में अधिक हुआ है। दूसरे अध्याय में प्रकृति चित्रण उल्लेखनीय है, तृतीय एवं चतुर्थ अध्याय प्राय. विवरणात्मक हैं।

कुछ उदाहरण

क—वस्तु चित्रण (नगर वर्णन)

गंदाल सहर गढ़ कोट बाजार पौलि पगार बाग बावड़ी बगीचा कूआ

सरवरां री, बड़ां पीपलां री छिबि। सहर री पाखती विराज ने रही छै। पारवती भरटां री झीगाड़ि चींग रही पड़ी ने रही छै। कहा रो खटाको लागि ने रह्यियो छै। पाखती वील थमि ने रही छै........गढ कोट चोफेर कांगुरा लाग्या थका विराजै छै। जाणे आकास गिलण नूं दांत किया छै। ऊंची नजर करि जोइजै तो माथा रो मुगट खड़हड़ै। तिण कोटरी खाही ऊंडी द्रह नागद्रही सरीखी। जड़ छैल पाताल री जड़ां सूं लागि ने रही छै।

ख—प्रकृति चित्रण

ऋतु वर्णन शरद् ऋतु से प्रारम्भ होता है। राजान राजकुमार विवाह के उपरान्त आनन्द मनाते हैं। संयोग शृंगार में प्रकृति के कुछ पार्श्व देखिये—

"सरोवरां रा जल निरमल हुवा छै। कमल पोइणी फूलि रहिया छै। सरग रा देवां नै पितारां नूं मातलोक प्यारो लागे छै कामधेनु गायां छै सू धरती री पाकी औषधि रा रस चरै छै। दूधां रा सवाद अमृत सरीखा लागै छै।"

"सरद रित रै समै री पूनिम रौ चन्द्रमा सोलै कला लियां सम्पूरण निरमली रैण रौ उजली चांदली रै किरण करि नै हंस नूं हंसनी देखै नहीं नै हंसणी हंस देखै नहीं छै। मिलि सकता नहीं छै। तारां बार बार मांहो मांहे बोलि बोलि नै वेरह गमावता छै। भण चांदणी री सपेती करि नै महादेव नंदी धमल ढूंढता फिरै छै। सो लाभता नहीं छै। इन्द्र ऐरावति जोतां फिरै छै। इण भांति री सरद रित री सपेती चांदणी री सोभा विराज नै रही छै।"

हेमन्त

"हेमन्त रित लागी। पछ रौ वाउ फिरियौ। उतराधो वाउ वाजियो। हेमन्त रा बरफ ऊपाड़िआ, टाढ़ो टमकियौ, प्रालौ पड़ण लागौ।................ हेमाचल रा पहाड़ रा टूंका ऊपरै ऊजला बरफ रा टूक बधण लागा। बड़ाई पाइ दिन लघुता पाई। इहां नदियां रा जल जमि ठंठ हूआ। नदी खीण पड़ी घटी।................अगनी जल सारिखी ठंढी लागै छै। जल आग दाह सरीखौ लागै छै।"

शिशिर

"...............सिसिर रित री माह मास री राति रौ प्रालौ पड़े छै। उतराध रौ पवन उतावलो ढोपां खाइ नै रहीयो छै। तिण रित मांहे छोह ढालिआं ऊंडा मोहरां माहै ऊंडा तहखाना मांहे खेर कोइलां री मकालां अगाड़ी जे छै। तपन तापन रा सुख लीजे छै।"

वसंत

"...............दखिण दिसा मलयाचल पहाड़ रौ पर्वत वाजिओ छै। सीत मंद सुगंध गति पवन मतवाला में गल ज्या परिमल झोला खावतौ वहै छै अढ़ार भार वनसपती मकरंद फूलादि रा रस मांणतौ थको वहै छै। अंबर मोरीजै छै। कूंपलां फूटी छै। वणराइ मंजरी छै। वासावली फूंट रही छै। केसू फूलि रहिआ छै। रितराज प्रगटीया छै। वसंत आयौ छै। भमर मधुकर झंकार करी रहीया छै। मधुरी वाणी रा सुर करि कोकिला बोलि रही छै। बाग बगीचां दरखत गुलकारी झिमि फूल रही छै।

दिस दिस केसरिआं पिचकारी छूटि रही छै। आकास ऊपरै अंबीर नै गुलाल री अंबरै डंबरी लागि रही छै।

डफ चंग, मुहचंग बाजि नै रहिआ छै। वीणा ताल मृदंग बाजि रहिआ छै। वांसली बाज रही छै। ढोलां बाजि रही छै। फाग गाइ जै छै। फाग खेली जै छै। नाची जै छै। हास विनोद कीजै छै। हास रस हुइ नै रहिआ छै।"

ग्रीष्म

"...............नैरत दिसा रौ ऊनो पवन वाजिओ छै। उन्हालसी प्रगटीओ छै। जेठ मास, लागो छै। सूरिज अस्त सक्रान्ति आयौ छै। सु जाणीजै छै। सूरिज अस्तां ने दरखतां रा आलो ताके छै। तो बीजा तोकां री कोण बात।

तरवरां रा पान झडिआ छै। सुजाणै वस्त्र बिनां नागा डिंगधरां सरीणा नजर आवै छै। निवाणां रा पाणी मीठिआ छै पाइणी वाल नै रही छै। आछै जल मांछला तड़भड़ी रहीआ छै। गजराज सूका सरोवर ढूंढता फिरै छै सादूला केसरी सिंह ज्वालानल अगनी सूं बलता थको

बीभ्रू वन रा हाथिआं रीं पेट री छाया सूता विसराम करै छै । भुयंग सर्प नीसरिआ छै । सा लू ने तावड़े री अगनी सूं बलतां थकां दौड़ि दौड़ि नै हाथीआ रै सीतल सूंडाहला मांहे पैसि पैसि रहीआ छै । इण भांति रा सबल जीव तिके निबल हुइ नै रहीआ छै ।

वर्षा का वर्णन इस ऋतु वर्णन के साथ नहीं हुआ है। इसका तो केवल नामोल्लेख ही कर दिया है। इसका प्रसंग तीसरे अध्याय में आया है—

"तण उपरान्ति करि नै राजान सिलामति चौमासा री छावणी हुइ छै । आगम रित आवी छै । आसाढ़ घूघलीआौ छै । उतराध री घटा काली कांठलि ऊपड़ी छै । आडंगरी गुडलि मांहे ऊंडी गाजीआौ छै । बगला पावस बैठा छै । पंखीआां मालास मरिआ छै । पावस पड़िने रहिया छै परनाला लाल पहाड़ लड़कीया छै । चात्रग मोर बोलि न रहिआ छै ।"

ऋतु वर्णन में पृथ्वीराज की "वेलि कृष्ण रुकमणी री" का अनुसरण किया गया है। ऋतु वर्णन में पर्व एवं त्यौहारों की ओर भी लेखक का ध्यान गया है। यद्यपि इस "वात वणाव" में स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण नहीं हुआ है तथापि यदि प्रसंग को ध्यान में रखा जाय तो इसकी स्वतन्त्रता में तनिक भी सन्देह नहीं होता।

२—खीची गंगेव नींबावत रौ दोपहरो

इसमें गंगेव नी बावत खीची की दोपहर-चर्या का विस्तृत विवरण है। विषय की दृष्टि से इसके २ विभाग किये जा सकते हैं

१—आखेट सम्बन्धी (पूर्वार्द्ध में)

२—भोज सम्बन्धी (उत्तरार्द्ध में)

प्रथम में आखेट की तैयारी एवं उसकी सफलता दिखलाई गई है। दूसरे में जलाशय के तट पर नींबावत द्वारा किये गये भोजन का दृश्य है। यह विवरणात्मक-चित्र-शैली में लिखा गया है। इसकी भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित है कहीं कहीं पर पद्यानुकारी गद्य के भी अच्छे उदाहरण मिलते हैं :—

एक उदाहरण देखिये—

"बरखारितु लागी : विरहण जागी। आभा भरहरै : बीजां आभास

करै। नहीं ठैवां खावै : समुद्र न समावै। पहाड़ां पाखर पड़ी। घटा ऊमड़ी मोर सोर मंडै : इन्द्र धार न खंडै। आभो गाजै : सारंग बाजै। द्रावस मेघ भी हेवी हुवौ : सु दुखियारी री आँख हुवौ। झड़ लागी : प्रथी रो दलद्र भागो दादुरा डहिडहै : सावण आयाये री सिघ कहै। इसी समइयौ बण रह्यो छै। बरखा मंड ने रही छै : बिजली झलौमिल करिनै रही छै। बादली झड़ लागो छै सेहरां सेहरों बीज चमक ने रही छै। जाणे कुलटा नायका घर सूं नीसर अंग दिखाय दूसरै घर प्रवेस करे छै। मोर कुहकै छै : डेडरां डहकै छै। भाखरां रा नाला बोल ने रह्या छै। पाणी नाला भर ने रह्या छै। चौटड़ियाल डहकने रही छै। बनस्थली सूं बेलां लपट ने रही छै। प्रभात रो पोर छै। गाज आवाज हुई नै रही छै। जाणे घटा घणे हरख सूं जमी सूं मिलण आयी छै।"

इस प्रकार के वातावरण में नींबावत का आखेट प्रारम्भ होता है। वर्षा ऋतु के ऐसे समय में नीबावत की आखेट (सैल-सिकार) की इच्छा स्वाभाविक है।

आखेट वर्णन—

आखेट वर्णन में नींबावत का आखेट के लिये १—तैयारी करना और उसके उपरान्त २—शिकार करना ये दो महत्वपूर्ण कार्य आते हैं। इनमें पहले की अपेक्षा दूसरे का वर्णन अधिक विस्तार से हुआ है। प्रथम के अन्तर्गत नींबावत का एक सहस्र घोड़े प्रस्तुत करना, उसके सरदारों का अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित होकर आना, नींबावत का बाहर निकलना है। द्वितीय का चित्रण नगारे के साथ होता है। एक ओर शिकारी कुत्ते, चीते, घोड़े बाज, सिकरा, कुही आदि हैं दूसरी ओर सूअर, हिरन, खरगोश, तीतर, लवा, बटर आदि हैं। शिकार का वातावरण बन रहा है जिसके कई शब्द-चित्र आकर्षक हैं जैसे—

"घोड़ां रा पगांसूं जमी गूंज रही छै। खेह रो डोरो आकास नै जाय लागो छै। घूघरमाल घोड़ां री बाज रही छै। हींस कलल होफ हुई ने रही छै। बहलियां रा घूघरां जंगा रो झणकार हुइ नै रह्यो छै। पहड़ां रा बांस पड़्यां रो खड़खड़ाहट हुइ नै रह्यो छै। होफरा हुइ नै रह्या छै। नगारे झणकारो हुइ नै रह्या छै। सहनायां मे मलार राग हुइ नै रह्यो छै। निसाण मुंहडे आगे फरहर नै रहया छै।................"

मौज वर्णन

आखेट के श्रम, दोपहर की धूप तथा रात्रि के अमल की खुमारी उतर जाने से नींबावत और उसके साथियों को प्यास लगती है । अपने सारे शिकार को एकत्रित कर वे निकटवर्ती जलाशय के समीप पहुंचते हैं। सरोवर पर घोड़ों से उतरना, अपने वस्त्र एवं अस्त्र शस्त्र खोलना, विश्राम करना आदि का विस्तृत वर्णन है। इसके उपरान्त नींबावत का अपने साथियों के साथ अमल करना, भजन और ख्याल सुनना, सरदारों द्वारा जलचरों का शिकार किया जाना, बकरों का काटा जाना, शिकार किये गये जानवरों का मांस तैयार करना, भोजन करना आदि के चित्र हैं। भोजनोपरान्त नींबावत अपने साथियों के साथ लौटते हैं महलों में रानियां उनकी प्रतीक्षा खड़ी हैं :—

"ज्यां का मलूक हाथ पांव जंघा कदली को भ्रम, बांह चंपा री डाल, सिंघ सी कमर, कुच नारंगी, नख लाल ममोला, ग्रीवा मोर सी, बोली कोकल सी, अधर प्रवाली, दांत दाड़मी कुली, नाक सुवा की चोंच, नाथ रामोनी जाणे सुक ब्रिहसपत सारखा दीपै छै। जाणे लाल कंवल री खुसबोय लेवण सेत भंवर आया छै ग्रव सा नेत्र, मीन जिसा चपल। मुह जाणे इन्द्र धनख छै। मुख पून्यूं है चन्द ज्यूं सोलहै कला संपूरण छै। पेट पीपल रौ पान छै। पाँसाँ माखन री लोथ छै। नितंब कटोरा सा छै। नाभी मंडल गुलाब रो फूल सो छै।........"

उक्त-वर्णित दोनों ग्रंथों की भांति कुछ ऐसे भी ग्रंथ मिलते हैं जिनमें केवल वर्णन के उदाहरण ही उपस्थित किये गये हैं। ऐसे ग्रंथों में कुछ इस प्रकार हैं :—

३—वाग्विलास या मुत्कलानुप्रास[1]

इसके वर्ण्य-विषय इस प्रकार हैं— १-नरेश्वर वर्णन २-नगर वर्णन ३-माहत्म्य वर्णन ४-वनभूमि ५-सरोवर ६-राजसभा ७-वैमानिक देव

....

१—यह ग्रन्थ जैसलमेर के भंडार से प्राप्त हुआ है। इसके कुल ८ पत्र हैं जिनको देखने से इसकी रचना काल सौलहवीं शताब्दी हो सकता है। प्रति प्राप्ति स्थान : यति लक्ष्मीचन्द्र जी बड़ा उपासरा खरतरगच्छ जैसलमेर

८-जिनवाणी ६-मुनि १०-वेशनाम ११-नायिका १२-जिन वर्णन १३-शील १४-तप १५-भावना १६-चोर १७-मंत्री १८-दुर्जन १६-दरिद्री २०-गज २१-ये किणकाम रा (ये किस काम के) (निरर्थक वस्तुयें) २२-सुश्रावक २३-रावण राज्य २४-अरवी २५-गुरू २६-सुश्राविका २७-तपोधना (महासती) २८-देव गुरु का आशीर्वाद २६-सौख्य ३०-धर्म-आराधना ३१-द्रव्य ३२-पुष्प वृक्ष । ३३-मरूयउ-यात्री ३४-वाटिका, ३५-प्रमाद ३६-विरहिणी ३७-द्वादस मास वर्णन ३८-चतुर्दश स्वप्न वर्णन ३६-राजा ४०-राजकुमार ४१-मन्त्री ४२-शरीर सकलापु (अंग राग) ४३-खाद्य वस्तु ४४-पकवान ४५-वस्त्र ४६-आभरण ४७-प्रधान वृक्ष ४८-सगर्व स्त्री ४६-वियोगिनी ५०-कृत्रिम-स्नेह ५१-युद्ध ५२-शाकिनी ५३-वैताल ५४-अरब ५५-नगर सेठ ५६-पुत्र के प्रति माता का स्नेह ५७-सहजवाक्य ५८-शोभा निलय ५६-वेश्या वर्णन ६०-धवलगृह ६१-चन्द्रोदय ६२-सूर्योदय ६३-अशोभनीय वस्तुएं ६४-प्रसिद्ध वस्तुयें (लीला परमेश्वर की) सृष्टि ब्रह्मा की आदि ६५-चंचला लक्ष्मी ६६-कलि प्रवर्तन ६७-पुतली (प्रतिमा) ६८-नगर वर्णन ६६-लोक वर्णन ७०-युवराज वर्णन ७१-सत्पुरुष प्रतिज्ञा ।

इस वर्णक ग्रंथ में कहीं कहीं संस्कृत का भी प्रयोग हुआ है। कोई वर्णन दो बार भी आगया है किन्तु उसमें पुनरुक्ति दोष नहीं आने पाया। भाषा में अन्त्यानुप्रास का ध्यान रखा गया है।

गद्य का उदाहरण—

वनभूमि का वर्णन

शिव तणा फेत्कार, थूअड तणा धूत्कार। सिंघ तणा गुंजारव, व्याघ्र तणा घुघुराव। सूयर घुरकइं, चित्रक बरकइं, वैताल किलकिलइं, दावानल प्रज्जलइं। रीछ ऊछलइं भ्रभणी भ्रमइं मृग रमइं, जिसा हुइ दविधा रूंख, इसा दीसइ भील। इसी वनभूमि।

४—कुतूहलम्[1]

इस प्रति के अन्त में "इति कोतूहलम्" शब्द लिखा है जिससे पता चलता है कि कुतूहल उत्पन्न करने वाले वर्णनों के कलात्मक उदाहरण यहां

....

१—अगरचन्द नाहटा (राजस्थान भारती) वर्ष ३ अंक ३ पृ० ४३

मिलते हैं। गद्य उदाहरण—

वर्षाकाल–

ऊमटी घटा, बादला हुइ चकऊं, पड़इ छुटी भाजइ गंटा, भीजइ लटा।
मेह गाजइ, आयो नाल गीला बाजई, दुकाल लाजइ,
सुवाय बाजइ, इन्द्र राजइ, ताप पराजइ।
बीज झबके, मेह टबके, हीया धबके, पाणी भभके, नदी उबके,
वनचर लबके आयो झबके।
बोलइ गोर, डेड करे सोर, अंधार घोर, पैसइ चोर, भीजइ ढोर।
खलके खाल, वहे परनाल, चूमे माल, सोप गया पयाल।
झड़ लागी, लोक दसा जागी,
घर पड़े, लोग ऊंचा चढ़े–

४–तमाखू गार[1]–

इस ग्रंथ की प्राप्त प्रति सं० १७६२ में महिमा विजय द्वारा लिखी गई है। इसमें वर्णन बहुत अधिक तथा आकर्षक है।

गद्य का उदाहरण—

वर्षा—

वर्षा कालहुउ, वहितो रहित कुयउ,
वावि पाणी भरता रया। बादल उनया।
मेघ तणा पाणी वहे, पंथी गामइ जाता रहे।
पूर्वना वाजइ वाय, लोक सहु हर्षित थाय।
आकाश घड़हड़े, खाल खड़हड़े।
पंखी तड़फड़इ, वडी माणस लड़थड़इ।
काठ सड़इ, हाली हल खड़इ।
आपणा घरि कादम फेड़इ, बीजा काज मेड़इ।
पार न लींइ। साध विहारन करीइं।
अनेक जीव नीपजै, विविध धान ऊपजै।
लोकनी आस पूजै, गाय भैंस दूजै - आदि

....

१—राजस्थान भारती – वर्ष ३ अंक ३ पृ० ४४

६—दो अनामक अपूर्ण ग्रंथ

१—वर्णनात्मक बड़ी प्रति[1]

यह प्रति प्राप्त वर्णक-ग्रंथों में सबसे बड़ी है। इसके ४० पत्र प्राप्त हैं। वर्षा-वर्णन का एक दृश्य देखिये—

गद्य का उदाहरण—

"अथ भाद्रपद मास, पूरइ विश्व नी आस, लोक नइ मनि थाइ उल्लास।

जिहु नइ आगमि वरसइ मेह, न लाभइ पाणी नो छेह, पुननँव थाइ देह।
भला हुइ दही, परी खा कोइ कहे नदि सही, पृथ्वी रही गहगही।
साचइ कादम माचइ, करसणि नाचइ। नीपजइ सातइ धानि देखतां प्रधान।
नासइ दुकाल, माद्रवे हूंडइ सुगाल आदि—

२—दूसरी अपूर्ण प्रति

यह प्रति श्री अगरचन्द नाहटा को केशरियानाथ भंडार, जोधपुर का अवलोकन करते हुए मिली[2]। इसमें कुल १५७ वर्णन हैं १५८ वां अधूरा ही रह गया है—

गद्य का उदाहरण—

विहरणी—

हारु चोड़ती, वलय मोड़ती। आमरण मांजती वस्त्र गाँजती किंकणी
कलाप छोड़ती, मस्तक फोड़ती। वक्षस्थल ताड़ती कंचुइ फाड़ती।
केशकलाप रोलावती, पृथवी तलि लौटती।
आंसू करि कंचुक सींचती, डोडली दृष्टि मींचती
दीनवचन बोलती सखीजन अपमानती।

....

१—हू० प्र० डा० भोगीलाल सांडेसरा : बड़ौदा विश्व विद्यालय के पास विद्यमान

२—अगरचन्द नाहटा - राजस्थान भारती वर्ष ३ अंक ३-४ पृ० ९१

थोड़इ पाणी मांछली जिम तालोचलि जाती शोक विकल थाती।
खणि जोयइ, खणि रोयइ। खणि हंसइ, खणि रूसइ।
खणि आक्रंदइ, खणि निंदइ। खणि भूझइ, खणि बूझइ।
तेह तनु, संताप चंदण। आदि

कविवर सूर्यमल

(जन्म सं० १८७२ : मृत्यु सं० १६२५[1])

सूर्यमल बीसवीं शताब्दी के प्रौढ राजस्थानी लेखकों में हैं। इनके पिता चंडीदास एवं माता भवानबाई थीं। बूंदी निवासी श्री चण्डीदास जी स्वयं डिंगल और पिंगल के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनके गीतों का संग्रह "बल-विग्रह" के नाम से प्रकाशित है। वंशाभरण (कोष) तथा "सार-सागर" इनके अप्रकाशित ग्रंथ हैं।

पिता की भांति श्री सूर्यमल जी ने अपनी प्रतिभा का परिचय बाल्य-काल से ही देना प्रारम्भ किया। दस वर्ष की आयु में इन्होंने "राम रजाट[2]" नामक ग्रंथ की रचना की। एक वर्ष में इन्होंने संधि-ज्ञान प्राप्त कर लिया[3]। तथा १२ वर्ष की अवस्था तक ये व्याकरण में पद-ज्ञान के अधिकारी हुये[4]। इसके उपरान्त सूर्यमल की कवित्व शक्ति का क्रमिक विकास होता गया।

इन्होंने कुल ६ विवाह किये जिनसे केवल एक कन्या उत्पन्न हुई। उस शिशु-कन्या को प्यार करते करते शराब के उन्माद में इतना हिलाया डुलाया कि वह भी मर गई। श्री मुरारी दान को इन्होंने दत्तक पुत्र बनाया।

....

१—देखिये:—
वीर सतसई भूमिका पृ० १२
कवि रत्नमाला पृ० ११४
राजस्थान साहित्य की रूपरेखा पृ० १४४
डिंगल में वीर रस पृ० ६८
वंश भास्कर

२—इसमें बूंदी नरेश श्री रामसिंह जी के दौरे एवं आखेट का वर्णन है।

३—वंश भास्कर प्रथम राशि, प्रथम मयूख पृ० १६

४—वही पृ० १५

इनकी सबसे महत्वपूर्ण रचना "वंशभास्कर" है जो सात भागों में प्रकाशित है। इसमें राजपूतों को ६ वंशों का इतिहास है। प्रासंगिक रूप से कई अवतरण बीच बीच में आये हैं। यह पद्य ग्रंथ है किन्तु कुछ स्थानों पर गद्य का भी प्रयोग है। अपने जीवन काल में सूर्यमल्ल इस ग्रंथ को पूरा नहीं कर सके। बूंदी नरेश की आज्ञा से दत्तक पुत्र मुरारीदान ने इसे पूरा किया।

कविवर सूर्यमल ने अपने वंश-भास्कर के चतुर्थ, पंचम, षष्ठ एवं सप्तम राशियों में गद्य का प्रयोग किया है[1]। यह गद्य कुल १८३ पृष्ठों में

....

१—चतुर्थ राशि :—

पृ० ११८६–१२१३,	४।१,	२, ३,	११०-११-१२	=२८
१२६१–१२६७,	४।६,		११५	= ७
१३४१–१३४६,	४।१५,		१२४	= ६
१३४६–१३८२,	४।१५,	१६, १७	१२४-५-६	=३४
१६१०–१६२८,	४।३५,	३६	१४४-४५	=१६
				९४

पंचम राशि :—

१७६२–१७७२,	५।७६		१५४।५५	=१०
१८११–१८२६,	५।११	१२	१५८-५६	=१६
१८४१–१८५०,	५।१३		१६०	=१०
१६६७–१६७६,	५।१५			=१०
				४६

षष्ठ राशि :—

३०७३।३०७४,	७।२६			= २

सप्तम राशि :—

२३२४–२३३७,	६।११		१६४	=१४
२६६१–२६७३,	७।१०		२२२	=१३
२६७४–२६८७,	७।११		२२३	=१४
				४३

है। इसके साथ दोहे और छप्पय भी हैं। गद्यांश को "संचरण गद्य" नाम दिया गया है। इस गद्य में प्रौढ़ राजस्थानी के रूढ शब्दों का प्रयोग मिलता है।

गद्य का उदाहरण—

इणरीत आपरा ओर भी विसेस वीरां नूं बधाई काकारा द्वार रो कंवाड़ होइ सेना समेत सलेम ४१। १ उठै ही आडो रहियो।

अर काकै भी पुलियार होइ प्राची १ रो परिकर इक्टठो करि फेर भी दिल्ली पर चलावण दृढ़ भाव गहियो।

इण बात रै हाके पहली सितारा १ बीजापुर भावनगर प्रमुख दक्खिण पच्छिम रा अधीस दो ही साहजादा मिलिया तिकै दूजा अग्रज रै अनुकार साम्हे संकल्प दिल्ली रा दायाद होइ साम्हां चलाया।

अर दिल्लीस भी घणा साहस थी आपरा जावण में आडो होइ चलायो इसड़ा बड़ा कुमार दारा न सूं साम्हें पूगण रो विदेस देर विदा कीधो। जतरे तापि नूं लांघि नर्मदा नदी रै नजीक आया।१२।

—सप्तम राशि दशम मयूख पृ० २६६१



४--वैज्ञानिक-गद्य

वैज्ञानिक गद्य दो रूपों में मिलता है -- क-अनुवादात्मक और ख-टीकात्मक। अनुवाद या टीकायें संस्कृत से की हुई हैं। राजस्थानी में स्वतन्त्र रूप से लिखे गये वैज्ञानिक गद्य के उदाहरण बहुत कम मिलते हैं। प्राप्त अनुवाद एवं टीकायें योग शास्त्र, वैद्यक तथा ज्योतिष से सम्बन्धित है।

योग-शास्त्र—

योग-शास्त्र के अन्तर्गत दो टीकायें उल्लेखनीय हैं— क-गोरख शत टीका[1] और ख-हठ-प्रदीपिका-टीका[2]। पहली में हठयोग की क्रियाओं पर प्रकाश डाला गया है। संस्कृत मूल पाठ भी साथ में दिया हुआ है। दूसरी में हठयोग का प्रमुख ग्रंथ हठ-प्रदीपिका पर टीका की गई है। इसका लेखनकाल अन्तर्साक्ष्य के आधार पर सं० १७८७ निश्चित है। बीकानेर में पुरोहित श्रीकृष्ण ने यह टीका लिखी। इन दोनों ग्रंथों में विषय साम्य है।

गद्य के उदाहरण—

क-"एक तो आसन, दूजो प्राण संरोध, तीजौ प्रत्याहार, चौथौ धारणा पांचमौ ध्यान, छट्ठो समाधि। ये छह योग का अंग छै।"

—गोरख शत टीका

ख-"श्री गुरु ने नमस्कार करि स्वात्माराम योगीश्वरै। केवल निः केवल राजयोग की तांई हठ विद्या छै सु उपदिशी जियै छै। कहीयै छै।"

—हठयोग प्रदीपिका टीका

वैद्यक—

वैद्यक विषय के प्राप्त अनूदित ग्रंथ इस प्रकार हैं— (क) ऋतु चर्या (अपूर्ण) (ख) योग-चिन्तामणि-टीका (ग) रसाधिकार (घ रसायण विधि

....

१—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान।
२—वही

(च) पालकाप्य गजायुर्वेद टबार्थ, (छ) घोड़ा चाली विवरण (ज) शालिहोत्र (झ) प्रताप सागर[१]।

प्रथम ग्रंथ में विभिन्न ऋतुओं के अनुसार वात, पित्त और कफ की अवस्थाओं का उल्लेख है। ऋतु-चर्या पर प्रकाश डालने के उपरान्त रस-प्रशंसा का प्रसंग भी आया है। दूसरा ग्रंथ हर्षकीर्ति उपाध्याय द्वारा लिखित योग चिन्तामणि (संस्कृत में) की टीका है। इसमें पाक विज्ञान चूर्ण गुटिका (गोली) क्वाथ, घृत, तैल, भस्म, मृगांक, आसव आदि के तैयार करने की प्रणाली बताई गई है। तीसरे और चौथे ग्रंथ में रस और रसायन पर विचार हुआ है। पांचवीं रचना गज चिकित्सा से सम्बन्ध रखती है। इसमें हाथियों के प्रकार, उनको जाति लक्षण, गुण, रक्षा-विधि तथा उपचार प्रणाली पर प्रकाश डाला गया है। छटी में घोड़ों की चौसठ व्याधियां और उनके उपचार बताये हैं। सातवीं में घोड़ों की जाति रंग, गुण शुभा शुभ लक्षण, शरीर निर्माण, नाड़ी परीक्षा, रोग और उनके उपचार का उल्लेख है। यह घोड़ा चाली विवरण की अपेक्षा अधिक विस्तार से लिखी गई है। आठवीं रचना जयपुर नरेश महाराजा प्रताप सागर "ब्रजनिधि" द्वारा तैयार करवायी गई है। इसका प्रचार तथा प्रसिद्धि दोनों ही अधिक हुई है।

ज्योतिष

वैद्यक की भांति ज्योतिष के भी अनूदित ग्रंथ ही मिलते हैं। इनको तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है – (१) राशिफल आदि (२) शकुन शास्त्र (३) सामुद्रिक शास्त्र।

प्रथम विभाग के अन्तर्गत १–साठ संवछरी फल[२] २–डक्क भडुली ज्ञान विचार[३] ३–द्वादश राशि विचार[४], ४–पंचांगविधि[५] ५–रत्नमाला टीका[६]

१—इन सबकी हस्त प्रतियां अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान हैं।

२—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, में विद्यमान।

३—वही

४—वही

५—वही

६—वही

६–लीलावती[1] प्राप्त हैं इनमें राशि और उनके फल पर ही अधिक प्रकाश डाला गया है। १–देवी शकुन[2] २–शकुनावली[3] ३–पासाकेवली शकुन[4] : ये शकुन शास्त्र से सम्बन्धित हैं। प्रथम दो की रचना रावल अखैराज ने की है। तीसरी जैन समयवर्द्धन गणि की है। इन तीनों में शकुन के ऊपर विचार व्यक्त किये गये हैं। १–सामुद्रिक टीका तथा[5] २–सामुद्रिक शास्त्र[6] में सामुद्रिक विज्ञान के रहस्यों का उद्‌घाटन किया गया है।



१—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर, में विद्यमान।
२—वही
३—वही
४—वही
५—वही
६—वही

५—प्रकीर्णक-गद्य

इस काल में निम्नलिखित चार नये क्षेत्रों में राजस्थानी गद्य का प्रयोग हुआ-(क) अभिलेखीय, (ख) पत्रात्मक, (ग) नीति विषयक (घ) यंत्र-मंत्र सम्बन्धी।

क—अभिलेखीय—

जैसलमेर में पटवों के यात्री-संघ का वर्णन करने वाला शिलालेख अभिलेखीय गद्य का अच्छा उदाहरण है[1]। इस यात्री संघ का प्रतिष्ठा महोत्सव बड़ी धूमधाम से हुआ था। इस शिलालेख से पता चलता है कि इस उत्सव में ढाई लाख यात्री सम्मिलित हुये थे। उदयपुर, कोटा, बीकानेर किशनगढ, बूंदी, इन्दौर आदि के नरेशों ने भी उसमें भाग लिया था। इसमें संघ का भोज, उसका वैभव आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है।

गद्य का उदाहरण—

"जैसलमेर, उदैपुर, कोटे सुं कुंकुम पत्रयां सर्व देसावरां में दीवी। चार-चार जीमण किया। नालेर दिया। पछै संघ पाली भेलो हुवो। उठे जीमण ४ किया। संघ तिलक करायो। मिति माह सुदी १३ दिने। श्री जिन महेन्द्र सूरि जी श्री चतुर्विधि संघ समक्ष दीयो। पछै संघ प्रमाण कीयो। मार्ग में देखतां सुणतां पूजा पडिकमणां करतां साते क्षेत्र में द्रव्य लगावतां जायगां जायगां समेला होता........मारगमाहे सहारा रां गामारां सर्व देहरा जुहारया।"

ख-पत्रात्मक :—

सत्रहवीं से बीसवीं शताब्दी तक के हजारों पत्र श्री नाहटा जी के संग्रहालय में विद्यमान हैं। सामयिक महत्व होने के कारण ऐसे असंख्य पत्र नष्ट हो गये होंगे। पत्रों में बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग होता है

१—जैन-साहित्य-संशोधक : भाग १ अंक २ पृ० १०८

अतः भाषा के विकास का अध्ययन करने के लिये ये पत्र अत्यन्त महत्व के हैं। इन पत्रों के ३ विभाग किये जा सकते हैं—

१—बीकानेर नरेश तथा जैन-आचार्यों का पत्र-व्यवहार

२—जैन आचार्य या साधुओं एवं श्रावकों के पत्र

३—जन साधारण के पत्र

नरेशों द्वारा जैन आचार्यों की सुविधा के लिये आज्ञा-पत्र निकाले जाते थे। इनमें वे अपने राज्य के अन्तर्गत आये हुए जैन आचार्यों को कोई कष्ट न हो ऐसी इच्छा प्रकट करते थे। जैसे—

: छाप :

"महाराजाधिराज महाराज श्री जोरावरसिंघ जी वचनात् राठौड़ भीमासिंघ जी कुशलसिंघ जी मुंहता रघुनाथ योग्य सुप्रसाद बांचजो। तिथा सरसे में जती अमरसी जी छै सु थाने काम काज कहै सु करदीज्यो। ऊपर घणो राखज्यो। फागुण वदी ४ स० १७९६"

जैन आचार्य भी आवश्यकतानुसार समय समय पर नरेशों को पत्र लिखते रहते थे इनके कई विषय होते थे। एक सिफारश का उदाहरण—

"श्री परमेसर जी सत्य छै"

स्वस्ति श्री भटारक सिरीपूज श्री जिनलाभ सूरि जी योग्य राजाधिराज श्री बखतसिंघ जी लिखावतां नमस्कार बंचज्यो............। तथा बाणारस नैणसी जी राजकने आया छै। ये महाजोग्य छै। पंडित छै। इणानै उपाध्याय पद दिराय नै सीख दिराज्यो – संवत् १८०४ रा फागण वदि १३"

दूसरे और तीसरे प्रकार के पत्र बहुत अधिक संख्या में हैं इन पत्रों का उद्देश्य व्यवहारिक है। उदाहरण के लिये तीसरे प्रकार के एक पत्र का उदाहरण देखिये—

"स्वस्ति श्री पार्श्वजिन प्रणम्य रम्य मनसा श्री बीकानेर नगरे सर्वगुण निधान सत्क्रिया सावधान पं० प्र० भाई श्री हीरानन्द जी गणि गजेन्द्रान् श्री मुलतानतः राम चद लिखि तं सदा वंदना जाणिधी........तथा पत्र १ आगे दीयौ छै तै पुहुतो लिष ज्यो तथा तुहे कुशल षेम पहुता रो पत्र वेगो देजो जी। ब्युं मनसाताया मै जी तुहाने जीमती वेला सदा चीता रीये छै। तुम्हारा सौजन्य गुण घटी मात्र पिण बीसरता नहीं छै। जी घड़ी पल विण

थे सुहाले चीजा रां छां जी जेहवो स्नेह प्यार राखो छो तिण थी विशेष राखेजो जी। तुहे अम्हारे घणी बात छो सनेही छौ। साजन छौ। परम प्रीता छौ। परम हितकारी छौ। पत्र में लिख्यो प्यारो लागे छे। पत्र वेगा २ दीजो जी। श्राविका तुलरासनी नै घणी दिलासा आसासना दे जो तुहां थकां हुं निचिंत छूं जी।। घणी जाबता राखे जो वस्त वा मांगे तो दे जो जी। मिति मिगसर सुदि १३ होरहर जी अस कलक रै छै सांभली रु० १३ भुगत ले जो पं० लाषण सी जी ने वंदना कहजौ जी[1]।"

इसके अतिरिक्त जैनियों के १–विनती पत्र २–विज्ञप्ति पत्र भी मिलते हैं। विनती-पत्र एक प्रकार से प्रार्थना पत्र के रूप में होता है जैसे उज्जयनी के संघ का विनती-पत्र[2]। विज्ञप्ति पत्र प्रसिद्धि बढाने के लिये लिखा जाता था जैसे विबुधविमल सूरि का विज्ञप्ति पत्र[3]।

ग–नीति विषयक

जैन और पौराणिक कथाओं में नैतिकता पर अधिक प्रकाश डाला गया है। उनके अतिरिक्त कुछ ऐसे अनुवाद भी हुए जिनमें दादू आदि ग्रंथों में प्रचलित नैतिक आदर्श की अभिव्यक्ति हुई। चौरासी बोल[4], भरथरी सबद[5] और भरथरी उपदेश[6] दादूपंथी साधु बालकदास की रचनायें हैं। चाणक्य नीति टीका[7] में चाणक्य की नीति (संस्कृत में) की टीका भाषा में की गई है।

घ–यंत्र मंत्र सम्बन्धी

घंटा कर्णकल्प[8], बिच्छु रो झाड़ो[9] के अतिरिक्त कुछ स्फुट मंत्र की

....

१—अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर।
२—जैन-साहित्य-संशोधक खण्ड ३ अ० ३
३—जैन-साहित्य-संशोधक खण्ड ३ अंक ३
४—ह० प्र० अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान।
५—वही
६—वही
७—वही
८—वही
९—वही

रचनायें यंत्र मंत्र सम्बन्धी गद्य के उदाहरण हैं। इनमें मंत्रों के साथ यंत्र (रेखाचित्र आदि) भी दिये हुए हैं।

इस मध्य काल में गद्य बहुत अधिक मात्रा में लिखा गया। भाषा, शैली तथा विषय तीनों की दृष्टि से यह गद्य महत्व का है। प्रयास काल की लड़खड़ाती हुई भाषा अब पूर्ण रूप से समर्थ हो गई। टिप्पणी-शैली इस काल में बहुत कम दिखाई देती है। शैली के नये नये प्रयोग ध्यान आकर्षित करते हैं। जैन-शैली के अतिरिक्त चारणी एवं ब्राह्मण-शैली का उद्भव हुआ। चारणी-शैली में लिखा गया ख्यात-साहित्य इस युग की देन है। वचनिका-शैली के अधिक उदाहरण नहीं मिलते। व्याकरण-शैली का इस काल में नितान्त अभाव रहा। कथा साहित्य की रचना इस काल में बहुत हुई। कई कथाओं के संग्रह इस समय किये गये। दवावैत-शैली में पुष्ट एवं प्रौढ़ गद्य के उदाहरण मिलते हैं। यह इस काल का नवीन प्रयास था। इसके गद्य में पद्य का सा आनन्द मिलता है। इस युग के लेखकों का ध्यान वर्णक-ग्रंथ की रचना करने की ओर गया। यह उनकी नई सूझ का परिणाम था। गद्य-लेखन की परिपाटी चल पड़ी थी अतः कुछ ऐसे विवरणात्मक गद्य के ग्रंथ लिखे गये जिनके किसी भी अंश का प्रयोग प्रसंगानुसार किया जा सकता था। ब्राह्मण-शैली यद्यपि टीकात्मक रही तथापि विषय एवं भाषा की दृष्टि से यह उल्लेखनीय है। वैज्ञानिक एवं प्रकीर्णक विषयों में टीकात्मक-गद्य का प्रयोग हुआ। योग शास्त्र, वैद्यक, ज्योतिष जैसे विषयों का प्रतिपादन करने के लिये गद्य काम में लाया गया। अभिलेखीय एवं पत्रात्मक गद्य के अच्छे उदाहरण इस काल में मिलते हैं। यंत्र-मंत्र सम्बन्धी गद्य के स्फुट प्रयास हुये। शैली का अपनापन इस काल की विशेषता है।

पंचम प्रकरण

आधुनिक-काल

(सं० १९५० से अब तक)

आधुनिक - काल

राजस्थानी-साहित्य का आधुनिक काल भारत के राष्ट्रीय जागरण का युग है। इसका प्रारम्भ सं० १६५० के लगभग होता है। इस स्वदेश प्रेम की राष्ट्रव्यापी विचार धारा का प्रभाव राजस्थानी साहित्य पर अनिवार्य रूप से पड़ा। राजस्थानी के साहित्यकारों का सम्पर्क अन्य भाषाओं के नवीन साहित्य से हुआ जिसका प्रभाव उन पर पड़ना अवश्यम्भावी था। राजस्थानी के कलाकार भी हिन्दी की ओर झुके तथा उसकी रचना में सक्रिय सहयोग दिया।

संवत् १६०० के पूर्व ही राजस्थान अंगरेजों के शासनाधीन हो चुका था। अंगरेजी शासनकाल में न्यायालयों की भाषा उर्दू तथा शिक्षा की भाषा हिन्दी हो गई। अब राजस्थानी के लिये कोई स्थान नहीं था। उसका राज्याश्रय समाप्त हो चुका। न वह शिक्षा की भाषा रही और न साहित्य की। फलस्वरूप मध्यकाल में राजस्थानी-साहित्य का जो निर्माण बड़ी तत्परता से हो रहा था उसकी गति बंद हो गई। नवीन शिक्षा का प्रारम्भ एवं राजस्थानी पठन पाठन के उठ जाने से नव शिक्षित समाज हिन्दी की ओर बढ़ा। राजस्थानी को वह गंवारू भाषा समझने लगा। राजस्थानी साहित्य उसके लिये पूर्ण रूप से अपरिचित हो गया।

इतना होने पर भी राजस्थानी साहित्य की रचना बिल्कुल बंद नहीं हुई। गद्य और पद्य दोनों में मातृभाषा के उत्साही भक्त इसमें साहित्य रचना करते रहे।

राजस्थानी के नवोत्थान के उन्नायकों में जोधपुर निवासी श्री रामकरण आसोपा का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। इनका जन्म सं० १६१४ में हुआ। ये राजस्थानी के धुरंधर विद्वान और लेखक थे। इनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर डा० सर आशुतोष मुकर्जी ने इनको कलकत्ता विश्वविद्यालय में लेकचरार बनाकर बुलाया था। डिंगल भाषा के ग्रंथों की खोज में ये डा० टेसीटोरी के प्रधान सहकारी रहे। इन्होंने आज से ४० वर्ष पूर्व राजस्थानी का एक व्याकरण बनाया जो इसका प्रथम व्याकरण होने पर भी वैज्ञानिक है। वृद्धावस्था में घोर परिश्रम करके इन्होंने डिंगल भाषा का वृहत् कोष तैयार किया।

दूसरा महत्वपूर्ण नाम श्री शिवचन्द भरतिया का है। ये जोधपुर राज्य के डीडवाणा नगर के निवासी थे पर अधिकांश बाहर ही रहे। अन्तिम दिनों में इन्दौर में वास किया था। श्री आसे पा विद्वान थे किन्तु भरतिया जी कलाकार। इन्होंने अनेक सुन्दर सुन्दर रचनायें करके राजस्थानी को लोकप्रिय बनाने और उसकी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयत्न किया। इन्होंने कई पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखे तथा नाटक, उपन्यास आदि भी लिखना प्रारम्भ किया। ये राजस्थानी के भारतेन्दु कहे जा सकते हैं।

पैठण निवासी श्री गुलाबचन्द नागौरी की अमूल्य सेवायें भी नहीं भुलाई जा सकतीं। ये राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता थे। बड़े उत्साह एवं लगन के साथ ये कार्य-क्षेत्र में आये। राजस्थानी को सर्वप्रिय बनाने के लिये इन्होंने विविध पत्र पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित किये राजस्थानी के उद्धार के लिये काफी जोर दिया।

घामणा गांव (बराड) के "मारवाड़ी हितकारक' पत्र ने राजस्थानी के उद्धार-कार्य में महत्वपूर्ण सेवायें कीं। राजस्थानी का यह सर्व प्रथम मासिक पत्र था जो सर्वथा राजस्थानी में छपता था। इसके सम्पादक श्री छोटेलाल शुक्ल तथा संचालक श्रीयुत नारायण बड़े ही उत्साही एवं कर्मठ व्यक्ति थे। इनके प्रयत्नों से इस समय राजस्थानी लेखकों का एक खासा मण्डल तैयार होगया था।

इस प्रकार के उत्साह एवं प्रचार कार्य मे राजस्थानी के प्रति लोगों का ध्यान गया। उसमें नवीन साहित्य-रचनायें होने लगी। नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध, गद्यकाव्य, रेखाचित्र, संस्मरण, एकांकी, भाषण आदि सभी क्षेत्रों में राजस्थानी गद्य के प्रयोग हुये।

नाटक

श्री शिवचन्द भरतिया ने नाटक रचना का सूत्रपात्र किया। इन्होंने १—केशरविलास २—बुढ़ापा की सगाई और ३—फाटका जंजाल नामक तीन नाटक लिखे। जो राजस्थानी के सर्वप्रथम नाटक हैं। इन तीनों नाटकों में भरतिया जी ने मारवाड़ी समाज की रूढियों का दिग्दर्शन किया है। विधा-भाव, अनमेल विवाह, स्त्री-अशिक्षा आदि सामाजिक बुराइयों को दूर करने का आन्दोलन इन नाटकों द्वारा प्रारम्भ किया गया। ये नाटक भाषा की दृष्टि से बहुत ही सफल उतरे हैं।

श्री गुलाबचंद नागौरी का "मारवाड़ी मोसर और सगाई जंजाल" नाटक सं० १९७३ में प्रकाशित हुआ। इस नाटक में मरतिया जी के नाटकों की भांति समाज सुधार का उद्देश्य ही रहा। "मोसर" और "सगाई" इन दोनों रूढ़ियों की इस नाटक में तीव्र आलोचना है। इस नाटक की भाषा ओज पूर्ण है।

श्री भगवान प्रसाद दारुका का जन्म खेतड़ी राज्य के अन्तर्गत जसपुरा नामक ग्राम में स० १९४१ में हुआ। इनके पिता का नाम सेठ बालकृष्ण-दास था। ६ वर्ष की आयु में ही पिता की मृत्यु हो जाने पर इनका बाल्यकाल सुख में नहीं बीता। ये तीन भाई हैं तथा तीनों कलकत्ते में गल्ले के व्यौपारी हैं।

श्री दारुका ने राजस्थानी में पांच नाटक लिखे १—वृद्ध विवाह (सं० १९६०) २—बाल विवाह (सं० १९७५) ३—ढलती फिरती छाया (सं० १९७७) ४—कलकतिया बाबू (सं० १९७६) और ५—सीठणा सुधार (सं १९८२) इन पांचों नाटकों का प्रकाशन सं० १९८८ में "मारवाड़ी पंच नाटक" के नाम से हुआ। ये सभी नाटक सामाजिक बुराइयों के सुधार की प्रेरणा से लिखे गये। इन नाटकों में कलकतिया-बाबू अन्य नाटकों से अच्छा है।

श्री सूर्यकरण पारीक का जन्म सं० १९६० में पारीक ब्राह्मण कुल में हुआ। हिन्दू विश्व-विद्यालय काशी में इन्होंने अध्ययन किया। वहीं से अंगरेजी और हिन्दी में एम० ए० पास किया। बिड़ला कालिज (पिलानी) में आप हिन्दी अंगरेजी के प्रोफेसर एवं वाइस प्रिंसिपल थे।

अपने जीवन काल में पारीक जी ने राजस्थानी की स्मरणीय सेवायें की हैं। "वेलि कृष्ण रुक्मणी री" "ढोला मारू रा दूहा" राजस्थानी के लोक गीत, राजस्थानी वार्ता आदि अनेक ग्रंथों का सम्पादन सफलता पूर्वक किया। इन्होंने "बोलावण" नाम का एक छोटा सा नाटक लिखा था जो राजपूत वीरता का जीवित चित्र प्रस्तुत करता है।

सरदार शहर निवासी श्री शोभाराम जम्मड़ ने "वृद्ध विवाह विदूषण" नाम का एकांकी प्रहसन सं० १९८७ में लिखा। इस नाटक में भगवती-प्रसाद दारुका के "वृद्ध विचार" नाटक की भांति मारवाड़ी समाज के अनमेल विवाह का सुधारवादी चित्र है।

श्री आ० आ० वि० जोशी के "जागीरदार" में जागीरदार और किसानों के संघर्ष की कथा है। यह नाटक राजस्थानी का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। राष्ट्रीय जागरण की भावना इसका बीज बिन्दु है। इस नाटक की भाषा पर मालवी का प्रभाव है।

श्री सिद्ध का "जयपुर की ज्योनार" नाटक दारुका और जम्मड़ के नाटकों की भांति सामाजिक है। निर्धन होने पर भी समाज की रूढ़ियों के निर्वाह के लिये ऋण लेना, स्त्री शिक्षा का अभाव, उनकी आभूषण प्रियता एवं भोज में सम्मिलित होने की अभिलाषा आदि इस नाटक का विषय है।

श्री श्रीनाथ मोदी का "गोमा जाट" नामक नाटक ग्राम जीवन से सम्बन्ध रखता है। महाजनी प्रथा और उसका परिणाम इस नाटक का मूलाधार है।

श्री मुरलीधर व्यास के दो एकांकी "सरग नरक" और "पूजा" स्त्रयोपयोगी एवं शिक्षाप्रद हैं।

श्री पूरणमल गोयनका तथा श्री श्रीमन्त कुमार व्यास ने कई छोटे-छोटे एकांकी नाटक लिखे हैं। गोयनका के नाटक सामाजिक हैं तथा व्यास के ऐतिहासिक और राजनीतिक।

कहानी

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में शिक्षात्मक तथा मनोरंजनात्मक कहानियां प्रकाशित हुई, जिसमें श्री शिवनारायण तोषणीवाल की "विद्या-परमं देवतं[1]" (सं० १६७३) "स्त्री शिक्षण को ओनामो[2]" (सं० १६७३)। श्री नागोरी की "बेटी की बिक्री और बहू की खरीदी[3]" (सं० १६७३), श्री छोटेराम शुक्ल की "बंधुप्रेम[4]" (सं० १६७३) उल्लेखनीय हैं। श्री व्रजलाल बियाणी ने "सीता हरण" (सं० १६७५) कहानी रामायण की कथा के आधार पर लिखी।

....

१—पंचराज : वर्ष २ अंक २ पृ० ५५
१—वही : वर्ष २ अंक ४-५ पृ० ११६
३—वही : वर्ष २ अंक ३ पृ० ६०
४—वही : वर्ष २ अंक ७ पृ० २०३

इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक पहुंचते पहुंचते कहानियों का ढांचा बदला। उपदेश के स्थान पर कलात्मक तत्व प्रधान हो गया। इन कहानीकारों में श्री मुरलीधर व्यास अधिक यशस्वी रहे हैं। इनका जन्म सं० १६५५ वि० में बीकानेर में पुष्करना परिवार में हुआ। प्रारम्भ में ये राज कर्मचारी रहे। अब "सादुल राजस्थानी इन्स्टीट्यूट" बीकानेर में कार्य कर रहे हैं। इन्होंने कई कहानियां लिखी हैं जिनमें से कुछ समय समय पर पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। इनकी कहानियों का एक संग्रह "वरसगांठ" मुद्रणाधीन है।

इनकी "वरसगांठ[1]" एक निर्धन की करुण कहानी है। मोती की वर्षगांठ है। घीसू २५ रु० उधार लाता है जिसमें ५ रु० काटे के, १ रु० कोथली खुलाई का, आठ आने कबूतर की ज्वार का तथा लिखाई आदि के पैसे कट १८ रु० उसके हाथ में आते हैं। वर्षगाँठ मनती है। रुपये सभी खर्च हो जाते हैं। इसी समय ज्योंही घीसू भोजन करने बैठता है तभी दूसरा महाजन कंधी के रुपयों के लिये आ पहुँचता है। रुपये नहीं मिलने पर वह मोती के हाथ में से चांदी के कड़े खोल कर ले जाता है मोती चिल्लाता रहता है और उसकी मां सिर पकड़ कर गिर जाती है। एक ओर निर्धनों में उधार लेने की प्रथा, व्यर्थ आडम्बर में व्यय करने का अंध विश्वास है दूसरी ओर महाजनों की शोषण वृत्ति एवं क्रूरता है। दोनों का वास्तविक चित्र इस कहानी में अंकित है।

"मेहमामो[2]" कहानी में मरुदेश में वर्षा के महत्व पर चित्र बनाये गये हैं। वर्षा न होने से मारवाड़ी गरीबों की कैसी दशा हो जाती है - उन को अपने जीवन के प्रति कितनी आशा शेष रहती है आदि के अच्छे चित्रण इस कहानी में हुये हैं। साथ ही वर्षा होने पर बालक "मेहमामो आयो" कहकर नाच उठते हैं। उनका इस प्रकार प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है।

श्री मुरलीधर व्यास की कहानियों में विषय और शैली दोनों ही उल्लेखनीय हैं। समाजवादी धरातल में इनकी कथायें आधारित हैं। श्री व्यास की शैली अपनी निजी है। भाषा पर अधिकार होने के कारण चित्रण में उन्हें अधिक सफलता मिली है।

....

१—राजस्थानी भाग ३, अंक १ पृ० ६५
२—राजस्थानी भाग ३ अंक ४ पृ० ८६

उदाहरण—

"खैखाड बाजे। तिरखा रो आवक जोख नहीं। लोग-बाग आंख्यां फाड्यां आभै सामो जोवै। च्यार मिनख भेळा हुवै जठै आई बात के फलाणी जागां सौ डांगर मरग्या फलांणी जागां दो सौ। अेक भैंसो छावोडो। सगळां रा मूँडा लुक्खा लुक्खा लागै। घास इत्तो मूंघो के लोग बापेर सीख्यै। डांगरां सारू जागां जागां घास रो बंदोबस्त हुवै। दिन में कमाई वाले पण सिम्रूया पड़ी पाछो बोई खैखाड़[1]।"

समाज के जीवन को चूसने वाली हानिकारक रूढियों, पूंजीवाद की विषमताओं तथा वर्तमान समाज की व्यवस्था आदि के प्रति विद्रोह की भावना इनकी कहानियों में भरी है। इन बड़ी कहानियों के अतिरिक्त इन्होंने लघुकथायें भी लिखी हैं।

श्री चंद्राय की ३ लघुकथायें १—चंचल नै गंभीर २—सेठाणी जी ३—ढाणी रो चौधरी[2] - छोटे छोटे चित्र हैं। श्री मुन्नालाल पुरोहित की "ऊंट रो भाड़ो" नामक कहानी राजस्थानी की अच्छी कहानियों में से है।

श्री श्रीमंत कुमार, नरसिंह पुरोहित आदि अनेक नये लेखक इस क्षेत्र में अवतीर्ण हो चुके हैं इसकी रचनायें प्रायः प्रगतिवादी दृष्टिकोण से लिखी हुई होती हैं।

श्री नरसिंह पुरोहित के "कांण-संग्रह" में ७ कहानियां हैं - जिनके नाम इस प्रकार हैं— १-पुन्न रो काम, २-प्रेत लीला, ३-कालू री मां, ४-रात-बासो, ५-चोरी, ६-धोली टोपी, ७-अहिंसा परमोधर्मः— ये सभी कहानियां अच्छी हैं। श्री प्रेमचन्द की वर्णन शैली एवं मनोवैज्ञानिक विवरण इन कहानियों का आधार है।

गद्य का उदाहरण—

"और उणीज बखत सेठां रे घरै दीवाली मनावण नै कालूरी मां झट एक तूली सलगाई और झुक ने दीवारी बाट रे अड़ायदी, उणरे मुंडा सुं चीख निकलगी — म्हारो कालू! म्हारो कालू!! मुंडा सुं निकल्योकी फूंक

....

२—मेहमामो पृ० ८६
३—राजस्थानी भाग ३ अंक २ पृ० ६१

दिया रे लाजी और कम करतो दीवो बुझायो जितरे आपणा मकान माते दीवा हुवेणा चाहिजे।"

उपन्यास

राजस्थानी में उपन्यास नहीं लिखे गये। केवल एक उपन्यास "कनक सुन्दर" श्री शिवचन्द भरतिया का मिलता है। इस उपन्यास के पूर्वार्द्ध का प्रकाशन सं० १६७२ में हुआ और सम्भवतः उत्तरार्ध लिखा ही नहीं गया। इसमें मारवाड़ी जीवन का सुन्दर चित्र अंकित किया गया है। आदर्श वादी दृष्टिकोण से यह उपन्यास लिखा गया है सामाजिक सुधार-भाव इसका प्रधान प्रेरक रहा है। नाटकों की भांति श्री भरतिया के इस उपन्यास की भाषा में प्रवाह एवं शक्ति है।

गद्य का उदाहरण—

दोपहर दिन को वखत चारयाकानी लू चाल रही छै हवा का जोर सूं बालू अठी की उठी ने उड़ उड़ कर बीकां नवा नवा टीवा हो रह्या छै और भींजण भी रह्या छै। मुंह ऊंचो कर सामने चालणों मुस्कल छै। लू कपड़ा मांहे बड़कर सारा सरीर ने सिकताप कर रही छै। धूप इशी जोर की पड़ रही छै के जमी ऊपर पग देणो मुस्कल छै। रास्ता मांहे दूर दूर कठे ही भाड़ को नांव नहीं। बालू उड़कर जगां जगां नवा टीवा होणे सूं रस्ता को ठिकाणो नहीं। आदमी तो दूर रस्ता मांहे कोई जीव जिनावर को भी दरसण नहीं।"

रेखाचित्र एवं संस्मरण—

रेखाचित्र एवं संस्मरण लिखने का प्रयास बहुत ही आधुनिक है। श्री मुरलीधर व्यास और श्री भंवरलाल नाहटा ने इस क्षेत्र में अपनी लेखनी चलाई है। श्री भंवरलाल नाहटा का जन्म सं० १६६८ में हुआ। इनके पिता का नाम श्री भैरूदान नाहटा है। ये राजस्थानी के प्रसिद्ध लेखक श्री अगरचन्द नाहटा के भतीजे और साहित्यिक कार्य में उनके सहयोगी रहे हैं। प्राचीन लिपि एवं कला से इनको अधिक प्रेम रहा है। इनके प्रकाशित रेखाचित्रों में "लाभू बाबो[1]" सर्वश्रेष्ठ है। यह "लाभू"

....

१—राजस्थानी भाग १ पृ० ८६

इनके घर का पुराना नौकर था। चालीस वर्ष तक उसने इनके यहां कार्य किया। दो रुपये महीने का नौकर होते हुए भी इनके घर में उसका अच्छा सम्मान था। इस रेखाचित्र को सब पढ़ने वालों ने पसंद किया तथा इसकी प्रशंसा भी खूब हुई। श्री मुरलीधर व्यास के रेखाचित्र भी बहुत रोचक होते हैं। इनके रेखाचित्रों के पात्र यद्यपि श्री नाहटा के रेखाचित्रों की भांति पूर्ण रूप से व्यक्ति विशेष नहीं होते उनमें कुछ जातीय तत्वों का समावेश भी कर दिया जाता है। "रामलो भंगी[1]" "नंदो औड[2]" व्यास जी के रेखाचित्रों के अच्छे उदाहरण हैं। इनके गद्य में बिम्ब ग्रहण कराने की क्षमता है। कुछ उदाहरण देखिये—

१—"दूर री गली में अवाज भारियोड़ी इसी जाए पड़ती जाणे म्हारी ई गली में मारी होवे। मदरसे जावणिया छोरा छोरी बड़ा-बूढ़ा सगलै उडीक लगाये ऊभा रैतार थोड़ी देर होती देख र सै उथपण लागता पण नानकड़ा टाबरियां रै तो जावक ई खटावण को होती नीं, पड पछाड़ण लागता तो कोये भर भर भरमौलिये दाई मूंडो वणाय ले तो। वा ने राजी मरण सारू घर वाला "आवो ओहरदास जी वेगा आवो, मनिये ने दही दो।" इयां घड़ी-घड़ी कैता। इतेई में तो रंग उड्योड़ी मैली २ पागड़ी, हजामत वधियोड़ी, खांधे पर एक पुराणो मैलो र जागा जागा फटियोड़ो गमछो जिके ऊपर भाओलियो धरियोड़ो, एक हाथ में जाडो गेडियो, गोडा साइनो मैलो पछियो अर पगां में जाडा जूत, हरदास, "आयोई-आयोई" कैतो आय धमकतो।"

२—नंदे री बहू वेगी थकी बाजरी रा सोगरा सेकती। जिकै ऊपर घोटियोड़ी लूण-मिरच नाख-नाखेर सगले जीमण लागता पछै गधां पर पावड़ा, कुदाला भांफ, अर टांबरां तोड़ी थोड़ा सोगरार लूण-मिरच मेल र नंदो लुगायां टांबरां समेत कमठाणे ढूकतो। छैइयां री जागा डेरा लगावतो, पछै सगलै, काम में लागता। मोटियार डिगलो खोद र पूर सलूजावता। टाबर-लुगायां घूड़ोड़ रा गधा भर र सहर परकोटे रै बारै नाखण जावता। ऊपर सूं लाय बरसै पसवाड़े सूं पवन खीरा उछालै, सरीर ऊपर परसीयो रा परनाला वेवै। पर कांई मजाल कै थोड़ो फेट खाइले। हां, तिस लागती जयै नींगल्योड़ी हांडी मायलो पाणी रो मोटो लोटो भर'र ऊभाई बकल

१—राजस्थान भारती भाग ३ अं० १ पृ० १२३
२—वही भाग ३ अंक २ पृ० ७५

कका पी लेवता। कद सूरज मेळा बैठतो'र कद आपका विसराम लेता। नंदो खाटी मजूर हो।

श्री मुरलीधर व्यास ने कुछ संस्मरण भी लिखे हैं। संस्मरण लिखने का प्रयास सबसे पहले सेठ श्री कृष्ण जी तोष्णवाल ने किया था। इनका लिखा हुआ "पूना में ब्याव[1]" (स० १९७५) नामक संस्मरण है। जिसका विषय पूना का विवाह है। किन्तु श्री मुरलीधर व्यास के संस्मरण बहुत ही परिष्कृत रूप हैं। श्री व्यास जी के "संत सेठ श्री रामरतन जी डागा[2]" तथा "हरदास दहीवालो[3]" नामक संस्मरण बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं। श्री भंवरलाल जी नाहटा ने भी कुछ सस्मरण लिखे हैं जिनका प्रकाशन अभी नहीं हो पाया है।।एक उदाहरण देखिये—

"बांरो नाम तो है हजारीमल पण लोक बानें लंबू सेठ केवता, सीधा सादा लंबा खेजड़े सा दीखता। साठ बरस रा बूढ़ा पण काम काज रो आलस को होनी जद बकारता काम रो उतर को देवतां नी। कोई बानें जचे ज्यूं केवो हंसी मजाक करो पण गरम को हुवतानी।..........."

—लम्बू सेठ अप्रकाशित

निबंध

पत्र-पत्रिकाओं के अभाव के कारण राजस्थानी में निबन्ध का विकास नहीं हो पाया। प्रकाशित निबन्धों में अधिकांश विषय प्रधान हैं। इन निबन्धों में पीपलगांव निवासी श्री अनन्तलाल कोठारी का "समाजोन्नति का मूलमंत्र[4]" (सं० १९७६), धुनधारी का "बस म्हारो स्वराज होणो[5]" (सं० १९७३), सत्यवक्ता का "धनवानां की लक्ष्मी[6]" (सं० १९७५) प्रमुख हैं। इधर कुछ नये निबन्धकार भी देखने में आ रहे हैं इनके निबन्ध अभी तक प्रकाशित नहीं हो पाये पर उनके निबन्धों के संग्रह को देखने से पता चलता है कि निबन्ध शैली में प्रौढ़ता आने लगी है।

....

१—पंचराज : वर्ष ४, अंक १ पृ० ३६
२—राजस्थान भारती भाग ३ अंक १ पृ० १२६
३—वही भाग ३ अंक २ पृ० ७३
४—पंचराज : वर्ष ५, अंक १२ पृ० ३११
५—वही वर्ष २ अंक १२ पृ० ३७५
६—वही वर्ष ४ अंक ८९ पृ० २८४

श्री अगरचन्द नाहटा का "राजस्थानी साहित्य रा निर्माण और संरक्षण में जैन-विद्वानां री सेवा[1]" उल्लेखनीय है। ऐसे निबन्ध बहुत ही कम लिखे गये हैं। श्री कुं० नारायणसिंह के "कल्पना" "वैम" "कला" आदि भावात्मक शैली के तथा "राजस्थानी गीत" "डिंगल भाषा री निकाल" साहित्यिक शैली के विषय प्रधान लेख हैं। श्री गोवर्धन शर्मा (जोधपुर) के "वो कलाकार", "साहित ने कला", 'कविता कांई है", "कला एक परिचय" विवेचनात्मक तथा "कविराजा बांकीदास और डिंगल कविता" "महात्मा गांधी और ललित कला" विचार प्रधान निबन्धों के उदाहरण हैं।

उदाहरण १—

आपणो समाज रोगी छै। या बात कबूल करवाने कोई इन्कार नहीं करसी। रोगी भी इशो नहीं महान रोगी छै। महान रोगी तो छे ही परन्तु बींका साथ साथ छोटा छोटा रोग भी अनेक रया करे छे। वैद्यराज जठां तक रोगी का मुख्य रोग को पत्तो तथा निदान नहीं जाणसी बठां ताई बींकी दवा दारू कुछ भी काम देसी नहीं। बस इशी ही दशा आपणा समाज की छै।

(समाजोन्नति को मूल मंत्र सं० १६७६)

उदाहरण २—

"कल्पना एक भांति री हंसणी है भाव उण माथे सवारी किया करे है। ने इण हंसणी ने बुद्धि री छड़ी सूं घेरता रेवे है। आ बात जरूर है के केई बेला छड़ी ने थोड़ी काम में ले तो कोई घणी।

इयुं तो सुख दुख दोनों री कल्पना होया करै है ने वे सुख दुख में ईज पूरी हो जावे है। आप जे मन में कल्पना करो के म्हें आगले महीणे सूं हजार रुपयां री तिणखा पावण ढूक जावांला तो आपरो मन घणो प्रसन्न होवेला ने आपरै मूंडे माथे ई इणी भांत खुशी रा भाव आवेला।"

(कल्पना सं० २०१०)

गद्य काव्य

श्री ब्रजलाल वियाणी ने गद्य काव्य के कुछ प्रयास आज से कुछ

१—राजस्थानी भाग १, पृ० १७

पहले किये थे जिनका प्रकाशन "पंचराज" में हुआ था। "गुलाबकली[1]" (सं० १६७३) "मोगराकली[2]" (सं० १६७३) गद्य काव्य के अच्छे उदाहरण हैं। सर्व श्री चन्द्रसिंह, कन्हैयालाल सेठिया, विद्याधर शास्त्री ने भी सुन्दर गद्य काव्य लिखे हैं। शास्त्री जी का "नागर पान[3]" "आज भी छैल मेरो चावे नागर पान" को उसी प्रकार दुहरा रहा है। श्री कन्हैयालाल सेठिया के गद्य काव्यों का संग्रह "पांखड़ल्यां" के नाम से प्रकाशित होने वाला है।[4] इनका गद्य रोचक और प्रभावपूर्ण है।

कुछ उदाहरण — १

"बड़ी फजर को वखत। संधि प्रकाश हो गयो छै। रात को अंधेरो विना का चांदणा ने जगा दे रह्यो छै। तारा आपणा शीतल और मंद तेज ने सूरज नारायण का उष्ण और प्रखर तेज के सामने लोप कर रह्यो छै। निरभ्र आकाश में सूर्य भगवान का आगमन का प्रभाव शूं लाली छाई हुई छै। पूर्व दिशा लाल वस्त्र धारण करकर पती का आगमन की बाट जोय रही छै।

—वियाणी - सं० १६७३

२—सिंज्या होण आली ही। धोरां की रेत ठंडी होगी ही, आज मैं अकेलो ई टीबा के बीच बीच में खींप सणिया और बांसां की व्हार देखतो देखतो दूर ताणी चल्यो आयो। मैं जद जद टीबा में घूमण जाया करूं हूं जदे ई कोई न कोई ऊंचो सो टीबो ढूंढ अर बीं के ऊपर बैठ रे चारूं कानी की प्राकृतिक छटा ने देख्या करूं हूं[5]।

—नागर पान

३—"आसोज रो महीनो। नान्हीं सी क एक बदली ओसरगी। देखड़ काले रो कलमोजो गूज उठ्या। रिमझिम रिमझिम मेवलो बरसे। सतरै में ही अचाण चूको पूरो एक लहरो आयो अर बदली उड़गी। करड़ी तावड़ो निकल आई। खेत में निनाण करतो करसो बोल्यो आसोज्यां रा तप्ता

....

१—पंचराज : भाग २ अंक १

२—पंचराज : भाग २ अंक ४-५ पृ० १२६

३—राजस्थानी भाग ३ अंक १ पृ० ६४

४—कल्पना : वर्ष ४ अंक ३ पृ० २१७

५—राजस्थानी भाग ३, अंक १ पृ० ६४

तावड़ा आगा लोहा पिघल ग्या । मिनख री जबान में कठेई बलकोनी ।
—श्री कन्हैयालाल सेठिया

भाषण

अन्यान्य गद्य रचनाओं में ठाकुर रामसिंह और अगरचंद नाहटा के अभिभाषण उल्लेखनीय हैं । ठाकुर श्री रामसिंह बीकानेर के निवासी हैं इनका जन्म सं० १६५६ में तंवर राजपूत वंश में हुआ । ये हिन्दी और । संस्कृत के एम० ए० तथा संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी के विद्वान हैं । ये सं० २००१ में अखिल भारतीय राजस्थानी साहित्य सम्मेलन, दिनाजपुर के प्रथम अधिवेशन के सभापति निर्वाचित हुये, इसी पद से इनका राजस्थानी में दिया हुआ भाषण प्रकाशित हुआ ।

"ओ ख्याल बिलकुल ही झूठो है कै प्रान्तीय भाषा सूं राष्ट्रीयता री भावना नै नुकसाण पूगै । प्रान्तीय भासावां री उन्नती सूं राष्ट्रीयता नै नुकसाण पूगणों तो दूर रयो उलटी बा सबल और पुस्ट हुवै । इण बात रो परतक उदाहरण आज रूस रो है । रूस में रूसी राष्ट्रभाषा है पण प्रांतीय भासावां भी उठै फल फूल रही हैं । रूस रा नेता प्रान्तीय भासावां रो नास को करयो नी उलटी जकी भासावा नास हो रही वां रो उद्धार करयो[1] ।"

श्री अगरचन्द नाहटा राजस्थानी के प्रसिद्ध अन्वेषक एवं पोषक हैं । इनका जन्म सं० १६६७ में हुआ । पांचवीं कक्षा तक इनको पाठशाला की शिक्षा मिली । स० १६८४ वि० में श्री कृपाचन्द्र सूरि ने इनके यहां चातुर्मास किया । इनके उपदेश एवं प्रेरणा से इनका ध्यान राजस्थानी साहित्य की ओर गया । तभी से ये इस कार्य को बड़े अध्यवसाय एवं रुचि के साथ करते आ रहे हैं । इन दो दशाब्दियों में इन्होंने बड़े परिश्रम से हस्तलिखित तथा मुद्रित ग्रंथों के विशाल पुस्तकालय तथा कला भवन की स्थापना की । ये जैन साहित्य, प्राचीन साहित्य एवं राजस्थानी साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान हैं । खोज सम्बन्धी सैकड़ों ही निबन्ध आपने लिखे हैं जिनमें ५०० से ऊपर हिन्दी, गुजराती तथा राजस्थानी की विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं । राजस्थानी में लिखित आपके दो भाषण महत्वपूर्ण हैं —

१—बीकानेर साहित्य सम्मेलन के रतनगढ़ अधिवेशन में राजस्थानी

....

१—सभापति का भाषण पृ० २१ सं० २००१

परिषद् के सभापति पद से दिया हुआ भाषण।

२—उदयपुर के राजस्थान विश्वविद्या पीठ के तत्वावधान में सूर्यमल व्यास पीठ से दी हुई भाषण माला के तीन भाषण।

उदाहरण—

राजस्थानी जैन-साहित्य मरुभाषा में बणियो है। इसमें श्वेताम्बर सम्प्रदाय–खरतरगच्छीय विद्वानां रो साहित अधिक है। अर बैरो प्रभाव व्यक्तियां के विहार मारवाड़ में ई अधिक अने इयां भी मारवाड़ी भाषा राजस्थान री प्रसिद्ध साहित री भाषा है ई। कई दिगम्बर विद्वानां ढूंढाडी भाषा में भी साहित रो निर्माण कियो है क्यों के इयै सम्प्रदाय रो जोर जैपुर कोटे आदि री तरफ ई रयो है।[1]

पत्र-पत्रिकायें

इस काल में राजस्थानी की निम्नलिखित पत्र-पत्रिकायें प्रकाशित हुई—

पंचराज

पंचराज (मासिक) का प्रकाशन सं० १९७२ में हुआ। यह पत्र द्वैभाषिक था। हिन्दी और राजस्थानी दोनों की रचनायें इसमें छपती थीं। श्री कलंत्री ने नासिक से इसको प्रकाशित किया। समाज-सुधार, जातीय-उत्थान, राजस्थानी-भाषा-प्रचार आदि इसका उद्देश्य रहा। यह ६–७ वर्षों तक बड़ी सज-धज के साथ निकलता रहा। रंगीन चित्र एवं व्यंग चित्रों से यह जनता का ध्यान आकर्षित करता रहा। राजस्थानी के प्रचार कार्य में इस पत्र ने बहुत सहायता की।

मारवाड़ी हितकारक

यह पत्र बराड़ के धापण गांव से श्री छोटेलाल शुक्ल के सम्पादकत्व (सं० १९७५ के आसपास) में प्रकाशित होता रहा। इस पत्र के द्वारा राजस्थानी लेखकों का अच्छा मण्डल तैयार हो गया था जिसका उद्देश्य मारवाड़ी भाषा का प्रचार करना तथा पुस्तकें आदि निकालना था। इस मंडल के उत्साही सेठ श्री नारायण जी अग्रवाल थे।

१—शोध पत्रिका भाग ४ अंक ४ पृ० ९–१०

आशीर्वाद (पाक्षिक)

यह पाक्षिक श्री बालकृष्ण उपाध्याय के सम्पादन में ब्यावर से सं० १६६० में प्रकाशित हुआ। यह राष्ट्रीय पत्र था। हिन्दी और राजस्थानी इस पत्र की भाषा थीं।

जागती जोत (साप्ताहिक)

यह साप्ताहिक सं० २००४ में कलकत्ता (१४३ काटन स्ट्रीट) से प्रकाशित हुआ। श्री युगल इसके सम्पादक थे। समाज सुधार इसका प्रधान उद्देश्य था। बंद हो जाने पर जयपुर से इस नाम का दैनिक होकर यह पत्र निकला किन्तु अधिक नहीं चल सका।

मारवाड़ (साप्ताहिक)

यह पत्र सं० २००० में प्रकाश में आया। श्री वृद्धिचन्द बेड़वाला ने जोधपुर से इसका सम्पादन किया पर यह भी अधिक दिनों तक नहीं चल सका। श्री श्रीमंतकुमार के सम्पादकत्व में सं० २००४ में "मारवाड़ी" नाम का पत्र निकल कर थोड़े समय में ही बन्द हो गया।

ये सभी पत्र-पत्रिकायें राजस्थानियों की उदासीनता के कारण अधिक नहीं चल सकीं।

शोध-पत्र

इसी समय राजस्थानी के शोध सम्बन्धी पत्र भी प्रकाशित किये गये जिनका उद्देश्य राजस्थानी के प्राचीन साहित्य की शोध एवं नवीन साहित्य रचना को प्रोत्साहन देना था। इन पत्रों के नाम इस प्रकार हैं—

राजस्थान

यह पत्र राजस्थान रिसर्च सोसाइटी, कलकत्ता की ओर से प्रकाशित किया गया। इसके सम्पादक श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य थे। दो वर्ष चलने के उपरान्त यह पत्र बन्द हो गया।

राजस्थानी

राजस्थान के बन्द हो जाने पर श्री सूर्यकरण पारीक के प्रयत्नों से

उनके सम्पादकत्व में यह पत्र निकला किन्तु प्रथमांक के छपकर तैयार होने के बाद ही उनका देहावसान हो गया। उनके मित्रों ने इस अंक को वर्ष भर चलाया।

राजस्थानी (त्रैमासिक)

राजस्थान रिसर्च सोसाइटी कलकत्ता का त्रैमासिक मुखपत्र "राजस्थानी" श्री शम्भूदयाल सक्सेना एवं श्री अगरचन्द नाहटा के सम्पादकत्व में सं० १६६५ में प्रकाशित हुआ। इस पत्र के द्वारा राजस्थानी का प्राचीन साहित्य प्रकाश में आया तथा इसने कई नवीन साहित्यकारों को प्रोत्साहित किया।

मरुभारती

यह राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन की राजस्थानी साहित्य और संस्कृति पर चतुर्मासिक शोध पत्रिका है। सर्व श्री अगरचन्द नाहटा, झाबरमल शर्मा, कन्हैयालाल सहल एवं डा० सुधीन्द्र इसके सम्पादक थे।

राजस्थान - साहित्य

यह राजस्थान हिन्दी साहित्य सम्मेलन का पत्र था जो श्री जनार्दन नागर, उदयपुर के प्रयत्नों से निकला किन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण नहीं चल सका।

चारण

यह अखिल भारतीय चारण सम्मेलन का मुखपत्र था जिस को श्री ईसरदान आसिया और खेतसी मिश्रण ने सम्पादित किया। किन्तु अर्थाभाव के कारण यह कुछ समय चलकर बंद हो गया।

राजस्थान - भारती

यह सं० २००३ में सादूल राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट (बीकानेर) का मुख पत्र है। सर्व श्री डा० दशरथ शर्मा एम० ए० डी० लिट, अगरचन्द नाहटा तथा नरोत्तमदास स्वामी के सम्पादकत्व में यह पत्र प्रकाशित हुआ। राजस्थानी लोक साहित्य, प्राचीन साहित्य तथा आधुनिक साहित्य का प्रकाशन इस पत्र ने किया। राजस्थानी के अतिरिक्त हिन्दी-साहित्य के खोजपूर्ण निबन्ध इस पत्र में प्रकाशित होते हैं। आज भी यह पत्र हिन्दी तथा राजस्थानी की सेवा कर रहा है।

शोध-पत्रिका (त्रैमासिक)

यह त्रैमासिक पत्रिका साहित्य संस्थान, उदयपुर द्वारा प्रकाशित है। सर्व श्री डा० रघुबीरसिंह, अगरचंद नाहटा कन्हैयालाल सहल तथा डा० सुधीन्द्र ने इसका सम्पादन कार्य किया। हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की शोध इसका प्रधान लक्ष्य है। अपनी शोध सम्बन्धी सेवाओं के आधार पर आज यह अपना महत्व सिद्ध कर चुकी है।

मरुवाणी

६० रावत सारस्वत जयपुर से इसका प्रकाशन कर रहे हैं।

उपसंहार

इस प्रकार मध्यकाल में गद्य साहित्य का विकास जिस मार्ग पर हुआ आधुनिक काल में वह मार्ग बदल गया। समाज-सुधार तथा राष्ट्र जागरण के गीत राजस्थान में गाये जाने लगे। इस क्षेत्र में गद्य साहित्य ने भी बहुत सहायता दी। आरम्भिक नाटकों में समाज-सुधार की भावना का ही स्पन्दन प्रधानतया मिलता है। कहानियों की कथा वस्तु भी नया बाना पहिन कर आई। पूंजीवाद तथा सामंतवाद जो वर्तमान की ज्वलंत समस्यायें हैं राजस्थानी कहानियों में भी इनके विरुद्ध आन्दोलन की आवाज सुनाई देने लगी है। प्रगतिवाद या दलित वर्ग से सहानुभति रखने वाली गद्य रचनायें इस काल की अपूर्व देन हैं। रेखाचित्र एवं संस्मरण के प्रयोग नये होने पर भी उनमें प्रौढ़ता के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। गद्य काव्य में पद्य की सी मधुरता आने लगी है। इनको किसी भी भाषा के सम्मुख तुलना के लिये रखा जा सकता है। राजस्थानी में समालोचना - साहित्य का पूर्ण अभाव है। निबन्ध बहुत ही कम लिखे गये हैं जो लिखे गये हैं वे सब या तो विवरणात्मक हैं या वर्णनात्मक। गवेषणात्मक, भावात्मक लेखों का अभाव है। इस क्षेत्र में नवीन प्रयास किये जा रहे हैं।

नवयुवकों का ध्यान भी राजस्थानी-गद्य-साहित्य के प्रणयन की ओर जाने लगा है। अब उनकी भावनायें बदल रही हैं। राजस्थानी का उत्थान एवं उसमें रचना करने की प्रेरणा उनको मिल रही है। इससे आशा की जा सकती है कि निकट भविष्य में राजस्थानी-साहित्य अपनी उपयोगिता को प्रकट कर सकेगा।

इस गद्य के युग में जब कि हिन्दी-गद्य का विकास सर्वतोमुखी हो रहा है राजस्थानी के गद्य लेखक भी अपनी प्रतिभा के प्रयोग कर रहे हैं।

आधुनिक-काल की वर्तमान प्रगति को देखते हुये कह सकते हैं कि राजस्थानी-गद्य-साहित्य का सर्वतोमुखी विकास बहुत शीघ्र ही हो सकेगा। उसकी उपयोगिता एवं महत्ता देखने के लिये अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। आज से ५०-६० वर्ष पूर्व जो गद्य-रचना के प्रयास हुए थे उनसे आज गद्य साहित्य का स्तर बहुत ही ऊपर उठ चुका है।



परिशिष्ट (क)

राजस्थानी गद्य के उदाहरण

सं० १३३० (आराधना)

सात नरक तणा नारकि, दशविध भवनपति, अष्टविध व्यंतर, पंचविध जोइषी द्वै विध वैमानिक देवा किं बहुना । दृष्ट अदृष्ट, ज्ञात अज्ञात, श्रुत अश्रुत, स्वजन परजन, मित्र शत्रु, प्रत्यक्षि परोक्षि जे केइ जीव चतुराली लक्ष योनि ऊपना चतुर्गति की संसारि भमंता मई हुमिया वंचिया सीरीविया हसिया निंदिया किलामिया वामिया पाडिया चूकिया भवि भवांतरि भवसति भवसहस्र भवलक्षि भवकोटि मनि वचनि काइं तीह सर्वेहइं मिच्छामि दुक्कडं ।

सं० १३३६ (बालशिक्षा)

लिंगु ३ पुल्लिंगु स्त्रीलिंगु, नपुंसकलिंगु, भलु पुल्लिंग, भली स्त्री लिंगु, भलुं नपुंसकलिंगु—

(स्यादि प्रक्रममा)

सि एक बचनु, औ द्विवचनु, जस बहुवचनु

(कारक प्रक्रममां)

अथ प्रत्येक विभक्ति प्राप्ति माइ-करई लियई दियई इत्यादौ वर्तमाना——

सं० १३४० (अतिचार)

बारि भेदि तपु । छहि भेदि बाह्य अणसण इत्यादि, उपवास आंबिल नीविय एकासणु पुरिमड्ड ब्यासणं यथा शक्ति तपु, तथा ऊनोदरितपु वृत्तिसंखेवु । रस त्यागु कायकिलेसु संलेखना कीधी नहि तथा प्रत्याख्यान एकासणां बिपुरिमड्ड साढपोरिसि पोरिसभंगु अतीचारु नीविय आंबलि उपवासि कीधइ विरासइं सचित्त पानीउ पीधउ हुयइ पक्ष दिवसमांहि ।

सं० १३५८ (व्याख्यानम्)

मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ।।८।।

ईणि संसारि दधि चंदन दूर्वादिक मंगलीक भणियइ । तीह मंगलीक सर्वही-माहि प्रथमु मंगलु एहु । ईणि कारणि शुभ कार्य आदि पहिलउं सुमरेवउ, जिव ति कार्य एह तणइं प्रभावइ वृद्धिमंता हुयइं । यउ नमस्कारु अतीत अनागत वर्तमान चउवीसी आदि जिनोक्त साहु सु तुम्हे विसेषइ हिवडा तणइ प्रस्तावि अर्थयुक्तु ध्येयु ध्यातव्यु गुणेवउ पढेवउ ।

सं० १३५६ (सर्वतीर्थनमस्कारस्तवन)

अथ मनुष्यलोकि नंदिसर वरि दीपि बावन्न च्यारि कुण्डलवलि, च्यारि रुचकि वलि, च्यारि मनुष्योत्तरि पर्वति, च्यारि इक्षार पर्वेनि, पंच्यासी पाँच मेरे, वीस गजदत पर्वति, दस कुर पर्वति, त्रीस सेलसिहरे, सरिसउ वैताढ्य पर्वत, एवं च्यारि सइ त्रिसट्ठि जिणालइ पडिमं, एवं आठ कोडि छप्पन्न लाख सत्ताणवइ सहस च्यारि सइ छियासिया तियलुक्के शास्वतानि महा-मंदिर त्रिकाल तीह नमस्कारु करउ ।।

म० १३६६ (अतिचार)

हिव दुक्कतगरिहा करउ । जु अणादि संसार मांहि हींडतइ हूतइ ईणि जीवि मिथ्यात्वु प्रवर्तावउ । कुतिर्थु संस्थापिउ, कुमार्ग प्ररूपिउ, सन्मार्ग अवलापिउ । हिवु ऊपाजिं मेल्हि सरीरु कुटुम्बु जु पापि प्रवर्तिउ, जि अधिगरण हलऊ खल घरट घरटी खांडा कटारी अरहट्ट पावटा कुप तलाव कीधां, तीर्थजात्रा, रथजात्रा कीधी पुस्तक लिखाव्यां, साधर्मिकवछल्ल कीधां तप नीयम देव वंदन वांदणाइ अनेराइ धर्मानुष्टान तणइ विषइ जु ऊजमु कीधउ...........

चौदहवीं शताब्दी (विक्रमी) का आरम्भ

(धनपाल कथा)

उज्जयनी नामि नगरी । तहिठे भौजदेवु राजा । तीयहिं-तणइ पंचह सयइ पंडितह मांहि मुख्यु धनपाल नामि पंडितु । तीयहिं तणइ घरि अन्यदा कदाचित साधु विहरण निमित्तु पइठा । पंडितहणी भार्या श्रीजा दिवसहणी दधि लेउ ऊठी । बीजनुं काइं त्रिणि प्रस्तावि अतिया विहरावण सारीखेऊ न हूंतउ अतिया भणियवं । केता दिवसह णी दधि । तिणि भाहणी भणियवं

भीजा दिवसइ थी वृधि । अह्लसुनिहि भणियइं बीजा दिवसइ थी वृधि न उपगरी ।

चौदहवीं शताब्दी (तत्त्वविचार प्रकरण)

जीव किसा होंहि जिन्हु चेतना संज्ञा जाइ हुइ ति जीव भणियहिं । ते पुणु अनेक विधि हुंहि । इत्थे पुणु पंच विधु अधिकारु - ऐकेन्द्रिय बेइंद्रिय, तिइंद्रिय चउरिन्द्रिय पंचेन्द्रिय जि ऐकेंद्रिय ति दुविधा सूक्ष्म, बादर । बादर ति मोकला । बे इंद्रियादिक बादर । संकल्प ज मनि वचनि काहइ न हणउ न हणावउ आरंभु सापराधु मौकलउ । एउ पहिलउ अणुव्रतु ॥२॥

सं० १४११ (षडावश्यक बालावबोध)

वसंतपुर नामि नगरु । जिणदासु नामि श्रावकु । तेह तणउ महेसरदत्त नामि मित्रु । जिणदासु आगास गामिणी विद्या तणइ बलि नंदीश्वरि द्वीपि शाश्वत चैत्य वांदिवा गयउ । आविउ हूंतउ महेसरदत्ति भणिउ मित्र ताहरइ देहि अपूर्व सुगन्धु गंधाइ । तिणि नंदीश्वर-यात्रा-वृत्तान्तु कहिउ । तउ महेसरदत्तु भणइ मूरहइं पुणि आकाश गामिनी विद्या आपि तउ प्रतिनिबंधि कीधइ हूंतइ जिणदासि महेसरदत्त रहइं विद्या दीधी ।

सं० १४४६ (गणितसार)

किसा जु परमेश्वरु कैलाश शिषरु मंगनु, पारवती हृदय रमणु, विश्वनाथु । जिणं विश्व नीपजाविउं तसु नमस्कारु करीउ । बालावबोधनार्थं बाल भणीहि अज्ञान तीह अवबोध आणिवा तणउ अर्थि, श्रत्मीय यशोवृद्धयर्थं श्री धराचार्यु गणितु प्रकटीकृतु ।

सं० १४५० (मुग्धावबोध औक्तिक)

जेहनइ कारणि क्रिया कर्त्ता कर्म्म हुइ । जनइ जेह रहइ, दान दीजइ, कोप कीजइ, तिहां संप्रदानि चतुर्थी । विवेकिउ मोक्षनइं कारणि तपइ । तपइ इसी क्रिया इत्यादि । क्रिया कर्त्ता कर्म्म पूर्ववत् कवणनइं कारणि मोक्षनइं । तिहां तादर्थ्ये चतुर्थी ।

सं० १४६६ (श्रावक व्रतादि अतिचार)

पढ़मइ गुणवइ विनय वेयावच्चि देवपूजा सामायिक पोषधि दान शील तप भावनादिकि धर्मकृत्य मन वचन काय तणइ छतइ बलि छतइ वीर्यि

गोपविउ। समासण ग्रीधा नहीं। पांवणाना आवर्ते विधिइं साचविया नहीं। बइठां पडिक्कमणउं कीधउं। वीर्याचार अनेरु ज को अतिचार।

सं० १४७५ (गणित पंचविंशतिका बालावबोध)

मकर संक्रांति थकी घस्र जाणि दिन एकत्र करी त्रिगुणा कीजइं। पछइं पनरसइत्रीसां मांहि घातीइ अनइ साठिं भाग दीजइ दिनमान आवइ।

सं० १४७५ (अचलदास खीची री वचनिका)

कुल बंस वधारै, साथ सुधारै, तीन पख तारै।
महाराज, सतयां पर मोह कीजै, आपणी कर लीजै।
महाराजा गढ़ रिणथंभरि अलावदीन पातसाह अड्या,
राव हंमीर बारह बरस विग्रह लड्या।
पातसाह परदल खूटा, दिमान तूटा, गढ़ टूटा।
बोलियौ वगड़ी सूर साह,
दूसरो विजैराव,
धंणा दलां दियण घाव।
वह तो आपणी त्यागै, ओडिया तन आंणी आगै।
जुध जुड़ै कुलरा आगै, राव ताल्हण अरथ लागै॥

सं० १४७८ (पृथ्वी चरित्र)

तिहां छइ नगरी अयोध्या। किसी ते नगरी धनकनक समृद्ध, पृथ्वी पीठि प्रसिद्ध। अत्यन्त रमणीय, सकललोक स्पृहणीय। पृथ्वी रूपिणी कामिनी रहइ तिलकायमान, सर्व सौन्दर्य निधान। लक्ष्मी लीला निवास, सरस्वती तणउ आवास। अतुल देव कुलि मंडित, परचक्रि अखंडित। सदा सुठाकुरि पालित, रमणीय राजमार्गि शोभित, उत्तंग प्राकारवेष्ठित। सदा आश्चर्य तणउ निलय, वसुधा वनितावलय। निरुपम नागरिक तणउं ठाम, मनोभिराम। जनित दुर्जन क्षोभ, सज्जनोत्पादित शोभ। पुरुष रत्नोत्पत्ति रोहिणाचल, कुल वधू कल्पलता रत्नाचल।

१४८२ (जैन-गुर्वावली)

चारित्र लक्ष्मी कंठ कंदलहार, निरुपम ज्ञान भण्डार
सकल सूरशिरोमणि, श्री तपोगच्छ नभोमणि

कुवाचित मतंगज सीह, निर्मल क्रियावंत माहि लीह
चउद विद्या आगर, गंभीरिम तर्जित सागर
अज्ञान तिमिर निराकरण सूर, कषाय दावानल वारिपूर
निजदेशना विबोधितानेक देश जन, निजगुण लक्ष्मीप्रणीत सज्जन।
नवकल्प विहार, बइतालीस दोष वर्जित आहार
श्री जिन शासन श्रृंगार, युग प्रधानावतार—

सं० १४८५ (उपदेशमाला बालावबोध)

पाडलीपुरि धन सार्थवहनइं घरि रही महासतीनइं मुखि श्री वयरस्वामिना गुण सांभली सार्थवाहनी बेटी इसी प्रतिज्ञा करइं आंणइं भवि श्री वयरस्वामि टाली बीजनउं पाणिग्रहण न करउं इसी एक बार श्री वयरस्वामी तीणइं नगरि पाउधारिया। धन सार्थवाह अनेक सुवर्ण रत्ननी कोडि सहित आपणी कन्या लेई श्री वयरस्वामि कन्हइ आविउ। भगवंति ते सार्थवाह बूझविउ। तेहनी बेटी बूझवी दीक्षा लेवरावी, लगारइ मनि लोभ नाणिउं।

सं० १४६७ (संग्रहणी बालावबोध)

असुर कुमार माहीं विइन्द्र केहा एक चमरेन्द्र बीजू वलेन्द्र, नागकुमार माहीं वि इंद्र केहा धरणेन्द्र बीजू भूतानन्द। सुवर्णकुमार माहीं विइन्द्र केहा वेणु देव १ वेणुदाली २। विद्युतकुमार माहीं विइन्द्र केहा हरिकन्त १ हरिस्सह २।

पन्द्रहवीं शताब्दी (उत्तरार्द्ध)

चाणक्य ब्राह्मण चन्द्रगुप्त क्षत्रीपुत्र राज्य योग्य भणी संगठियो छइं अनइं एक पर्वतक राजा मित्र कीधयो छइं। तेहनइं बलिं चाणक्यं कटक करी पाडलिपुरि आवी नंदराय काढी राज्य लीधउं। पर्वतक अर्ध राज्यनु लेणहार भणी एक नंदरायनी बेटी तरुणी करी विषकन्या जांणी नइं परणाविओ, चन्द्रगुप्त विसना उपचार करतओ वारिओ। तिम अनेराइं आपणां काज सरिया पूंठिं मित्र हुइं अनर्थ करइं।

—उपदेशमाला बालावबोध

वेणातट नगरि मूलदेव राजा। एक वार लोके विनविउ-स्वामी को एक चोर नगर मूसइ छइ, पुण चोर जाणीइ नहीं। राजइं कहिउं-थोडा दिहाडा मांहिं चोर प्रगटि करिसु तम्हे असमाधि न करिसउ। पछइ राजाइं तलार तेडी हाकिउं। तलार कहइ मइं अनेक उपाय कीधा पुण ते चोर धराइ

नहीं। पछइ राजा आपणपइं रात्रिइं नीलउ पउलउ पहिरि नगर बाहरि जे जे चोर ने स्थान के फिरने, चार जोवउ एकइं स्थान कि जइ सूतउ। तेतलइं पांकिक चोरइं दीठउ अजाणिउ पूछिउ-कउण तउं, तीणि कहिउं-हुं कापडी भीषारी। पंकिक चोर कहिउं आवि तउं मूं साथिइं जिम तुहइं लक्ष्मीवंत करउं।

—योगशास्त्र बालावबोध

सं० १५०१ (षडावश्यक बालावबोध)

वासंति नगरी, कीर्तिपाल राजा, भीम बेटउ, राजा नइ मित्र सिंघ श्रेष्टि। एक वार दूत एक आवी राजा हइं वीनवइं। स्वामी नागपुरि नगरि नागचन्द्र राजा तणउ गुणमाला कन्या। ते ताहरा पुत्रहइं। देव वाछइं प्रसाद करउ। पुत्र मोकलउ। राजा सिंघश्रेष्टि नइ कहिउं। जाउ कुमारनउ विवाहमहोत्सव करि आवउ। श्रेष्टि कहइ नागपुर इहां थकउ सो जोअण आम्केड़उ हुइं मझ रइ तउ सौ जोअण ६पहरउ जावा नीम छइं। तेइ भणी नहीं जाउं। राजा कुपिउ कहइ जउ नहि जांअ तउ तुंहइइं ऊंटे घाली जोअण सहस परइं मूकाविसु।

सं० १५२५ (शीलोपदेशमाला)

जाणै बूझै यथोक्त बीतरागनो भाख्यो मार्ग ने किसौ एकलो जांणि ज रहे अनराइ जीव आगलि धर्म्म नो तत्व कहे उपदिसें अनें बारे भावना आपणें चित्त भावे अने भव संसार ना जे अनेक जरा मरण जन्मादिक भय छै तेह थका घणू बीहैं तिणे करी कायर छें पहुवा हुँती शील व्रत ने अंगीकार करी पाली नसकै ये अक्षरार्थ कह्यो।

सं० १५३० (षडावश्यक बालावबोध)

बीजइं अणुव्रति परि० थूल मोटो अलीक वचन जिणइं करी अपकीर्ति थाइं ते पांचे प्रकारे हुंइ। पहिलो कन्यालीक, जे निर्दोस कन्या सदोस काहे अथवा सदोस निर्दोस कहइं ते कन्यालीक एतलें द्विपद विषइय्यो कुडो जाणवो ।११॥ बीजो गवालीक-दोभी गायनइं चतुष्पद विषइय्यौ कूडो सर्व एह माहि आवइं। त्रीजो भूम्यलीक- पारकी भुइं आपणी कहइं। द्रव्यादिक विषइय्यो कूडो एह माहिं आवइ।

सं० १५३५ (वाग्भटालंकार बालावबोध)

कवीस्वर काव्य करइ। कीर्तिनइ अर्थि। साधु दोष रहित शोभन छइं

जे शब्द नइ अर्थ तेह तणु संदर्भ रचना विशेष छइं। गुण सौंदर्यादिक अलंकार उपमादिक तेहि भूषित अलंकृत छइं। स्फुट प्रकट छइ जे रीति पांचाल्यादिक अनइ रस शृंगारादिक तेहि उपेत संयुक्त छइ।

सं० १५४८ (जिनसमुद्रसूरि की वचनिका)

मोटइ साहस कीधउ, बहुउ पवाडउ पसीधउ, बंदी छोडावी तउ, इग्यारस तणउ पारणउ कीधउ। किन दातार रिण झूझार बाचा अविचल, कोटि कटक धन सबल। धूहड़िया माल जगमाल वीरम चउंडा रिणमल कुलमंडण, श्री योधराणां नंदण +++। प्रतापी प्रचण्ड। आण अखंड। राजाधिराज, सारइ सर्व काज।

सं० १५६६ (गौतमपृच्छा बालावबोध)

स्वस्तिमती नामि नगरी तिहां धनवंतराज मानीतउ पद्मश्रेष्ठि वसइ। ते श्रेष्ठि सत्यवादी निर्म्माय पुन्यवंत, विनयवंत, न्यायवंत छइ। तेहनइ पद्मनी नाम भार्या रूपवंत पुणि कर्म्मनइ योगि काहलउ स्वर हूअउ। ते स्त्री कपट कूड़ घणउ करइ। हिवइ ते स्त्री नइ मुख अशुभ कर्म लगि अनेक रोग ऊपना। श्रेष्ठि घणा उपचार करावइ गुण न ऊपजइ। एकदा तीणि स्त्री माया करतीइं पद्मश्रेष्ठि नइं आग्रह कह्येउ तिम करो जिम नवी स्त्री नउ पाणि ग्रहण करउ।

सोलहवीं शताब्दी (उत्तरार्द्ध)

इसी परि श्री कर्ण दूदा आगलि गाई हरखित थाई
रूड़ी बुद्धि उपाइ कहवा लागउ खाई, अम्हे ताहरा ज खाई,
राखि अम्हां-सउ सगाई।
अचरज उरही आपि, रिस-वर म सतापि,
अम्ह कइ मोटा करि थापि, सकल श्रावक नी आरित कांपि।

—शान्तिसागर सूरि की वचनिका

हिव तेहना नाम कहइ छइं। ते अनुक्रमइ जाणिवा। नारी समान पुरुष नइं अनेरउ अरि न थी इणि कारिणी नारि कहीयइं। नाना प्रकार कर्मइं करी पुरुष नइं मोहइं तिणि कारणि महिला कहियइं। अथवा महान्तकालनी उपजावण हार तिणि कारणि महिला कहीयइं। पुरुष नइं मत्त करइं मद चढ़वइं तिणि कारिणी प्रमदा कहियइं। पुरुष नइं हाव-

मानाविकार करी मोहइ तिणि कारणि रामा कहियइं। पुरुष नइं अंग ऊपरि अनुरक्त करइं तिणि कारणि अंगना कहियइं।

—तंदुलवैयालीय

सं० १६०६ (साधुप्रतिक्रमण बालावबोध)

एवं गुरुप्रति तेत्रीस आसातना संबन्धी जे अतिचार लागू ते पडिक्कमुं। इम गुरु नी दृष्टि पालठी बांधइ। अट्टहास करई। गुरु पाहीं सखर वस्त्र वावरइ। अण पूंछि संथारइ। पडिक्कमणुं करता गुर पहिलूं काउसग्ग पारइ। आंगुलीइं कटका मोड़इ। आगलि पाछलि पडिक्कमइ। अवर्ण वाद बोलइ। रीस करइ। मुखराग भेदइ। इंगितादिक न जाणइं। रीस ऊपनइं पगे लागी न खमावइ। साहमूं न जाइ। ऊभू न थाइ। लाज भय न आणइं अनेराइ दोस तेत्रीस आसातना माहिं अन्तर्भवइं।

सं० १६३०

राठौड़ां री बंसावली (सीहै जी सूं कल्याणमल जी ताईं)

पछै वीरम जी री बहर भटियाणी चूंवड़ै जी नू मेल्हि ने सती हुई। चांवड़ै जी नू धरती नू सांपि, ने ताहरा चारण अल्हौ लै नै काला ऊ गयो, नै गोगादेजी थल देवराज कन्हा रहा। पछै गोगादे जी मोटा हुवा। ताहरा जोइयां रौ हेरो कराडियौ ने जोइयो धीर दे पूगल भाटी राणकदे रै परणीज गयौ हुतौ ने वांसिया गोगादेजी साथ करि नै जोइये दलै उपरि गया, सु दलौ सूवतो तेथ न रहै बीजी ठौड़ रहौ। पछै उवा ढाल गोगादे जी गया ताहरा घाड वाहौ सु दलै रौ जाभाई दीकरी सुता हुता तांह नू वाहौ सु वाहण रा ऊधण बांस मांचौ बाढि ने बैठ मारिया,

सं० १६३३ (कुतुबदीन साहजादे री वात)

पातसाह कूं शिकार सूं बोत प्यार, शिकार बिना रहे न एक लिगार, पातसाह बूढा भया। सिकार खेलने से रहया तब शिकार का हुनर कीया मीर सिकार कूं बुलाय लिया। बांस की नली लीत्री, एक एक बिसत लांबी कीवी। तिसमें एक एक मकड़ी रखावे, चांदणी की चादर बिछावे। उस बिछायत पर सखर नखावै। तिस पर मक्खी दौड़ आवे तब उस मक्खी पर मकड़ी छोडावै। मक्खियों का सिकार करवावै, पातसाह देख देख राजी रहे, सिकार की तम्हां न रहे।

सं० १६८३ (षडावश्यक बालावबोध)

वली दुर्विनीत पुत्र शिष्य शिक्षा निमित्त क्रोध। सबल उपसर्ग वार्ता पछी अंगीकार कीधा जे व्रत लेने निर्वाह निमित्त मानूं। व्रत लेवा वांछतो थको मां बाप प्रमुख कुटुम्ब पासी आदेश लेवा भणि कहइ। मइं आज रात्रि सुपना दीठो पणि कहइ अदीठो जे माहरउ आउखउ अल्प छइ। ते भणी हूं दीक्षा लेईसि। ये माया तीन।

सं० १६८५ (कडूआ मत पट्टावली)

परमगुणनिधेय एकोन पंचाशत्तम पदधारिणे श्री जिनचन्द्रसूरये नमः। कडुआमती नाग गच्छनी वार्ता पेठी बद्ध यथा श्रुत लिखीइ छई। तबोलाइ ग्रामे नागर ज्ञातीय वृद्ध शाषायां महं श्री ५ कान्हजी भार्या बाई कनकादे सं० १४६५ वर्षे पुत्र प्रसूतः नामतः महं कडूआ बाल्यतः प्रज्ञवान् स्तोक दिने भाई प्रमुख सूत्रां भणी चतुरपणइ आठमावर्ष थी हरिहर ना पद गंध करइ केत-लइकि दिनान्तर पल्लविक श्राद्ध मिल्यो।

सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध

ताहरां कुंवर श्री दलपतसिंघ जी री दृष्टि पडियो, दलपत कुंवर देखि अर राव दुरगै नूं कहियो जु औकटारौ थाहे मानसिंघ नूं देखो का सूं झालौ। ताहरां राव दुरगै हाथ झालियौ।

—दलपत विलास

सीहो जी षेड़ गाव आव नै रहीया। पछै श्री द्वारिका जी री जात नु हालीया। बीच पाटंण सोलंकी मूलराज री रजवार, उठै डेरा कीया सु मूलराज चावौड़ां रो दोही तो चावोड़ा रे भाटी लाखे फुलाणी सुं वैर सु लाखे बेटे करण मै निबला घात दीया तै सुं राजरो धणी मूलराज हुवो। सु मूलराज सीहै जी सूं मिलियो कहो मारे लाखे सुं वैर छै, थें मारी मदद करो............

—बीकानेर रे राठौड़ां री बात तथा बंसावली

सं० १७१७ (वचनिका राठौड़ रतनसिंहजी महेसदासौत री)

तिण वेला पातार कुंआर राजा रतन मूंछां
कर आघात बोले।
वरुआर तोले।

आगे लंका कुरखेत महाभारथ हुआ
देव दाणव लड़ि मूआ।
वासिंगुम कथा रही।
वेद ब्यास वालमीक कही।
सु तीसरो महाभारथ आगम कहता गजेणि खेत
अगनि सोर गाजसी।
पवन वाजसी॥
गजबंध छत्रबंध गजराज गुड़सी।
हिन्दू असुराइण लड़सी॥
सिका दौ बात साकाबंध आइ सिरैचढ़ी
दुइराह पातिसाहां री फोजां अड़ी
दिली रा भर भारत भुजे दिआ
कम धज सुदै किआ
वेद सासत्र बताया सु अवसाण आया।
उजेणि खेत धारा तीरथ धणी रौ काम खित्री रौ धरम साचवी जै
लोहां रा बोह सेलां रा धमंका लीजै।
खांडांरी खाटखड़ि भारभड़ि वरछाहणि खेलीजै
पातसाहां री गजघड़ां भड़ा औभड़ां मारि ठेलीजै।

सं० १७८१ (बेगड़गच्छ पट्टावली)

........तत्पट्टे श्री जिनपद्मसूरि सं० १३६० वर्ष श्री देरावरै पट्टाभिषेक बाला धवल सरस्वती बरलब्ध महाप्रधान थया।

तत्पट्टे श्री जिनलब्धिसूरि सं० १४०० वर्ष आसाढ़ वदि ६ दिनै पट्टाभिषेक थया। तत्पट्टे श्री जिनचन्दसूरि सं० १४०६ वर्ष माह सुदी १० दिनै पट्टाभिषेक थया।

सं० १७८५ (कर्मग्रंथ बालावबोध)

केवली केवल समुद्घात करे तिहां बीजे १ छट्ठे सातवें ए तीन समयें। उदारिक मिश्र योगी हुइ तेहने योग्य प्रत्यइंउं एक सातावेदनीय प्रकृति बंध हुइ मिथ्यात्वें १ अविरति २ कषायने अभावे शेष प्रकृति न बंधाइ। न ओदारिक मिश्र कर्मयोगी नी परे कार्मण योगी नो बंध स्वामित्व बने।

अठारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध

बूंदी सहर भाखर भाखर लगती बसे छै। रावला पर भाखर रे आधो फरै छै। पिण माहे पांणी मामूर नहीं। सहर री आथो कीजे भाखर वलारो सहर लागतो काउ घणा बलारे भाखर में पाणी घणो। सहर माहे पाखती पाणी घणो। बड़ो तलाव सूरसागर तिण री मोरी छूटै छै। तिण सूं बाग बाड़ी घणा पीवै। बागे आंबा फूलाद चंपा घणा। सहर री बस्ती उनमान घर –घर ५०० बांखीयांरा, घर १००० बांमण बिणजारां रा घर १००० पांछ भाई बाही डागरा रा। राव भावसिंह नुं हमार जागीर मैं इवरा परगना छै तिखांरा गांव ३१६।

सं० १८४४ (बीकानेर री ख्यात)

महाराजा सुजाणसिंघ जी सूं महाराजा गजसिंघ जी तांई

मांहरी दांता री सु बुध थी नै बालक था नै भांग आरोगतां तरी तरंगा उठती क्युं सोच विचार कियो नहीं तीण सुं सं० १७८१ मिति आसाढ़ सुध १३ रात रा सुतां नै छिद्र पाय चूक कियो सु हुणहार रा कारण पुठै बड़ो केहरवाणो हुवो........

सं० १८६२ (नागौरी लुंकामच्छीय पट्टावली)

तत्पट्टे श्री शिवचंदसूरि सं० १८७६ हुवा तिके शिथिलाचारी स्थान पकड़ी ने वैसीरह्या। साधु रा व्यवहार मात्र सुं रहित हुवा। सूत्र सिद्धान्त बांचे नहीं, रास भास बांचण मे लागा। ते एकदा अकस्मात शूल रोगे करी मृत्यु पाम्यो। तिण माहे देवचन्दजी तो व्यसनी भांग अमल जरदो खावै। ....अर माणचन्द जी जतीरो आचार व्यवहार राखे।

सं० १९०६ (दयालदास की ख्यात)

पछै कमर बांधीज रावत जी बहीर हुवा। सू राजासर आया। अरु रावजी श्री जैतसी जी काम आया तिण समै सिरदार सरा आपरसां ठिकाणां गया परा था। सु जिका एक नूं किलनदास जी निसरबट करी। तिण मांवे लोक हजार सूम मेलो हुवो। पीछे जोईये चाचे भीनग रे नूं सिहायसुं बुलायो। तद चाचो फौज हजार पाम सामल हुवो। फौज हजार दस हुई। पीछे जोधपुर रा थाणा ऊपर चलाया। सू पहली बडाणकरण सर बडौ थाणो

हो तठे आया नै अठै बडो झगड़ो हुवो। मारवाड़ रा राजपूत तीन सौ काम आया। अरु छाईस रजपूत कांधलौत काम आया। अरु किता एक मारवाड़ रा फौज नीसरिया। नै रावजी री फतै हुई। अरु आण फेरी। घोड़ा दो सौ ऊंट सौ मारवाड़ां रा लूट में आया।

सं० १६१० (उदयपुर री ख्यात)

रावल श्री वैरसिंघ, राणी हाड़ी पुरवाई रा पुत्र वास चत्रकोट, सैन अश्व ७०००, हस्ती १४००, पदादित्त ५०००, वजत्र ३००, राजा बड़ा परवत्र, सेवा करत समत्र १०२६ राज बैठो, मारवाड़रा धणी राव महाजल थी युध जीत पेत्र संभर राजलोकराणी १६, खवास २. पुत्र ११, आयु वर्ष ३० मा० ६

उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध

प्रथम रुकमनी जी तिणरो पुत्र प्रदुमन साक्षात श्री किसन सारिखौ। तिण मै दस हजार हाथियां रो बल। तिणरै पुत्र वज्र हुवौ। सो दुरवासा जी रा सराप सूं मुसल थी बचियो। वज्र रै पुत्र प्रतिबाहु। प्रतिबाहु रै पुत्र सुबाहु। उणरै रुकमसेन.। तिण रै श्रुतसेन हुवौ तिणरै पुत्र घणा हुवा।

(सं० १६२१)

जोधपुर रा महाराजा मानसिंघजी री तथा तखतसिंह जी री ख्यात

अर भींवनाथ जी उदेमंरवालां री राज रै काम में आग्या हालै सो सरब ओधा खिजमतां त्था जवती वाहाली त्था केद कर बिगाड़णा भींवनाथ जी रा बेटा लिखमीनाथ जी माहामंदर रा जिणां रै बाप बेटां रै आपस में मेल नहीं............

सं० १६२७ (देस दर्पण)

फेर खलीतो तारीख १३ अक्टूबर सन् मजकूर कपतान फीरंच साहब इष्टंट साहब अजंट अजमेर रो श्री दरबार सामो आयो तै मै लीध्यो। लफटंट गवरनर जनरल कलारक साहब बहादुर सहसें होय बावलपुर तक तसरीफ ले जावेंगे सो मोतमद हुसीयार वा लयाकत वा कुल इक्त्यार सरसे नवाब साहब ममदु की खीदमत में जाय देने।

सं० १६६३ (बुढापा की सगाई)

वाह भाई - म्हे लोग विद्वान हो जाता तो फेर म्हासूं ओ इसावी धंधो नहीं होतो और चटकमटक मांहे पड़कर बापदादा की सब कमाई खो बैठता, नहीं तो अठीने उठीने सरकारी नौकरी खोजता फिरता। अंगरेजी सीखणे सूं शरीर नै खराबो कर आंख्या गमा लेता। बूट पटलोन टोपी लगाकर आंख्यां माहें चस्मो घाल कर मूंडा मांहे चिरुट लेकर साहेब बण जाता और जलदी धर्म भ्रष्ट होकर भिखारी बण जाता।

सं० १६७२ (कनकसुन्दर)

दोपहर दिन को बखत चार्‌याकानी लू चाल रही छै। हवा का जोर सूं बालू अठी की उठी ने उड़ उड़ कर बीकां नवा नवा टीवा हो रह्‌या छै और भींजण भी रह्‌या छै। मुंह ऊंचो कर सामने चालणों मुस्कल छे। लू कपड़ा मांहे बढ कर सारा सरीर ने सिकताप कर रही छै। धूप इसी जोर की पड़ रही छै के जमीं ऊपर पगदेणो मुस्कल छै। रास्ता मांहे दूर दूर कठे ही झाड़ को नांव नहीं। बालू उड़कर जगां जगां नवा टीबा होणे सूं रस्ता को ठिकाणो नहीं। आदमी तो दूर रस्ता मांहे कोई जीव जिनावर को भी दरसण नहीं।

सं० १६७३ (मारवाड़ी मोसर और सगाई जंजाल)

फतरा री आई सांची। भाऊ साहब। आप भी व्यां का फंदा मांहे आग्या दिखो जो। अजो! अ तो चुप लोगां ने बोलवां की बातां। खुद सीख्योड़ा का घरां में देखो सब मारवाड़ी फ्याशन का व्याव हुयोड़ा छै। व्यां ने पूछो तो दादाजी यूं कर दीनो आया जी व्यूं कर दीनो इस्तरे का सतरा अडंगा लगाकर आप खुद न्यारा होणा चावे, पण दूजा ने नांव रखवाने कमर बांध कर सबके अगाड़ी तैयार : भाऊ साहब थें तो लिख देवो के घरघराणों कन्या सब सोला आना छै। आप दूजो विचार जानना नहीं सगाई कर लेओ।

सं० १६७५ (सीता हरण)

रे नीच रावण ! क्यूं बिना काम ही मन में आवे सो बक रह्यो छै। गरमाई अग्नी ने त्याग देशी, शीतलता जल ने छोड़ देशी, क्षमा तपस्वियां ने परित्याग देशी पण हे रावण आ जनक कन्या राम ने कदापि नहीं

छोड़सी । तने सारा संसार को राज मिल जासी, स्वर्ग में भी तेरी दुहाई फिर जासी और पाताल में भी तेरी ही जय जयकार हो जासी पण इण रामदरबार और रामपद में सीता जानकी पर तेरो अधिकार कदे भी नहीं होसी ।

सं० १९७६ (समाजोन्नति को मूलमंत्र)

आपणो समाज रोगी छै । या बात कबूल करवाने कोई इन्कार नहीं करसी । रोगी भी इशो नहीं महान रोगी छै । महान रोगी तो छे ही परन्तु बींका साथ साथ छोटा छोटा रोग भी अनेक रया करे छै । वैद्यराज जठां तक रोगी का मुख्य रोग को पत्तो तथा निदान नहीं जाणसी बठां ताईं बींकी दवा दारू काम देसी नहीं । बस, इशी ही दशा आपणा समाज की छै ।

सं० १९८८ (मारवाड़ी पंचनाटक)

नसीब की बात है । किसना की मा मर गई म्हाने दुख कर गइ । के बेरो थो में अवस्था मै ये हाल हो ज्यांयगा । लुगाई बिना बुढापो कटणूं महामुस्कल है । बेटां की भू तो इबी से नाक मूंडा मोड़ने लाग गई । घर में जावां तो घर खावणे आवे है ।

सं० २००१ (भाषण)

ओ ख्याल बिल्कुल ही भूठो है कै प्रान्तीय भाषा सूं राष्ट्रीयता री भावना नै नुकसाण पूगै । प्रान्तीय भासावां री उन्नति सूं राष्ट्रीयता नै नुकसाण पूगणों तो दूर रयो उलटी बा सबल और पुस्ट हुवै । इण बात रो परतक उदाहरण आज रूस रो है । रूस में रूसी राष्ट्रभाषा है पण प्रांतीय भासावां भी उठे बिसी फलफूल रही है । रूस रा नेता प्रान्तीय भासावां रो नास को कर योनी उलटी जकी भासावां नास हो रही बांरा उद्धार करयों ।

सं० २००७ (संत सेठ श्री रामरतन जी डागा)

मतीरां री रुत में मतीरां रा ऊंट रा ऊंट नाखीजता विसवासी आदमी वारै ठाक्यां लगायेर कई में मोहर भर कई में रुपिया चालर पाछा ही मूंडो बन्द कर देवता । साधवों ने देवती वेला सेठ जी कैवता "महाराज मंढान का मीठा मतीरा है, खुद खाना बेचना मत" इण तरह गुप्तदान होतो हो ।

सं० २००८ (हरदास-दहीवालो)

घर में टाबर-टोली रामजी रो दान हो । माठै-मठकै चालतो अदेई तो धाको धकतो हो । मेह री रुत में हरदास गांव जातो, जठै इयारौं पिता-पूरबी खेत हा । कचा टापरिया हा । लुगायां-टाबरां समेत बठै उठ जातो । सगलै खेत रै काम में जुट जांवता । डीलां सूं मजूरी करता । टाबरां न बठै गायां भैंसां रो दूध पीवण नै मिलतो । हरी टांच रोही, हरा-हरा खेत । जियारी आ जाती । बारह महीने खावै जित्तो धानड़ो राखेर बाकी धान बेच देतो । चोखी रकम खड़ी हो जांवती । आ रकम ब्यांव-टांकडा में लागती । हरदास पक्को घर-सोचू हो ।

सं० २०१० (भाषण)

राजस्थानी-जैन-साहित मरुभाषा में बणियो है । इसमें श्वेताम्बर सम्प्रदाय-अर खरतरगच्छीय विद्वानां-रो साहित अधिक है अर बैरो प्रभाव व्यक्तियां के विहार मारवाड़ में ही अधिक हो । इयां भी मारवाड़ी भाषा राजस्थान री प्रसिद्ध साहित री भाषा है ई । कई दिगम्बर विद्वानां ढूंढाड़ी भाषा में भी साहित रो निर्माण कियो है क्यों कै इयै सम्प्रदाय रो जोर जैपुर कोटे आदि री तरफ-ई रयो है ।



रिपोर्ट्स

२१–जे० पी० ए० एस० बी०

२२–प्रिलिमिनरी रिपोर्ट आन दी औपरेशन इन सर्च आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स आफ बार्डिक क्रोनीकल्स

२३–बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल सोसाइटी आफ राजपूताना रिपोर्ट सन् १६१६

२४–पांचवीं गुजराती साहित्य परिषद की रिपोर्ट : श्री सी० डी० दलाल

२५–बारहवें गुजराती साहित्य सम्मेलन की रिपोर्ट : श्री भोगीलाल ज० सांडेसरा

कैटेलोग्स

२६–पाटन कैटेलौग आफ मेन्युस्क्रिप्ट्स

२७–ए डिस्क्रिप्टिव कैटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स सेक्शन १ भाग १ जोधपुर स्टेट

२८–कैटेलौग आफ दी राजस्थानी मेन्युस्क्रिप्ट्स इन अनूप-संस्कृत लाइब्रेरी

२६–जैन गूर्जर कविओ प्रथम भाग

३०–जैन गूर्जर कविओ द्वितीय भाग

३१–जैन गूर्जर कविओ तृतीय भाग

३२–कैटेलौग आफ सरस्वती भवन, उदयपुर

३३–डेस्क्रिप्टिव कैटेलौग आफ बार्डिक एण्ड हिस्टोरिकल मेन्युस्क्रिप्ट्स बार्डिक पोइट्री पार्ट फर्स्ट बीकानेर स्टेट

पत्र - पत्रिकायें

३४–राजस्थान भारती

३५–नागरी प्रचारिणी पत्रिका

३६–राजस्थानी

३७–कल्पना

३८–हिन्दुस्तानी

३६–जैन-सिद्धान्त-भास्कर

४०–जैन-भारती

४१–विश्व-भारती

४२–अनेकान्त

४३–पंचराज

४४–शोध-पत्रिका

४५–मारवाड़ी हितकारक

४६–आगीवाण

४७–जागती जोत

४८–मारवाड़

४६–राजस्थान

परिशिष्ट (ख)

ग्रन्थ-सूची

साहित्य के इतिहास

१–हिन्दी साहित्य का आदि-काल : हजारीप्रसाद द्विवेदी
२–हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र जी शुक्ल
३–मिश्र बन्धु विनोद : मिश्र बन्धु
४–जैन-साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास : मोहनलाल दुलीचन्द देसाई
५–ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह : अगरचन्द भँवरलाल नाहटा
६–गुजराती एण्ड इट्स लिटरेचर : के० एम० मुन्शी

भाषा के इतिहास

७–राजस्थानी भाषा और साहित्य : श्री मोतीलाल मेनारिया
८–भाषा रहस्य : श्यामसुन्दर दास
९–हिन्दी भाषा का इतिहास : धीरेन्द्र वर्मा
१०–राजस्थानी भाषा : सुनीतिकुमार चटर्जी
११–ओरिजिन एंड डेवलपमेंट आफ बंगाली लेग्वेज : टैसीटोरी
१२–पुरानी हिन्दी : चन्द्रधर शर्मा गुलेरी
१३–एल० एस० आई० : श्री ग्रियर्सन

इतिहास

१४–नैणसी की ख्यात : श्री ओझा
१५–प्राचीन गूर्जर-काव्य-संग्रह
१६–जोधपुर राज्य का इतिहास प्रथम भाग : श्री ओझा
१७–बीकानेर का इतिहास द्वितीय भाग : श्री ओझा
१८–दयालदास की ख्यात : सम्पादक डा० श्री दशरथ शर्मा
१९–बृहत्तपागच्छ पट्टावली
२०–राजपूताने का इतिहास : श्री जगदीशसिंह गहलौत

५०—मरुवाणी
५१—राजस्थान साहित्य
५२—चारण
५३—भारतीय विद्या
५४—जैन साहित्य संशोधक

भंडार (पुस्तकालय)

५५—अभय-जैन-पुस्तकालय बीकानेर
५६—क्षमाकल्याणज्ञान भंडार, बीकानेर
५७—मुनि विनयसागर संग्रह, कोटा
५८—संघ भंडार, बखत जी शेरी, पाटन
५९—डोसाभाई अभयचन्द संघ भंडार, भावनगर
६०—भंडारकर इंस्टीट्यूट, पूना
६१—पुराना संघ भंडार, पाटण
६२—विवेक विजय भंडार, उदयपुर
६३—गोड़ीजी भंडार, उदयपुर
६४—डूंगरजी यति भंडार, जैसलमेर
६५—पार्श्वनाथ भडार, जोधपुर
६६—सिद्ध-क्षेत्र साहित्य मन्दिर, पलीताना
६७—महिमा भक्ति भंडार, बीकानेर
६८—लीमड़ी भंडार तथा खेड़ा संघ भंडार
६९—कस्तूरसागर भंडार, भावनगर
७०—अनूप-संस्कृत-पुस्तकालय, बीकानेर

अन्य ग्रन्थ

७१—वीर सतसई
७२—कवि रत्नमाला
७३—राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा
७४—डिंगल में वीर रस : डा० मोतीलाल मेनारिया
७५—कुवलय माला, उद्योतन सूरि
७६—रसविलास : कविमंछ
७७—पाबूप्रकाश : कवि मोडजी
७८—वंश भास्कर : श्री सूर्यमल
७९—बांकीदास ग्रन्थावली : बांकीदास
८०—ऊमर काव्य : ऊमरदान

८१–हमारा राजस्थान : श्री पृथ्वीसिंह मेहता
८२–रघुनाथ रूपक : कवि मंछ
८३–भाषा विज्ञान : श्री श्यामसुन्दर दास
८४–वृत्तरत्नाकर
८५–भरत बाहुबली रास : ले० लालचन्द भगवानदास गांधी
८६–प्राचीन गूर्जर-काव्य-संग्रह
८७–प्राचीन गुजराती गद्य संदर्भ : सम्पादक मुनि जिनविजय
८८–षडावश्यक बालावबोध : श्री तरुणप्रभसूरि
८९–कविवर सूरचन्द्र और उनका साहित्य : ले० अगरचन्द नाहटा
९०–बृहद् कथाकोष : डा० श्री आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्याय
९१–रायल ऐशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता : डा० श्री हर्मन जैकोबी
९२–दिगम्बर जैन ग्रंथ कर्त्ता और उनके ग्रंथ : नाथूराम प्रेमी
९३–विक्रम स्मृति ग्रंथ : श्री शान्तिचन्द द्विवेदी
९४–सोमसौभाग्य काव्य
९५–षष्टिशतकप्रकरण : श्री नेमिचन्द्र
९६–योगप्रधान जिनदत्त सूरि : ले० अगरचन्द भंवरलाल नाहटा
९७–वचनिका रतनसिंह राठौड़ महेसदासौत री, खिड़िया जग्गा री कही
९८–जैनाचार्य श्री आत्मानन्द जन्म शताब्दी स्मारक-ग्रंथ
९९–आत्माराम शताब्दी ग्रंथ
१००–युगप्रधान जिनचन्द्र सूरि : ले० अगरचन्द भंवरलाल नाहटा
१०१–एपीग्रेफिक इंडिका
१०२–जनरल एण्ड प्रोसीडिंग्स : एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल
१०३–इंडियन एन्टीक्वेरी



राजस्थानी के प्रकाशित गद्य-ग्रंथ

प्राचीन

१–मुहणोत नैणसी री ख्यात	ले० मुहणोत नैणसी
२–दयालदास री ख्यात	ले० दयालदास सिण्ढायच
३–चौबोली (कहानी)	सं० कन्हैयालाल सहल
४–रतना हमीर री वात (कहानी)	ले० महाराजा मानसिंह
५–नासकेत री कथा	क्रोसे द्वारा संपादित
६–रतन महेसदासोत री वचनिका	: खिड़िया जग्गा
७–मुग्धावबोध औक्तिक	केशव हर्षद ध्रुव द्वारा संपादित
८–भगवद्गीता (अनु०)	रामकरण आसोपा द्वारा अनुवादित
९–अमृत सागर	ले० महाराजा प्रतापसिंह जी
१०–उपदेशमाला (तरुणप्रभसूरि की बालावबोध)	सं० मुनि जिनविजय द्वारा संकलित और संपादित
११–पृथ्वीचन्द्र चरित (माणिक्यचन्द्र)	,, ,, ,,
१२–सम्यक्त्व कथा	,, ,, ,,
१३–अतिचार कथा	,, ,, ,,
१४–नमस्कार बालावबोध	,, ,, ,,
१५–औक्तिक प्रकरण	,, ,, ,,
१६–आराधना	,, ,, ,,
१७–सर्वतीर्थनमस्कार	,, ,, ,,
१८–उपदेशमाला बाला०	ले० नन्नसूरि

आधुनिक

१९–राजस्थानी वार्ता		ले० सूर्यकरण पारीक
२०–बोलावण (नाटक)		ले० सूर्यकरण पारीक
२१–मारवाड़ी मोसर सगाई जंजाल	(नाटक)	लेखक श्री गुलाबचन्द नागौरी
२२–फाटका जंजाल	,,	श्री शिवचन्द्र भरतिया
२३–बुढ़ापा की सगाई	,,	श्री ,, ,,
२४–केसर विलास	,,	श्री ,, ,,

२५–बालविवाह विदूषण	,,	श्री शोभाचन्द जम्मड़
२६–वृद्ध विवाह विदूषण	,,	,, ,,
२७–कलकतिया बाबू	,,	श्री भगवती प्रसाद दारूका
२८–ढलती फिरती छाया	,,	,, ,,
२९–सीठणा सुधार	,,	,, ,,
३०–बाल विवाह	,,	,, ,,
३१–वृद्ध विवाह	,,	,, ,,
३२–कलयुगी कृष्ण	,,	श्री बोलमित्र
३३–गांव सुधार या गोमा जाट	,,	श्रीयुत श्रीनाथमोदी
३४–कनकसुन्दर (उपन्यास)		श्री शिवचन्द्र भरतिया

मुद्रणाधीन

३५–राजस्थानी वातां	श्री नरोत्तमदास स्वामी
३६–बरस गांठ	श्री मुरलीधर व्यास



राजस्थानी के अप्रकाशित गद्य-ग्रंथ

जैन रचनायें

	लेखक	समय विक्रमी संवत
३७–षडावश्यक बालावबोध	तरुणप्रभ सूरि	१४११
३८–व्याकरण चतुष्क बालावबोध	श्री मेरुतुंग सूरि (आं०)	
३९–तद्धित बालावबोध	श्री मेरुतुंग सूरि (आं०)	
४०–नवतत्व विवरण बालावबोध	श्री साधुरत्न सूरि (त०)	१४५६
४१–श्रावक बृहद्तिचार बालावबोध	श्री जयशेखर सूरि (आं)	
४२–पृथ्वीचन्द्र चरित्र वाग्विलास	श्री माणिक्यसुन्दर सूरि	१४७८
४३–कल्याणमंदिर बालावबोध	श्री मुनिसुन्दर शि० (त०)	
४४–उपदेशमाला बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि	१४८५
४५–षष्ठिशतक बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि	१४९६
४६–संग्रहणी बालावबोध	श्री दयासिंह (बृ० त०)	१४९७
४७–षडावश्यक बालावबोध	श्री हेमहंस गणि (त०)	१५०१
४८–भवभावना बालावबोध	श्री माणिक्यसुन्दर गणि	१५०१

४९–गौतमपृच्छा बालावबोध	श्री जिनसूर (त०)	
५०–नवतत्व बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि	१५०२
५१–पर्यंताराधना (आराधना पताका) बालावबोध	,, ,, ,,	
५२–षडावश्यक बालावबोध	,, ,, ,,	
५३–विचारग्रंथ बालावबोध	,, ,, ,,	
५४–योगशास्त्र बालावबोध	,, ,, ,,	
५५–पिंडविशुद्धि बालावबोध	श्री संवेगदेव गणि (त०)	
५६–आवश्यक पीठिका बालावबोध	,, ,, ,,	
५७–चउसरण टबा	,, ,, ,,	
५८–षष्ठिशतक बालावबोध	धर्मदेवगणि	१५१५
५९–कल्पसूत्र बालावबोध	पासचन्द्र	१५१७
६०–चउसरण पयन्ना बालावबोध	श्री जयचन्द्र सूरि (त०)	१५१८
६१–शत्रुंजय स्तवन बालावबोध	श्री मेरु सुन्दर (ख)	१५१८
६२–क्षेत्र समास बालावबोध	श्री उदयवल्लभ सूरि (वृत०)	१५२०
६३–शीलोपदेशमाला बालावबोध	श्री मेरुसुन्दर (ख)	१५२५
६४–षडावश्यक सूत्र बालावबोध	,, ,,	१५२५
६५–षष्ठि शतक विवरण बालावबोध	,, ,,	
६६–योगशास्त्र बालावबोध	,, ,,	
६७–अजित शान्ति बालावबोध	,, ,,	
६८–श्रावक प्रतिक्रमण बालावबोध	,, ,,	
६९–भक्तामर बाला० (कथा सह)	,, ,,	
७०–संबोधसत्तरी	,, ,,	
७१–पुष्पमाला बालावबोध	,, ,,	१५२८
७२–भावारिवारण बालावबोध	,, ,,	
७३–वृत्तरत्नाकर बालावबोध	,, ,,	
७४–क्षेत्रसमास बालावबोध	श्री दयासिंह (बृ० त०)	१५२९
७५–भक्तामर स्तोत्र बालावबोध	श्री सोमसुन्दर सूरि (त०)	१५३०
७६–षडावश्यक बालावबोध	श्री राजवल्लभ	१५३०
७७–कल्प सूत्र बालावबोध	श्री हेम विमल सूरि (त०)	
७८–कर्पूर प्रकरण बालावबोध	श्री मेरु सुन्दर (ख०)	१५३४
७९–पंच निर्गंथी बालावबोध	,, ,,	
८०–सिद्धान्त सारोद्धार	श्री कमल संयम उ० (बृ०ख०)	१५५०

८१-भुवन केवली चरित्र	श्री हर्ष कलश	
८२-आचारांग बालावबोध	श्री पार्श्वचन्द्र (बृ० त०)	
८३-दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	,, ,,	
८४-औपपातिक सूत्र बालावबोध	,, ,,	
८५-चउसरण प्रकीर्ण बालावबोध	,, ,,	
८६-जम्बू चरित्र बालावबोध	,, ,,	
८७-तंदुल वैयालिय पयन्ना बालावबोध	श्री पार्श्वचन्द्र (बृ० त०)	
८८-नवतत्व बालावबोध	,, ,,	
८९-दशवैकालिक बालावबोध	,, ,,	
९०-प्रश्नव्याकरण बालावबोध	,, ,,	
९१-भाषा ४२ भेद बालावबोध	,, ,,	
९२-राय पसेणी सूत्र बालावबोध	,, ,,	
९३-साधुप्रतिक्रमण बालावबोध	,, ,,	
९४-सूत्रकृतांग सूत्र बालावबोध	,, ,,	
९५-तुंदल विहारी बालावबोध	,, ,,	
९६-चर्चाओं बालावबोध	,, ,,	
९७-लौंका साथ १२२ बोल चर्चा	,, ,,	
९८-संस्तारक प्रकीर्णक बालावबोध	श्री समरचन्द	
९९-षडावश्यक बालावबोध	,, ,,	
१००-उत्तराध्ययन बालावबोध	,, ,,	
१०१-गौतम पृच्छा बालावबोध	श्री शिवसुन्दर	१५९९
१०२-सत्तरी कर्मग्रंथ बालावबोध	श्री कुम्भ (पार्श्वचन्द्र शि०)	
१०३-सत्तरी प्रकरण बालावबोध	श्री कुशलभुवन गणि	
१०४-सिद्ध हेम आख्यान बालावबोध	श्री गुणधीर गणि	
१०५-नवतत्व बालावबोध	श्री महीरत्न	
१०६-षडावश्यक बालावबोध	श्री उदय धवल	
१०७-षडावश्यक विवरण संक्षेपार्थ	श्री महिमा सागर (आं०)	
१०८-पासत्था विचार	श्री सुन्दरहंस (त०)	
१०९-उपासक दशांग बालावबोध	श्री विवेक हंस उ० लगभग	१६१०
११०-सप्त स्मरण बालावबोध	श्री साधुकीर्ति	१६११
१११-कल्प सूत्र बालावबोध	श्री सोमविमल सूरि	१६२५
११२-युगादि देशना बालावबोध	श्री चन्द्रधर्म गणि (त)	१६३३
११३-सम्यक्त्व बालावबोध	श्री चारित्र सिंह (ख०)	१६३३

११४–लोकनाल बालावबोध	श्री जयविलास	१६४०
११५–प्रश्नोत्तर ग्रंथ	श्री जयसोम	१६५०
११६–प्रवचन सारोद्धार बालावबोध	श्री पद्मसुन्दर (ख०)	१६५१
११७–संग्रहणी टबार्थ	श्री नगर्षि (त०) लगभग	१६५३
११८–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	श्री श्रीपाल लगभग	१६६४
११९–लोकनालिका बालावबोध	श्री यशोविजय (त०)	१६६५
१२०–ज्ञाताधर्म सूत्र बालावबोध	श्री कनकसुन्दर गणि (बृ० त०)	
१२१–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	श्री कनकसुन्दर गणि	१६६६
१२२–कल्पसूत्र बालावबोध	श्री रामचन्द्र सूरि	१६६७
१२३–कर्म विपाक बालावबोध	श्री हीरचन्द (त०)	
१२४–कोकशास्त्र	श्री ज्ञानसोम	
१२५–सिद्धान्त हुंडी	श्री सहजकुशल	
१२६–साधु समाचारी	श्री मेघराज	१६६९
१२७–ऋषि मंडल बालावबोध	श्री श्रुत सागर	१६७०
१२८–राज प्रश्नीय उपांग बालावबोध	श्री मेघराज	१६७०
१२९–समवायांग सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१३०–उत्तराध्ययन सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१३१–औपपातिक सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१३२–क्षेत्र समास बालावबोध	,, ,,	
१३३–संथार पयन्ना बालावबोध	श्री क्षेमराज	१६७४
१३४–सम्यक्त्व सप्ततिका पर सम्यक्त्व रत्नप्रकाश बाला०	श्री रत्नचन्द्र (त०)	१६७६
१३५–लोकनाल बालावबोध	श्री सहजरत्न	
१३६–क्षेत्र समास बालावबोध		१६७६
१३७–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध	श्री राजचन्द्र सूरि	१६७८
१३८–षट् कर्म ग्रंथ (बंधस्वामित्व) बालावबोध	श्री मतिचन्द्र	
१३९–अंचल मत चर्चा	श्री हर्षलाभ उ०	
१४०–लघु संग्रहणी बालावबोध	श्री शिवनिधान	१६८०
१४१–कल्पसूत्र बालावबोध	,, ,,	
१४२–कटुक मत पट्टावली	कल्याणसार (कडुवागच्छ)	१६८५
१४३–षडावश्यक सूत्र बालावबोध	श्री समयसुन्दर	
१४४–ज्ञाता सूत्र बालावबोध	श्री विक्रमशेखर	
१४५–पृथ्वी राज कृष्ण वेलि बा०	श्री जयकीर्ति	१६८६

१४६–खक्खमसी कृत प्रश्नोत्तर संवाद	श्री मतिकीर्ति	१६६१
१४७–उत्तराध्ययन बालावबोध	श्री कमल लाभ (ख०)	
१४८–उपासक दशांग बालावबोध	श्री हर्ष वल्लभ	१६६२
१४९–गुणस्थान गर्भित जिन स्तवन बालावबोध	श्री शिवनिधान	१६६२
१५०–क्रिसन रुकमणी री बेलि बाला०	,, ,,	
१५१–विधि प्रकाश	,, ,,	
१५२–कालिकाचार्य कथा	,, ,,	
१५३–चौमासी व्याख्यान	,, ,,	
१५४–योग शास्त्र टब्बा	,, ,,	
१५५–दशवैकालिक सूत्र बालावबोध,	श्री सोमविमल सूरि	
१५६–प्रतिक्रमण सूत्र बालावबोध	श्री जयकीर्ति	१६६३
१५७–चतुर्मासिक व्याख्यान बाला०	श्री सूरचन्द्र	१६६४
१५८–दानशील तपभाव तरंगिनी	श्री कल्याणसागर	१६६४
१५९–लोक नालिका बालावबोध	श्री ब्रह्मर्षि (ब्रह्ममुनि)	
१६०–जीवाभिगम सूत्र बालावबोध	श्री नयविमल शि०	
१६१–छः कर्म ग्रंथ पर बालावबोध	श्री धनविजय (त०)	१७००
१६२–कर्म ग्रंथ बालावबोध	श्री हर्ष	१७००
१६३–श्रावकाराधना	श्री राजसोम	
१६४–इरियावही मिथ्यादुष्कृत स्तवन बालावबोध	श्री राजसोम	
१६५–वीर चरित्र बालावबोध	श्री विमलरत्न	१७०२
१६६–जीव विचार बालावबोध	श्री विमल कीर्ति	
१६७–नव तत्व बालावबोध	श्री विमल कीर्ति	
१६८–दण्डक बालावबोध	,, ,,	
१६९–पक्खी सूत्र बालावबोध	,, ,,	
१७०–दशवैकालिक बालावबोध	,, ,,	
१७१–प्रतिक्रमण समाचारी बालावबोध	,, ,,	
१७२–षष्ठि शतक बालावबोध	,, ,,	
१७३–उपदेश माला बालावबोध	,, ,,	
१७४–प्रतिक्रमण टब्बा	,, ,,	
१७५–गुणविनय बालावबोध	श्री विमल रत्न	
१७६–जय तिहुअण बालावबोध	,, ,,	

१७७–बृहत् संघयणी बालावबोध	श्री विमलरत्न	
१७८–शत्रुञ्जय स्तवन बालावबोध	” ”	
१७९–नमुत्थाणं बालावबोध	” ”	
१८०–कल्पसूत्र बालावबोध	” ”	
१८१–द्रव्य संग्रह बालावबोध	श्री हंसराज (ख०)	१७०९
१८२–नवतत्व बालावबोध	श्री पद्मचन्द्र (ख०)	१७०७
१८३–कल्पसूत्र स्तवन बालावबोध	श्री विद्याविलास	१७२९
१८४–ज्ञान सुखड़ी	श्री समाचन्द्र (बे० ख०)	१७६७
१८५–भुवन भानु चरित्र बालावबोध	श्री तत्वहंस	१८०१
१८६–भुवन दीपक बालावबोध	श्री रत्नधीर	१८०६
१८७–पृथ्वीचन्द्र सागर चरित्र बाला०	श्री लाधाशाह (कडुआगच्छ)	१८०७
१८८–सम्यक्त्व परीक्षा बाला०	श्री विबुध विमल सूरि	१८१३
१८९–श्राद्धवृत्ति बालावबोध	श्री उत्तमविजय	१८२४
१९०–सीमंधर स्तवन पर बालावबोध	श्री पद्मविजय	१८३०
१९१–कल्पसूत्र टब्बा	श्री महानन्द	१८३४
१९२–धन्य चरित्र टब्बा	श्री रामविजय (त०)	१८३५
१९३–गौतम कुलक बालावबोध	श्री पद्मविजय	१८४६
१९४–नेमिनाथ चरित्र बालावबोध	श्री खुशालविजय	१८५६
१९५–आनन्द घन चौबीसी बालावबोध	श्री ज्ञानसार	१८६६
१९६–अध्यात्म गीता पर बालावबोध	श्री अमीकुंवर ज्ञानसार	१८८२
१९७–यशोधर चरित्र बालावबोध	श्री क्षमाकल्याण	१८९३
१९८–विचारामृत संग्रह (बालावबोध)	श्री रूपविजय	१८९३
१९९–सम्यक्त्व संभव बालावबोध	श्री रूपविजय	१९००

अज्ञात-लेखक-जैन-रचनायें[1]:—

	समय
२००–शीलोपदेश माला बाला०	१४४६
२०१–षडावश्यक बालावबोध	सोलहवी शताब्दी
२०२–अजित शान्तिस्तव बालावबोध	” ”
२०३– ” ” स्तोत्र बालावबोध	” ”
२०४–आराधना बालावबोध	” ”

१—जैन-गूर्जर-कविओ के आधार पर

२०५–उपदेश माला बालावबोध	,,	,,
२०६–उपदेश रत्न कोष बालावबोध	,,	,,
२०७–कल्प सूत्र स्तवक	,,	,,
२०८–कर्म ग्रंथ बालावबोध	,,	,,
२०९–दंडक बालावबोध	,,	,,
२१०–प्रश्नोत्तर रत्न माला बालावबोध	,,	,,
२११–भव भावना कथा बालावबोध	,,	,,
२१२–योग शास्त्र बालावबोध	,,	,,
२१३– ,, ,, ,,	,,	,,
२१४–वनस्पति सप्ततिका बालावबोध	,,	,,
२१५–शीलोपदेश माला बालावबोध	,,	,,
२१६–श्राद्ध विधि प्रकरण बालावबोध	,,	,,
२१७–श्रावक प्रतिक्रमण बालावबोध	,,	,,
२१८–सिद्धान्त विचार बालावबोध	,,	,,
२१९–जम्बू स्वामी चरित्र	,,	,,
२२०–पांडव चरित्र	,,	,,
२२१–पुष्पाभ्युदय	,,	,,

चारण-साहित्य

ऐतिहासिक रचनायें :—

	पृष्ठ
२२२–देश दर्पण ले० दयालदास	११४ अ० सं० पु० बी०
२२३–आर्याख्यान कल्पद्रुम ले० दयालदास	३७२ ,, ,,
२२४–बांकीदास री वाता ले० बांकीदास	
२२५–जोधपुर रा राठौड़ां री ख्यात	तीन प्रति
२२६–बीकानेर री ख्यात	१९२
२२७–जोधपुर री ख्यात	२४
२२८–उदयपुर री ख्यात	११६
२२९–मानसिंह जी री ख्यात	५६
२३०–तखतसिंह जी री ख्यात	३५२
२३१–फुटकर ख्यात	४८८
२३२–मारवाड़ री ख्यात	

२६६–अमर सिंह री वात

वात-साहित्य

	लिपिकार	लिपिकाल संवत	ले० स्था०
२६७–बगलै हूंसणी री (अपूर्ण)		१२८६	बीकानेर
२६८–नागौर रे मामले री		१६६६	
२६९–सुवा बहत्तरी	देवीदान नाइतो	१७०५	
२७०–राठौड़ अमरसिंह री		१७०६	
२७१–राणा अमरा रे बिखेरी			
२७२–दहियां री		१७२२	
२७३–जहाल गहाणी री	मयेन वीर पाल	१७२२	फलवधी
२७४–वैताल पच्चीसी री	देवीदान नाइतो	१७२२	
२७५–सिंहासन बत्तीसी री	,, ,,	१७२२	
२७६–राम चरित री कथा		१७४७	
२७७–नासिकेतोपाख्यान (अनु०) छायाणी	मुरलीधर	१७५५	
२७८–प्रिथीसिंघ अर खूबां री	मयेन कुसला	१७५५	
२७९–चंद कुंवर री वात		१८००	
२८०–अकबर री			
२८१–अकबर अर वजीर टोडरमल री			
२८२–सौलवीं अलै री			
२८३–खीची अचलदास री		१८२०	
२८४–अचलदास खीची री ऊमा दे परण्या जिण री			
२८५–अणहल वाड़ा पाटण री			
२८६–अणंतराम सांखला री			
२८७–गोहिल अरजण हमीर री		१८२०	
२८८–राठौड़ अरड़क मल री			
२८९–पातसाह अलादीन री		१८२०	
२९०–अल्हण सी भाटी री			
२९१–राव आसथान री			
२९२–राजा उदैसिंघ री			
२९३–राणा उदैसिंह उदैपुर बसायो तिण री			
२९४–ऊदै उगभणावत री			

२६५–आम ऊनड़ री
२६६–भटियाणी उमा दे री
२६७–करण लाखावत देसल राठौड़ चारण आलूण सी री
२६८–करणसिंघ रे कंवरा री
२६६–सोढ़ा कंवलसिंघ नै भरमल री
३००–कयंल जी री
३०१–कांधल रिड़मलोत री
३०२–राव किसन,कान्हड़ री
३०३–सांखले कुंवर सी री
३०४–खीवै बीजै थाड़वी री
३०५–सरवहिये कैघाट री
३०६–खड़गल पंवार री
३०७–सांखले खींव सी री
३०८–खीवे पोकरणे री
३०६–खेतसी कांधलोत री
३१०–खेतसी रतन सोभोत री
३११–राणा खेता री
३१२–खोखर छाड़ावत री
३१३–राव गांगे वीरम री
३१४–गींदोली री
३१५–गोगा जी री १८२०
३१६–गोगा दे जी री
३१७–गोगा दे वीरमदेवोत री
३१८–गौड़ गोपालदास री
३१६–चाले चापै री
३२०-सींधल चीपै भाइल वीर री
३२१–राठौड़ राव चूडे जी री
३२२–पंवार छाहड़ री
३२३–जगदेव पंवार री
३२४–जगमाल मालावत री
३२५–जैतमाल पंवार री
३२६–जैतसी ऊदावत री
३२७–जैते हमीरौत री

३६१–आवंचा फूल री			
३६२–बगड़ावतां री			
३६३–राव माल नाथ री			
३६४–चहुवाण बोग री			
३६५–भाटियां री खांप जुदा हुइ जिण री			
३६६–कछवाहे मारमल री			
३६७–राजा भीम री		१८२०	
३६८–सांई री पलक में खलक बसै तेरी		१८२०	अधूरी
३६९–सांई कर रह्यो तै री		१८२०	"
३७०–आय ठहकी माहि में तै री		१८२०	"
३७१–हरराज रै नैणां री		१८२०	"
३७२–क्यूं हुरै न क्यूं सेखे ते री		१८२०	"
३७३–सैखै ने भातो आयो तै री		१८२०	अधूरी
३७४–बीरबल री		"	"
३७५–राजा भोज खापरै चोर री		"	"
३७६–कुतुबुदीन साहिजादे री		"	"
३७७–दम्पति विनोद		"	"
३७८–राव सीहै री		"	"
३७९–राव कान्हड़ दे री		"	"
३८०–बीरम जी री		"	"
३८१–राव रिणमल री		"	"
३८२–गोरै बादल री		"	"
३८३–मोमल री		"	"
३८४–महिंदर बीसलौत री		"	"
३८५–गांगै बीरम दे री		"	"
३८६–हरदास ऊहड़ री		"	"
१८७–राठौड़ नरै सूजावत खीमै पोहकरण री		"	"
३८८–जयमल बीरमदेवौत री	(ले० मयेन कुसला)	"	"
३८९–सीहै मांडण री	"	"	"
३९०–जेसलमेर री	"	"	"
३९१–जैते हमीरोत राणक दे लखणसीओत री	"	"	"
३९२–रावल लखनसेन री	"	"	"
३९३–कंगरै बलौच री	"	"	"
३९४–लाखै फूलाणी री	"	"	"

३६५–कछवाहां री	"	"	"
३६६–राणै रतनसी राव सूरजमल री	"	"	"
३६७–नारायण मीठा खां री	"	"	"
३६८–रावत सूरजमल री	मथेन कुसला	१८२०	अपूर्णी
३६९–राणै खेतै री	"	"	"
४००–सोनिगरै माल दे री	"	"	"
४०१–खेतसी रतन सीहोत री	"	"	"
४०२–चंद्रावतां री	"	"	"
४०३–लिखरौ वहेलवे गयौ रहे तैरी	"	"	"
४०४–उदै ऊगावत री	"	"	"
४०५–वहलियां री	"	"	"
४०६–राव सुरताण देवड़े री	"	"	"
४०७–हाडा री हकीकत	"	"	"
४०८–बूंदी री वात	"	"	"
४०९–खीचियां री	"	"	"
४१०–मोहिलां री	"	"	"
४११–सातल सोम री	"	"	"
४१२–राव मंडलीक री	"	"	"
४१३–सांगण बाढेल री	"	"	"
४१४–चापे बाले री	"	"	"
४१५–राव राघव दे सोलंकी री	"	"	"
४१६–सयणी री	"	"	"
४१७–देवरै नायक दे री	"	"	"
४१८–खीवै वीभै री	"	"	"
४१९–राणी चोबोली री	"	"	"
४२०–चार मूरखां री	"	"	"
४२१–सदैवछ सावलिंगा री	"	"	"
४२२–लाखै फूलाणी री	"	"	"
४२३–बुधि बल कथा	"	"	"
४२४–राजा धार सोलंकी री	"	"	"
४२५–दो कहाणियां	"	"	"
४२६–बगड़ावतां री	"	"	"
४२७–राजा मानधाता री	"	"	"

४२८–राजा पृथ्वीराज चौहान री	”	”	”
४२९–सोलंकी राजा बीज री	”	”	”
४३०–रावल जगमाल री	”	”	”
४३१–सुपियार दे री	”	”	”
४३२–क्यामख्याना री उतपत	”	”	”
४३३–दौलताबाद रै उमरावां री बात	”	”	”
४३४–फूलकंवर आकूल खां री	”	”	”
४३५–सांगम राव राठौड़ री	”	”	”
४३६–रावल लखणसेण वीरम दे सोनगरे री		”	
४३७–राव रिणमल री		”	
४३८–साह ठाकुरै री		”	
४३९–बिसनी बेखरच री		”	
४४०–आसा री		”	
४४१–पिंगला री		”	
४४२–गंधर्वसेण री		”	
४४३–मलहाली री		”	
४४४–सोणा री		”	
४४५–मामै भाणजै री		”	
४४६–राव रिणमल लांबड़िये री		”	
४४७–डूंगर जसाकौ ते री		”	
४४८–तमाइची पातसाह री		”	
४४९–पाहुआ री		”	
४५०–दत्तात्रेय चौबीस गुरु किया तैरी		१८२०	
४५१–राव बीकै री		”	
४५२–भटनेर री		”	
४५३–कांधल जी काम आयो ते समय री		”	
४५४–राव बीकै जी बीकानेर बसायो तै समय री		”	
४५५–राव तीड़ै सावंतसी वेढ़ हुई तै समय री		”	
४५६–पताई रावल साकौ कियो तै री		”	
४५७–राव सलखै री		”	
४५८–गाढ़ मंडिया तै री		”	
४५९–छाहड़ पंवार री		”	
४६०–राव रणमल अर महमद लड़ाई हुई तै री		”	

४६१–बीमरै अहीर री ,,
४६२–वैरसल भीमोत बीसल महेवचै री ,,
४६३–उमादे भटियाणी री ,,
४६४–रिणधवल री ,,
४६५–राव लूणकरण री ,,
४६६–राणक दे भाटी री ,,
४६७–तुंवरां री ,,
४६८–राजा प्रिथीराज सूहवदे परणिया तै री ,,
४६९–जोगराज चारण री ,,
४७०–रावल अलीनाथ पंथ मै आयो तै री ,,
४७१–नरबद जी राणे कूमै न आंख दीवी तै री ,,
४७२–कांधलोत खेतसी री ,,
४७३–सोहणी री ,,
४७४–कुंवरिये जयपाल री ,
४७५–दीनमान रै पत्ल री ,
४७६–दूदै जोधावत री ,,
४७७–पलक दरियाव री १८७० बीकानेर
४७८–शशि पन्ना री मथेन रामकृष्ण बीकानेर
४७९-राय थण भाटी री
४८०–रायसिंह खींवावत री
४८१–कुंवर सिंह री
४८२–बीरबल री
४८३–रावत सूरजमल कुंवर प्रिथीराज री
४८४-जैतमाल सलखावत कोड़ियां री १८७६
४८५–राव तीड़ा चाड़ावत री १८७६
४८६–पीरोजसाह पातिसाह री ,
४८७–सात बेटियां वाले राजा री संवलनेन खवास ,,
४८८–कुंवर रिणमल चूंडावत अखै सोलंकी
मारियो तै री ,,
४८९–कुंवर रिणमल चूंडावत अखै सांखलै रो
वैर लियो ते री ,, ,,
४९०–सयणी चारणी री ,, ,,
४९१ राव हमीर लखै जाम री ,, ,,

४९२—डूंगरै बलौच री ,, ,,
४९३—सूर अर सतवादियां री ,, ,,
४९४—जैतमल सलखावत री ,, ,,
४९५—सांच बोले सो मारिया जावे है री ,, ,,
४९६—बीजड़ बाजोगण री ,, ,,
४९७—राव चूडे री ,, ,,
४९८—रिणधीर चूंडावत री ,, ,,
४९९—हाडुल हमीर भोले राजा भीम सूं जुध करियौ तै री ,, ,,
५००—बडा बड़ी दे बडे डहरू बानर री ,, ,,
५०१—राजा भोज री पनरवीं विद्या त्रिया चरित्र ,, ,,
५०२—भोजै सोलंकी री
५०३—भलीनाथ री
५०४—महमद गजनी री
५०५—राव मंडलीक री
५०६—राव माना देवड़ा री
५०७—मांडण मी कूंपावत री
५०८—मूलवै जगावत री
५०९—माधव दे सोलंकी री
५१०—रामदास वैरावत री भांखड़ियां री
५११—रामदेव जी तुंवर जी री
५१२—कुंवर रामधण री
५१३—रामधण भाटी री
५१४—झाला राय मी नै जमा हुर धवलौत री
५१५—झाला राय सी नै जाडेचा सायब री
५१६—रुद्रमालौ प्रासाद करायो तिण री
५१७—लालां मेवाड़ी री
५१८—रावल लूणकरण अलीखान री
५१९—भाटी बरसे तिलोक सी री
५२०—सादे गुडलोत री
५२१-रामू मूंजे री
५२२—सूर सांवलै री
५२३—सूर सिंह जोधपतिया री
५२४—सेवराम बरदाई सेनौत री

६२४–बाड़ी बारै री
६२५–राजा बिजैराव री
६२६–राव बिजयपत री
६२७–वीर विक्रमादित्य अर मचत्र जाल री
६२८–वीरोचंद मेहता री
६२९–वीसा बोली री
६३०–बेलाभंरा री
६३१–व्यापारी री
६३२–व्यापारी अर फकीर री
६३३–साढ़ा मांगल्या री
६३४–सामा री
६३५–सालीवाहण री
६३६–साह ठाकुरै री
६३७–साहूकार च्यार बात मोल ली तिण री
६३८–साहूकार रा बेटा री
६३९–सुथार सुनार री
६४०–सुलेमान री
६४१–सूरज रा बरत री
६४२–स्यामसुन्दर री



शुद्धि-पत्र

(संशोधक—अगरचन्द नाहटा)

***

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१ — १८	कुकीव बत्तीसी	कुकवि बत्तीसी
१ — २८	मिलयां	मिलिया
१ — २६	संस्कृति हुवे कपट सब	ससकृति हु वै कपट सब
१५ — २२	अज्ञात लेखक	पद्मसुन्दर
१५ — २३	उपासक दशांक	उपासक दशांग
१७ — २४	——	बालाव. जितविमल
१८ — ६	आर्संचन्द्र	आसचन्द्र
१८ — ७	महावीर चरित्र, जम्बू-स्वामी चरित्र	शांतिनाथ चरित्र, पार्श्वनाथ चरित्र
१८ — ८	सुशील-विजय	कुशाल विजय
१९ — ६	जैचन्द्रसूरि	पार्श्वचन्द्रसूरि
२३ — ५	घाटी राह	?
२४ — १५	घाव	धाव
२४ — २१	गणाते, मारावत	ठाणा ते अरात
२४ — २२	देऊ	देहू
२४ — २५	जवाहर	जवाहर के
३२ — १२, २८	वृत्त रत्नाकर	वर्ण रत्नाकर
३५ — २६	जोहती	जोइसी
३५ — २८	मई	मइं
३५ — २८	वंचिया	वंचिया सेहिया
३६ — १५	कीधर	कीधं
३६ — १९	मोसेउ, कुणहसउं	मोसउ, कुणहुइसउं
३६ — १९	मेढ़ि	मेढ़ि
३६ — २०	वृत्ति, वाही	वति, माही
३७ — ४	आर्यारियाणम्	आयरियाणम्
३७ — ६	चरित्राचार	चारित्राचार
३७ — १६	बीस	चीस

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
३७ — १५	जिमालइपस्सिमं	जिणालइ पडिमं
३७ — २६	विंषु	विंबु
३८ — १	सोकलउ	मोकलउ
३८ — ४	कूरसी	कुमरसीह
३९ — ७, ८	तीहंइ	तीयहि
३९ — ९	भीजा	बीजा
३९ — १०	दधि	वधि
३९ — १०	तिपि	तिणि
४० — १९	वचनिक	वचनिका
४० — २८	सोमसुंद	सोमसुंदर
४१ — २१	धुरदर	धुरधर
४१ — २६	दुलीचन्द	दलीचद
४१ — २८	बालावबोव	बालावबोध
४१ — २८	मासि	पासि
४१ — २९	विद्यामभाणयत	विद्यामभाणयद
४१ — ३०	कुशलाखो	कुशलाख्यो
४२ — २८	बालावबोक्ष	बालावबोध
४५ — १३	चद्रंगुप्त	चंद्रगुप्त
४५ — १५	नंदराव	नदराय
— १६	तक्षणे	लक्षणे
— २२	जाणीर	जाणीइ
— २४	तड़ि, चार	तेड़ि चोर
— २५	प्रउलउ	पटउलउ
— २६	स्थान के	स्थानके
— २६	चारजोवउ	चोर जोतउ
— २७	जगाविउ	जगाड़िउ
४६ — ३	शिष्य	आज्ञानुवर्ती
४७ — १२	स्यामणि	स्यामणि
४७ — १८	उपाध्याय	आचार्य
४८ — १०	न धि	नधि
— १४	मा्लइ	मोहइ
— २१, २२	उभयनंदी, गुणरत्न	?
— २५, २६	लीमड़ी	लींबड़ी

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
४१ — १६	कीमासर	कीमसर
५३ — १८	कीमासर	कीमसर
— २०	झुला गलइं	झुलगलइं
— २१	दाधा	दाधा
— २३	विरतत्तणा	विर तत्तणा
५४ — २	विस्तारिउ	विस्तरिउ
— २	तणाउ	तणाउ दुकाल, नाठौ
— २	जाणिइ	जीणिइ
— ३	मेघ	मेह
— ५	विरीत	विपरीत
— ५	परिपास	परियास
— ७	ऊपर	ऊपरि
— ७	वेल	वेला
— १०	तोक	लोक
— १०	बइठा	बइठां
— १३	बेडल	बेउल
— १३	भ्रमर	भ्रमर कुल
— १४	पाडर	पाडल
— १४	निर्झर	निर्मल
— १५	सेवंभी	सेवंत्री
५५ — ७	पद्मप	मद्मप
५६ — १२	सइ	हइ
— १४	भल भलेरा	भला भलेरा
— १७	सांवरि	सांतरि
५७ — ५	भजबपाल	भजहपाल
— ५	धारउ	धारु
— ६	छाया सावइ	छायालवइ
— १३	लउपडं	लडपडं
— १७	बीलास	बीलस
— १८	अच्छरंग	उच्छरंग
— २२	सुती	सु ती
५९ — १८	कीधी	कीधी

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
—१६	किन	दिन
—२०	बूहड़िया	बूहड़िया
—२१	योधराणां	योधरायां
—२३	गाइ	जाइ
—२५	अचरज	आचारिज
—२५	उरही	उरहौ
—२५	कइ	जइ
—२६	आरित	आरति
६०—१६	देवतणी	देव तणी
—१७	आपाय	अपाय
—१७	जेह तउ	जेहतउ
—१७	मय	मयु
—१६, २०	हत्यार्थे	हत्यर्थे
—२७	भाग २	भाग ३
६१— ५	लभाउइ	लभाड़इ
—१३	दवदत्ति	देवदत्ति
—२०	राजकीर्ति मिश्र	श्रीधर
—२१	श्रीधर	राजकीर्ति
७०— ७	वसुभूति	इन्द्रभूति
—१३	नाग	ना
—१४	तंडोलाइ	नंडोलाइ
७७— ७	विरवरणात्मक	विवरणात्मक
७८— ६	वणी	धणी
७६—१६	पनरग	मनरंग
८३— ६	दया व्यवस्था	दंड - व्यवस्था
८५—१०	देवणा	देवड़ा
—१६	राधणिया	रा धणियां
—२३	कांघल	कांधल
—२७	रतनसी भौत	रतनसीभोत
—२६	पोह करणे	पोहकरणे
८६—१०	स्याम	श्याम
६१— २	बींगड़	बींगड़

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
९२ — ११	सेगोर	सागोर
९८ — २४	राठौराां	राठोड़ां
१०० — १५	बागापत	बागायत
— १७	फोसे	कोसे
१०३ — ८	गंगासिंह	?
१०५ — २	आचार्यों	मुनियों
१०६ — १, २	कल्पसूत्र बाला० कल्पसूत्र टब्बा	दोनों एक हैं
१०६ — ४	खरतरगच्छ	खरतरगच्छ के
१०७ — १५, १६	दंडक, बालाव.	दोनों एक ही हैं
१०८ — ८	अष्टलछि	अष्टलक्षी
१०९ — २४	विमलरत्न सूरि	विमलरत्न
११० — ७	कल्पसूत्र स्तवन	कल्पसूत्र बालावबोध
१११ — १३	समोसरनी	समोसरणनी
११२ — २	१८७२	१८५३
११३ — २२	दोनों के लेखकों के नाम अज्ञात हैं	पहले के लेखक का नाम ज्ञानसार है
११४ — १	रसग्रुत्यी	रसग्रुठी
— ७	माखे रवे	आणे रखे
— ८	नत्री	नथी
११५ — २०	जयसिंह	जटासिंह
११५ — २८	जैन साहित्यिक लेख	लोक कथा संबन्धी जैन साहित्य
११६ — ६	हरिसेन सूरि	हरिषेण
— ८	कथा संग्रह	कथाकोष
— १२	भर्तेश्वरवृत्ति बाहुबलिवृत्ति	भरतेश्वर बाहुबलिवृत्ति
११७ — २१	पारस्परिक	पारंपरिक
११८ — २२	द्राष्टांतिक	द्राष्टान्तिक
१२० — १	पार्श्वनाथ या भ्रष्ट	पार्श्वनाथ अष्ट
१२० — २५	नं० ३०८१	नं० ३०२४
१२३ — २८	को	छो
१३० — ७	रावल रत्नसिंघ	?
— ९	मीढ़ा	मीठा
— १६	माहूलां	मोहूलां

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१३० — २६	रामदे	रामदेव
— १६	प्राय	आप
— १८	मरिया	मारिया
— १६	तसू ं	तैसू ं
— १६	बुहा	तो बुहा
१३२ — ३	कांधल	कांधल
१३३ — ८	सारद	सरद
— १०	बचो	बचो
— ११	प्रमता	प्रभात
— १३	लेखणो	पेखणो
१३४ — १२	मंत्री	पीहर
१३६ — १६	करतवां	कर तवां
१३७ — १६	के सर	केसर
१३७ — १६	कांमइ	कांई
— २१	बार	तार
— २२	अमृतरा	मृग रा
— २३	मुहां	भुहां
— २४	दात	दात
— २५	हालीती	हालती
१३८ — १५	नामक	नायक
१३६ — १०	पिंडल	पिंडत
१४० — ६	सतयुगी	सतयुगी
१४० — १६	पारवती	पारुती
१४१ — ११, १४	दीपालदे	देपालदे
१४२ — ४	कु ंभटगढ	कु ंभटगढ (समियाणा)
१४२ — २४	भोड़बीरी	भोडणीरी
१४३ — २८	कन्हड़दे	कान्हड़दे
१४४ — ६	जयमाल	जगमाल
१४५ — १	लीषां	लीधा
१४५ — ३	जाड़े जी	जाड़ेची
— ६	घवला	धवला
— ७	घावेला	बावेला
— १७	फूलमली	फूलमती

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१४५ — १६	वीरमाण	वीरमाण
१४७ — ८	जोधपुर	जोधपुर
१४८ — ४	घठना	घटना
— २२	घर हात	करि घाति
— २८	सु	मो
— २८	कहता	कहतां
१४६ — ७	मासाण	मवसाण
— ८	बाचवीजै	साचवीजै
— ६	लीजै	लीजै न बीजै
— १०	खाट	खड़ा
— १०	झारझड़ि	झडाझड़ि
१५० — १३	घटतां	घडता
— १६	मरना बोलते	मरणा खोलते
१५१ — ३	पढपती	गढपती
— ६	पाचक	वाचक
— १५	रूपवंतुकारूप	रूपवंतु का रूप
१५३ — २५	बजाव	बजाज
१५४ — ३	३६ विधि	३६ विधि बाजा
१५५ — १५	मालेत	आलेट
१५६ — २	पारवती	पाखती
— ३	बील	नील
— ५	काटरी	कोटरी
— १६	भण	त्रण
— २०	घमल	धमल
— २४	पछ	पछि
— २५	ऊपाडिमा	ऊपड़िमा
१५७ — ३	टीपां	टीयां
— ७	पर्वत	पवन
— १३	झिमि	झिलि
— १७	गाइ जै	गाइजै
— १८	खेली जै	खेलीजै
— १८	नाची जै	नाचीजै

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
—२३	मालो	ओलो
—२४	तोकां	लोकां
—२५	सुआणै	सु जाणै
—२५	डिंगवरां	डिगंबरां
—२६	पाइणी	पोइणी
—२६	बाल	वलि
१५८— ६	घूघलीओ	घूघलीओ
—१०	ऊंडी	ऊंडौ
—११	मालास मरिम्रा	माला समरिम्रा
—१५	बांत	बात
१५६— १	नही	नदी
— ३	देवौ	दूवौ
— ४	सिघ	सिघ
— ५	लागो	लायो
—२५	पगांसूं	पौडां सूं
—१७	भनकार	भमकार
—२६	रह्या	रह्यो
—३०	रहवा	रह्या
१६०—११	ज्याका	जाका
—१३	की	री
—१५	मुह	मुंह
—१७	है	वे
—२०	उत्त	उत्त
१६१—२१	घूम्रउ	धुवउ
—२३	दविघा	दविदाधा
१६२— ३	उकटा	एकठा
— ४	गटा	मटा
— ८	गोर	मोर
— ६	चूमे माल	चूये साल
—१२	समाश्रृंगार	समाश्रृंगार
—१७	कालहुउ	काल हुउ
—२१	घडहूड़े	घड़हुड़े
—२२	बड़ी	बड़ा
—२५	साघ	साथ

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१६२ — २५	विहारन	विहार न
१६३ — ११	माद्रवे	माद्रवे
— १८	प्रामरण	ग्रामरण
— १८	भांजती	भांजती
— १८	चोड़ती	त्रोड़ती
— १६	कंचुड	कंचुउ
— २३	सांडेसरा	सांडेसरा
१६४ — ३	घूमइ	घूमइ
— ४	संताप	संतापइ
१६५ — २	को	के
१६७ — १०	का	के
१६८ — २	प्रताप	अमृत
१७० — ७	प्रतिष्ठा	प्रस्थान
— १६	सहारा	सहरां
१७१ — १२	ऊपर	ऊपर सरो
— १४	भी	को
— १४	नरेशों को	नरेश सिफारिशी
— १६	राजकनै	राज कनै
— २६	लिखि तं	लिखितं
— २६	जाणीषी	जाणिवी
— २७	लिषज्यो	लिखज्यो
— २८	मनसातापा मै	मन साता पामै
१७२ — १	चीता रां	चीतारां
— ४	दे जो	देजो
— ५	राखे जो	राखेजो
— ६	होरहर जी अस कलंक रै छी	?
१७८ — १४	थामरा	थामरण
१७६ — ६	भगवान	भगवती
— ६	जसपुरा	जसरापुरा
— २६	विधार	विवाह
१८१ — ८	मुद्रणाधीन	प्रकाशित
१८३ — १	बुझावो	बुझस्यो
१८४ — १०	भारियोड़ी	भरियोड़ी

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
१८४ — १३	पद	पग
— १५	मरण	करण
१८५ — १	धापड़ा	बापड़ा
१८६ — २०	कोई घणी	कोई बखत घणी
१८७ — २४	पूव रो	पून रो
— २४	सावड़ी	तावड़ी
— २५	तसा	तप्या
१८८ — १	बलकोनी	बल कोनी
१८९ — ५	इस में	इण में
— २२	धापण	धामण
१९१ — २	अंक	पत्र
१९०,९१	राजस्थानी-राजस्थानी त्रैमासिक	दोनों एक ही हैं
१९१ — २३	में	में स्थापित
१९५ — ७	वंचिया	वंचिया सेहिया
१९६ — ९	वलिग	वलिग
— १६	हीउतइ	हीडतइ
— १९	कुप	कूप
— २१	ऊजसु	ऊजमु
१९७ — १५	बधि	बंधि
— १७	मंगनु	मंडनु
२१४ — १६	योगप्रधान	युगप्रधान
— २०	युघप्रधान	युगप्रधान
२१५ — ७	क्रोसे	क्राउञ्झे
२१६ — २७	षष्ठिशतक	षष्ठिशतक
२१७ — १२	पासचन्द्र	प्रासचन्द्र
— १५	(वृत०)	(वृ० त०)
२१८ — १५	तुंदल विहारी	तंदुल वैयालिय, नं० ८७ और ९५ एक हैं
— २२	पार्श्चन्द्र	पार्श्वचन्द्र
— २३	सम्यकत्व	सम्यक्त्वस्तव
२१९ — १	जयविलास	नयविलास
— २३	(खाली स्थान)	उदयसागर
— ३०	कल्याणसार	कल्याणसाह

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
२२० — १६	नयविमल	विनयविमल
— ३२	गुणविमल, विमलरत्न	भक्तामर, गुणविनय
२२१ — १	विमलरत्न	गुणविनय
— ३	नमुत्थाणं	नमुत्थुणं
— ६	सं० १७०७	सं० १७६६
— १४	श्राद्धवृत्ति	श्राद्धविधिवृत्ति
— १७	१८३५	१८३३
— २२	१८९३	१८५४
— २२	यशोधर	अम्बड़
२२२ — १७	पुण्याम्युदय	पुण्याभ्युदय
— २०	पृष्ठ	पत्र
२२४ — ५	१२८६	१८२६
— ७	१७०५	१७५२
— २२	सौलवी अख री	?
— २५	अणंतराम	अणंतराय
— ३३	उगमणावत	उगणावत
२२५ — ५	सोढा कंवलसिंघ	कुंवरसी सांखलै
— ६	कथंल	काघल
— ८	सांडलै	साखलै
— १०	थाड़वी	धाड़वी
— २५	वाले चापे	वालै चांपै
— २६	सींथल चीपै	सीथल चांपै
२२६ — १७	नरसिंघ सीघल	नरसिंह सींघल
— २२	मीढा	मीठा
— ३०	हादुल	हाडुल
२२७ — १	जाड़चा	जाड़ेचा
— ४	बोग	?
— ६	मारमल	भारमल
— ३३	कंगरै	कुंगरै
२२८ — १०	ऊणावत	ऊगणावत
— ११	बहलियां	बहलिमा
२२९ — ७	आकूलखाँ	?

पृष्ठ पंक्ति	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
२२६ — २०	ते री	तैरी
— २२	पाहुमा	पाहुवा
२३० — १०	मलीनाथ	मलीनाथ
— ११	कूमैं	कूंमैं
— १६	रायघण	रायधण
— २१	कुंवरसिह	कुंवरसी
— २४	कोडियां	कोलियां
२३१ — १२	मलीनाथ	मलीनाथ
— १६	मांखड़ियां	माखड़ियां
— २२, २३	रामघण	रायघण
२३२ — ४	बासा	वार्ता
— १४	माम हट की माय	आय ठहकी माहिमैं
२३३ — ८	माख	मारू
— १०	पिछाड़ी	पिछाणी
— १२	देवरं	देवरैं
२३४ — ३	सोना री	सोनारी
— ११	मान	माम
— १३	माल्हाली	माल्हाली
— १४	मूमल	मूमल
— १५	मोजदीन	मोजदीन
— २५	राहब साहब	रायव सायब
— २६	लालमल	?
— ३०	बडाबडी डहरु	बडावडी दे वड़ै डहरु देखें नं० ५००, ५६३
— ३१	सोवड़ी	सोनड़ी
— ३३	वंशी	वंश
२३५ — १	बाड़ी बारैं री	?
— ४	नक्षत्र जाल री	?
— ७	बैंलाभ्रंरा	?
— १०	सादा	?
— ११	सामों री	?

—::—